Ācārya Pūjyapāda's
Bhakti Saṃgraha
Collection of Devotions

आचार्य पूज्यपाद विरचित
भक्ति संग्रह

Divine Blessings:
Ācārya* 108 Viśuddhasāgara *Muni

VIJAY K. JAIN

Ācārya Pūjyapāda's

Bhakti Saṃgraha

Collection of Devotions

आचार्य पूज्यपाद विरचित

भक्ति संग्रह

Ācārya Pūjyapāda's

Bhakti Saṃgraha

Collection of Devotions

आचार्य पूज्यपाद विरचित

भक्ति संग्रह

Divine Blessings:

Ācārya* 108 Viśuddhasāgara *Muni

Foreword:

Dr. Chakravarthi Nainar Devakumar

Editor and Translator:

Vijay K. Jain

विकल्प

Cover Image

This is a collage of two pictures. The top picture is of an enchanting Idol *(pratimā)* of the fourth *Tīrthaṅkara,* Lord Abhinandananātha, whose distinctive mark is the monkey. The bottom picture depicts the Holy-Feet of the Lord, established at the place of his liberation, the sacred hills of Shri Sammed Shikharji, Jharkhand, India, the holiest of Jaina pilgrimages.

Photographs: Vijay K. Jain (2016)

Ācārya Pūjyapāda's
Bhakti Saṃgraha
Collection of Devotions

आचार्य पूज्यपाद विरचित
भक्ति संग्रह

Editor and Translator:
Vijay K. Jain

Copyright © 2022 by Vijay K. Jain

ISBN: 978-93-5627-523-2
Rs. 600/-

Published, June 2022, by:
Vijay Kumar Jain
B-13, MDDA Colony, Dalanwala, Dehradun-248001 (Uttarakhand), India

Printed at:
Vikalp Printers
Anekant Palace, 29 Rajpur Road, Dehradun-248001 (Uttarakhand), India
E-mail: vikalp_printers@rediffmail.com

DIVINE BLESSINGS

मंगल आशीर्वाद -

परम पूज्य दिगम्बराचार्य १०८ श्री विशुद्धसागर जी मुनिराज

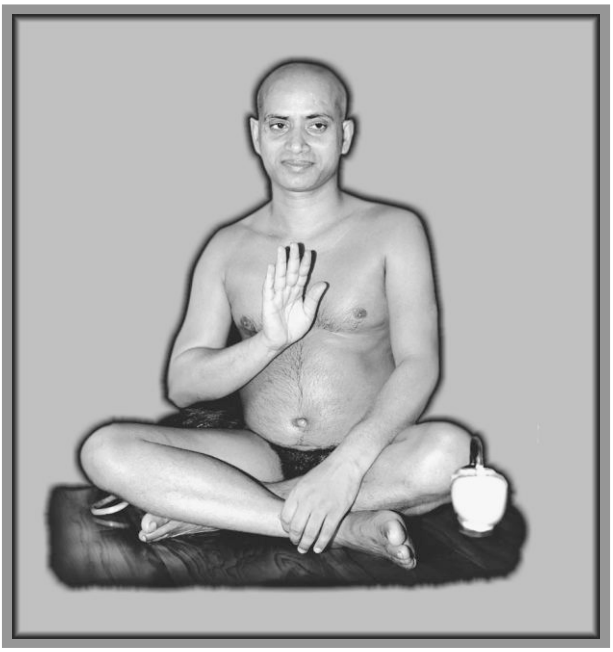

पूज्य पुरुषों के पवित्र गुणों में अनुराग भक्ति है। मात्र काय-वचन की चेष्टा ही भक्ति नहीं है। साथ ही यह भी समझो कि भक्ति करने के जो परिणाम ज्ञानात्मक चल रहे हैं यदि वे किसी सांसारिक कांक्षा युक्त हैं, तो वह भी यथार्थ भक्ति नहीं है। जाति, पंथ, परम्परा, सम्प्रदाय के राग-वश होकर यदि विनय चल रही है, अथवा भयभीत होकर विनय करना, अर्थ के लिए प्रार्थना करना या काम के लिए जो प्रेम उमड़ रहा है, वह भी भक्ति की श्रेणी में नहीं आता है।

भक्ति परिचय, पंथादि की नहीं होती; भक्ति तो पूज्य पुरुषों के गुणों का अनुराग है। जो द्रव्य-भाव मोक्ष प्राप्त कर चुके हैं अथवा द्रव्य-भाव मोक्ष के मार्ग पर चल रहे हैं ऐसे रत्नत्रय गुण युक्त आचार्य, उपाध्याय तथा साधु परमेष्ठी, तथा भाव एवं द्रव्य मोक्ष प्राप्त अरिहंत व सिद्ध परमात्मा - ये पञ्च-परमेष्ठी परम गुरु ही पूज्य एवं भक्ति-आराधना योग्य आराध्य हैं।

जो गुण-शून्य पुरुष गुणीजनों से अपनी भक्ति कराता है वह मान-माया कषाय-वश होकर अशुभ गति को प्राप्त होगा। गुण-शून्य की राग-वश भक्ति करने वाला भक्त भी श्रेष्ठ गति को प्राप्त नहीं कर पाएगा। इसलिए आराध्य एवं आराधक दोनों के निर्दोष होने पर ही भक्ति साक्षात् तथा परम्परा से मोक्ष का कारण है।

द्वैत भक्ति भिन्न उपास्य-उपासक भाव तथा अद्वैत भक्ति अभिन्न उपास्य-उपासक भाव है। पञ्च-परमेष्ठी की आराधना द्वैत भक्ति है तथा ध्रुव, त्रैकाली, ज्ञायक-स्वभावी भगवान् आत्मा की आराधना अद्वैत भक्ति है। उभय भक्ति आत्म-साधकों के लिए अनिवार्य अंग है।

सम्प्रति प्राकृत भक्तियाँ आचार्यप्रवर श्री कुन्दकुन्द स्वामी कृत प्राप्त हैं तथा संस्कृत भाषा में आचार्य श्री पूज्यपाद स्वामी कृत दस-भक्तियाँ सम्पूर्ण मुमुक्षु जीवों के लिए कण्ठाहार बनी हुई हैं।

संस्कृत, प्राकृत तथा हिन्दी भाषी भव्य उपासक तो भक्तियों का आनन्द-पान करते ही हैं, परन्तु आँग्ल-भाषी भव्यों के प्रति अति कारुण्य-भाव से जिन-वागीश्वरी के परम-उपासक, श्रुत-आराधक, निसंगता के अभ्यासी, विद्वान् श्री विजय कुमार जैन, देहरादून, ने सम्पूर्ण संस्कृत भक्तियों का अंग्रेजी भाषा में अनुवाद कर श्रुत-कोश की वृद्धि की है। उनके इस श्रेष्ठ पुरुषार्थ-साध्य कार्य के लिए सदा शुभाशीष...।

आप अपने जीवन के अर्घवान निषेकों को जिनवाणी की आराधना में पूर्ण करें। श्रुत-भक्ति ही जिन-भक्ति है। जिन-भक्ति श्रुत एवं गुरु भक्ति है।

ॐ नमः सिद्धेभ्यः।

इति अलम्, शुभम् भूयात्।

- दिगम्बराचार्य विशुद्धसागर

पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव,
ईशानगर (छतरपुर), मध्यप्रदेश, भारत
17 मई, 2022

* * *

MY REFLECTIONS

मम भावना

परम पूज्य श्रमण साम्यसागर मुनि

भक्तिमन्तरेण न प्रभुभक्तिः, न स्मरणं न वन्दना। प्रभुभक्तिं विना नात्मकल्याणं भवति। मनुष्यो भक्तिं करोति। भक्त्या आत्मज्ञानं कारयति। भक्तिः द्वे भेदौ अस्ति, द्वैतभक्तिः, अद्वैतभक्तिः। आराध्य-आराधना भावो भवति द्वैतभक्तिः। आत्मनि आत्मरमणं अद्वैतभक्तिः।

श्रमणपरम्पराऽनादिकालात् शाश्वतपरम्परा। अनेका आचार्याः, मुनयोऽस्मिन् धरायामभवन्, किन्तु वर्तमानपरम्परा आचार्य कुन्दकुन्दस्वामी परम्परा प्रचलति। यत्र भगवद् कुन्दकुन्दस्वामिना चतुरशीतिः ग्रन्थानां सृजनं कृतम् तत्रैव आचार्य पूज्यपादस्वामी दशभक्तिं लिखित्वा प्रभुभक्तिं प्रकाशमानं कृतवान्।

जैनधर्मे भक्तेः प्रमुखस्थानमस्ति। आचार्य समन्तभद्रस्वामिना प्राह -

"भक्तेः सुन्दररूपम्"

भक्तिकरणे सुन्दररूपं लभते, अतएव भक्तिः मोक्षस्य परमसोपानमस्ति।

आध्यात्मयोगी, चर्याशिरोमणि आचार्य विशुद्धसागरस्य परमाशीर्वादेन अस्य भक्तिसंग्रहग्रन्थस्य संशोधनं कृत्वा अहं (मुनि साम्यसागर) स्वकीयं श्रेष्ठं मन्ये।

विद्वान्मनीषी, कुशलसम्पादकः, गुरुभक्तः श्री विजय कुमार महोदयः भक्तिसंग्रहग्रन्थं आंग्लभाषायां रूपान्तरितं कृत्वा जैन साहित्यस्य महत्त्वं वृद्धिमानं कृतवान्। स जिनवागीश्वरीमातुः सेवां करोति, एष एव मंगलाशीर्वादः भवतु।

जयतु श्रुतदेवता।

ॐ नमः सिद्धेभ्यः।

- श्रमण साम्यसागर मुनि

पन्ना, मध्यप्रदेश, भारत

25 मई, 2022

* * *

FOREWORD

By

Dr. Chakravarthi Nainar Devakumar

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

'OM' namaḥ siddhebhyaḥ

Devotion to *nirvāṇa* (निर्वृत्ति भक्ति, *nirvṛtti bhakti*) is central to the Jaina religion as elucidated by the venerable *Ācāryaśrī* Kundakunda in *'Niyamasāra' (gāthā* 134):

सम्मत्तणाणचरणे जो भत्तिं कुणइ सावगो समणो ।
तस्स दु णिव्वुदिभत्ती होदि त्ति जिणेहि पण्णत्तं ॥१३४॥

sammattaṇāṇacaraṇe jo bhattiṃ kuṇai sāvago samaṇo |
***tassa du ṇivvudibhattī hodi tti jiṇehi paṇṇattaṃ* || 134 ||**

It is noteworthy that this devotion is open to both laity and the ascetics. Knowhow to engage in this devotion is essentially becoming one with the pure Self through the total meditation called *sāmāyika* which was possible during the reign *(śāsana)* of the 2nd to the 23rd *Tīrthaṅkara* but this single unitary method had to be divided into six segments by a procedure of *chedopasthāpanā* during the current reign of Lord Mahāvīra. These are:

1. *sāmāyika* (सामायिक),
2. *caturviṃśatistava* (चतुर्विंशतिस्तव),
3. *vandanā* (वन्दना),
4. *pratikramaṇa* (प्रतिक्रमण),
5. *pratyākhyāna* (प्रत्याख्यान) and
6. *kāyotsarga* (कायोत्सर्ग); as per the following *gāthā* from *Ācāryaśrī* Vaṭṭakera's *'Mūlācāra':*

समदा थवो य वंदण पडिक्कमणं तहेव णादव्वं ।
पच्चक्खाण विसग्गो करणीयावासया छप्पि ॥२२॥

samadā thavo ya vandaṇa paḍikkamaṇaṃ taheva ṇādavvaṃ |
paccakkhāṇa visaggo karaṇīyāvāsayā chappi || 22 ||

As a daily practice, these six practices (rituals-like) are a must at stipulated time for the saints. About the intricacies of these practices, one may refer to the seventh chapter *(ṣaḍāvaśyakādhikāra)* of *Ācāryaśrī* Vaṭṭakera's *'Mūlācāra'* (more specifically through a recent publication, *'Āvaśyaka-niryukti'* edited in Hindi by Fulchand Premi and Anekant Jain, Jin Foundation, 2009, 284 p.) substantiated by *Ācāryaśrī* Kundakunda's *'Niyamasāra'* (English translation entitled *'The Essence of Soul-adoration'*, 2019, by Vijay K. Jain, ISBN: 978-81-932726-3-3). It may be mentioned that these six practices constitute one of the sixteen observances leading to the bondage of the *Tīrthaṅkara nāma karma*.

Āvaśyaka Attracted the West

It is heartening to note that Professor Ernst Leumann (1859-1931) devoted his life to the *āvaśyaka* literature at the University of Hamburg, (der Hamburgischen Universitat) Germany. A commemorative seminar in his honour entitled *Overview of the Āvaśyaka Literature (Übersicht über die Avasyaka-Literatur von Ernst Leumann)* was held and the proceedings were published by Walther Schubring Hamburg Friederichsen, de Gruyter & Co. M.B.H. in 1934. In the year 2010, excerpts of his book were translated into English by George Baumann with an introductory essay by Nalini Balbir and published by L.D. Institute of Indology, Ahmedabad. This book provides us a lot of insights in the *āvaśyaka* literature. Some of the relevant points are captured here.

Salient Points from Prof. Leumann's Research

From ancient times Jaina *āvaśyaka* literature of both sects

mentions the *Āvaśyaka* at the head of the *aṅgabāhya* scriptures. Before the schism, the first commentary called the *āvaśyaka-niryukti* purportedly composed by *Ācāryaśrī* Bhadrabāhu together with *āvaśyaka sūtra* had become a main object of study. *Niryukti* meaning exhaustive analysis provides the philosophical foundation to the ritual practices of *Āvaśyaka*. Professor Leumann reckons that in the ascetic order from the very beginning instruction began with the *āvaśyaka* and the ascetics recognized what was "necessary" or "indispensable" and what was continuously obligatory in their vows, formulas and hymns for all members of the order. While working on *Āvaśyaka* literature of Svetambara canon, he realised that the Digambara sect too have such literature and soon he collected those books from Shravanabelagola and other places. In fact, it is reported that the Bibliotheque Nationale et Universitaire de Strasbourg library holds the richest and the most valuable collection of Digambara works outside India.

Professor Leumann perceived clearly the importance and antiquity of the Digambara tradition. This is amply evident from the subtitle *"Mūlācāra VII: Die digambara-Original der Āvaśyaka-niryukti"* and he came out with a critical edition of the relevant text based on a Strasbourg manuscript. Old versions of two such *Niryukti*-texts are preserved in the *Mūlācāra* in Digambara literature, and this work also contains a fairly old *Saṃgrahaṇī*-text. The Digambaras, he notes, have preserved fairly exact knowledge about the original contents of the *Āvaśyaka.* He profusely made use of the commentary by Vasunandin, which is referred to at several places in his overview. The *Āvaśyaka-niryukti* is held in high esteem by the Digambaras and in an enlarged version inaugurates the long *Niryukti* series in the Svetambara literature. Further exploration made him aware of exegetical patterns prevalent in Digambara literature and led him to the *Kriyākalāpa* with Prabhācandra's commentary, non-narrative portions of Jinasena's *Harivaṃśa-purāṇa* and later texts such as the *Dharmāmṛta (Sāgāra* and *Anagāra)* by *Paṇḍitapravara* Āśādhara (13th century). He underlined that the relevant Digambara passages

are in *Kriyākalāpa*, Jinasena's *Harivaṃśa-purāṇa*, 2: 102-105, Aparājitasūrī's *Bhagavatī Arādhanā* 492, and *Ācāryaśrī* Sakalakīrti's *Tattvārthasāra*, 1-142-144. Professor Leumann was thus clearly convinced of the importance of the Digambara tradition for the history of Jaina scriptures and he noticed that Digambara sect preserved this important practice entirely modified and transposed with many later insertions in their scriptures led by the venerable *Ācāryaśrī* Kundakunda, Vaṭṭakera, Umāsvāmi, *et al*.

Professor Leumann was so enamoured with the richness of ritual complex in *Kriyākalāpa* that his analysis occupies a relatively important space in his book and remains unparalleled. In Leumann's perspective, the *Kriyākalāpa* is a manual containing as it does formulas connected with the "obligatory duties" and hymns and offers components to the ensemble of *Āvaśyaka*-Literature. He carried out a detailed study of the three components of this manual, viz., A) the *īryāpathikī*, B) the remaining *bhakti* parts and C) other hymns. He had four recensions of this book – two Devanāgarī ones, a Kanarese recension and the recension followed by the commentator Prabhācandra, to help him in a thorough analysis of the book. The Prakrit *Caturviṃśatistava* generally attributed to *Ācāryaśrī* Kundakunda is in fact the original hymn prior to schism. Professor Leumann has made a comparison of the two versions currently preserved by both sects and, moreover, composed a poem capturing this sacred hymn.

Recommended Rituals

The book at hand is in fact a gift of the *Kriyākalāpa* to the English readers. I would like to supplement the *Bhakti Saṃgrah* in the following paras with the necessary rituals one should adhere to. The text in Hindi by late Pannalal Soni *Śāstrī* is used in providing the procedure in English.

1. In the morning (or at any time of convenience), before entering *Śrī Jinamandira*, wash both hands and the legs. Thereafter, seeing

the image of the *Tīrthaṅkara* with bowed head, chant *"Nisahi Nisahi Nisahi"* three times and enter the outer premises of the *caityālaya*. Recite the *darśana stotra* such as *"Dṛṣṭaṃ Jinendra Bhavanaṃ Bhavatāpahāri"* etc., with the posture of *Vandanā mudrā*, followed by three circumambulations *(pradikṣaṇā)* of the *caityālaya*. In each direction, clockwise rotate the bowed hands *(anjali)* thrice (3 आवर्त, *āvarta*) with bowed head once *(*शिरोनति, *śironati)*. In standing posture (कायोत्सर्ग), keep both the feet at comfortable ease with the gap of about four inches, and with folded hands, read *Īryāpathaviśuddhi: Dośaviśuddhipāṭha.*

2. *Kriyāvijñāpana* (Declaration with due humility). As per earlier procedure, reach near the idol, fix yourself in *kāyotsarga* posture and declare that I recite this *bhakti* with full devotion and worship according to the order of the olden sages for the destruction of all karmas.

अथ पौर्वाह्णिकं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवमेतं ------भक्तिकायोत्सर्गं करोमि।

atha paurvāhṇikaṃ pūrvācāryānukrameṇa sakalakarmakṣayārthaṃ bhāvapūjāvandanāstavametaṃ .....bhaktikāyotsargaṃ karomi |

In the dashed line, please insert the name of the *bhakti* that is being recited. (This is the first ritual.)

3. Then sit down facing the idol in a manner that your head, your hands and feet touch the ground in humility with folded hands and repeat three *āvarta* and *śironati* once.

4. In the posture called *'Muktā Shukti Mudrā'*, read the *Sāmāyika daṇḍaka* given in this book. Do the *japa* of *paṅca namaskāra mantra* as described here. In the first sigh *(ucchavāsa)* spell *Arhant-Siddha mantra,* in the second, the *Ācārya-Upādhyāya mantra* and in the third, the *Sarva Sādhu mantra*. Do this *japa* nine times in a soft tone which others cannot hear. After that, read

the *Cattāri daṇḍaka stotra* with such a melodious voice that it may seem pleasing to the ears of the co-devotees nearer to you.

5. After re-reading the *Sāmāyika daṇḍaka,* repeat three *āvarta* and *śironati* once. After that, in *kāyotsarga* with *Jinamudrā*, chant the *paṅca namaskāra mantra* in twenty seven sighs *(ucchavāsa)* or nine times the mantra, according to the aforesaid method. Then repeat the procedure of worshipping by sitting down facing the idol in a manner described above. Read *'Caturviṃśatistava'* given in this book with three *āvarta* and *śironati* once.
6. At the beginning of the *Sāmāyika daṇḍaka,* one performs three *āvarta* and one *śironati* and ends with three *āvarta* and one *śironati*.
7. Similarly, in the beginning of *'Caturviṃśatistava'* one performs three *āvarta* and one *śironati* and ends with three *āvarta* and one *śironati*.
8. During the recitation of each *bhakti*, this procedure of *kriyāvijñāpana*, doing *japa* of *paṅcāṅga namaskāra*, rendition of *Sāmāyika daṇḍaka* and *Caturviṃśatistava* should be adhered to, interspersed with three *āvarta* and *śironati* once, both at the beginning and at the end.
9. If you recollect this procedure, you would have done in one *Kāyotsarga,* ritualistic worship *(Bhumisparśanātmaka Namaskāra)* twice with twelve *āvarta* and four *śironati*.
10. One should read *Caitya-bhakti* and *Paṅcamahāguru-bhakti* in daily prayers and while doing *Sāmāyika* meditation.
11. On the day of *Caturdaśī*, *Śruta-bhakti* should be read in between the above two *bhaktis*. But, this requirement is prescribed only to those bound to do *Vandanā* thrice a day. They do all the three *bhaktis* thrice daily. *Caitya-bhakti* and *Paṅcamahāguru-bhakti* are performed in the daily *Trikālavandanā*.
12. In all those rituals in which there is a set of procedure or *vidhāna* to read as many *bhaktis* as one can, should be read in the

prescribed order and *mudrā* etc., and concluded with the recitation of *Samādhi-bhakti*.

13. The following *kriyāvijñāpana* sums up the entire set of *bhaktis* and it should be declared appropriately before reciting *Samādhi-bhakti*.

अथ पौर्वाह्णिकदेववंदनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवमेतं श्रीचैत्यपंचगुरुभक्ती विधाय तद्हीनाधिकत्वादिदोषविशुद्ध्यर्थं आत्मपवित्रीकरणार्थं समाधिभक्तिकायोत्सर्गं करोमि।

atha paurvāhṇikadevavandanāyaṃ pūrvācāryānukrameṇa sakalakarmakṣayārthaṃ bhāvapūjāvandanāstavametaṃ śrīcaityapañcagurubhaktī vidhāya tadhīnādhikatvadidoṣaviśuddhyārthaṃ ātmapavitrīkaraṇārthaṃ samādhibhaktikāyotsargaṃ karomi |

Meaning: In the *Deva-vandanā* performed now, in the order of the *Pūrvācāryas,* I conclude with the recitation of *'Samādhi-bhakti'* and related activities in order to purify me and make good of my errors and digressions in the devotional worship.

Readers are requested to read the first chapter of the *Kriyākalāpa* with Prabhācandra's commentary brought out by late Pannalal Soni *Śāstrī* and other books cited in this edition.

Commendation

My Foreword would be incomplete without a word about this publication. As we could see from the above account, *Āvaśyaka sutra* in Ardhamāgadhī was the first edition, most of which has been retained in the seventh chapter *(ṣaḍāvaśyakādhikāra)* of *Ācāryaśrī* Vaṭṭakera's *'Mūlācāra'*. In addition, *Ācāryaśrī* Kundakunda composed *'Daśabhakti'* in Prakrit. *Ācāryaśrī* Pūjyapāda Devanandī then

enriched us with these *bhaktis* in chaste and melodious Sanskrit hymns. *Ācāryaśrī* Vasunandī, perhaps, compiled the *'Kriyākalāpa'* along with his Sanskrit commentary, based on the above mentioned works. This edition is next in this evolution of *bhaktis* as it is brought out in flawless English by the renowned scholar of Jainology, Shri Vijay K. Jain. He has thoroughly enjoyed this work and reaped enormous peace and prosperity of purity. I am sure, with such deep devotion, the readers would do so with immense joy and peace.

– Dr. Chakravarthi Nainar Devakumar

New Delhi, India
May 26, 2022

* * *

PREFACE

Ācārya Pūjyapāda – The Master Composer of the Scripture *(Jinavāṇī)*

Ācārya Pūjyapāda's compositions have been enlightening, since last fifteen centuries, learned ascetics, scholars and the laity, on complex issues including the reality of substances and the path to liberation. He wrote in Sanskrit, in prose as well as verse forms. Over time, the language of his compositions may have lost its mass appeal but the subject matter continues to remain utterly relevant. His expositions reflect a divine understanding of the spiritual subjects and of the objects that are beyond sense-perception. Unmatched brilliance and lucidity mark his writings.

Three other names of *Ācārya* Pūjyapāda find mention in the Jaina literature: Deva, Devanandī, and Jinendrabuddhi.

Ācārya Pūjyapāda was a *digambara* ascetic of high order, abounding in faith, knowledge, and conduct, the three cornerstones of the path leading to liberation. He was a master grammarian and an authority on secular subjects including linguistics, poetics and *Āyurveda*.

Ācārya Pūjyapāda was born in a Brahmin family of Karnataka. His parents were Mādhavabhaṭṭa and Śridevī. Kanakagiri, a Jaina heritage centre situated at a distance of about 50 km from Mysore, Karnataka, was his abode. He lived around 5th century CE. He was a renowned Preceptor of the Nandi *Saṃgha*, a part of the lineage of *Ācārya* Kundakunda (circa 1st century BCE to 1st century CE).

His writings reveal both the transcendental and the empirical points of view, and are helpful to the ascetics as well as the laity. He has expounded on the writings of *Ācārya* Kundakunda and *Ācārya* Umāsvāmī (alias *Ācārya* Gṛddhpiccha, *Ācārya* Umāsvāti). Deep influence of *Ācārya* Samantabhadra is conspicuous in his works.

That *Ācārya* Pūjyapāda was held in great esteem by the

subsequent Jaina pontiffs is evident from the following two excerpts from the writings of learned Jaina *Ācārya(s)*:

Ācārya Jinasena in *'Ādipurāṇa'*:

कवीनां तीर्थकृद्देवः किंतरां तत्र वर्ण्यते ।
विदुषां वाङ्मलध्वंसि तीर्थं यस्य वचोमयम् ॥ (१-५२)

– आचार्य जिनसेन विरचित **'आदिपुराण'**

जो कवियों में तीर्थंकर के समान थे (अथवा जिन्होंने कवियों का पथ-प्रदर्शन करने के लिए किसी लक्षणग्रन्थ की रचना की थी) और जिनका वचनरूपी तीर्थ विद्वानों के शब्द-सम्बन्धी दोषों को नष्ट करने वाला है, ऐसे उन देवाचार्य देवनन्दी का कौन वर्णन कर सकता है?

How can one portray *Ācārya* Devanandī (alias *Ācārya* Pūjyapāda) who was like a Ford-maker *(Tīrthaṅkara,* the 'World Teacher') among the poets and whose sacred articulation removes the faults of verbal expression of the scholars?

Ācārya Śubhacandra in *'Jñānārṇavaḥ'*:

अपाकुर्वन्ति यद्वाचः कायवाक्चित्तसम्भवम् ।
कलङ्कमङ्गिनां सोऽयं देवनन्दी नमस्यते ॥ (१-१५)

– आचार्य शुभचन्द्र विरचित **'ज्ञानार्णवः'**

जिनके वचन जीवों के काय-वचन-मन से उत्पन्न होने वाले मलों को नष्ट करते हैं, ऐसे देवनन्दी नामक मुनीश्वर को हम नमस्कार करते हैं।

We make obeisance to *Ācārya* Devanandī (alias *Ācārya* Pūjyapāda) whose expressions wash away all dirt due to the activities of the body, the speech, and the mind.

It is mentioned in Jaina inscriptions and literature that *Ācārya* Pūjyapāda had the supernatural power to visit the Videha *kṣetra* to

make obeisance to the *Tīrthaṅkara* Lord Sīmandharasvāmī. It is believed that on account of his vast scholarship and deep renunciation, his Lotus-Feet were worshipped by the devas and, therefore, the name Pūjyapāda (*pūjya* = venerable; *pāda* = the feet). The sacred water that anointed his Feet could transform iron into gold. He used to visit holy places in celestial carriages and during one such occasion he lost his eyesight. He then composed *Śāntyaṣṭaka* and regained his sight. But after this incident, he took to *samādhi* and relinquished his body by courting voluntary, pious and passionless death.

Ācārya Pūjyapāda composed the following Jaina texts:

'*Jainendra Vyākaraṇa*' – a comprehensive work on Sanskrit grammar, considered to be an essential reading for the student of Jaina literature.

'*Sarvārthasiddhi*' – an authoritative commentary on '*Tattvārthasūtra*' by *Ācārya* Umāsvāmī; it is truly a compendium of Jaina epistemology, metaphysics and cosmology.

The title '*Sarvārthasiddhi*' implies that going through it one accomplishes all that is desirable; or, it is the means of attaining ineffable bliss appertaining to the liberated souls. There is no exaggeration involved in the above statement as '*Sarvārthasiddhi*' is an exposition of the reality – the true nature of substances, soul and non-soul – the knowledge of which equips one to tread the path to liberation, as expounded in '*Tattvārthasūtra*'. Those who read, listen to, and assimilate this exposition have in their palms the nectar of eternal bliss; in comparison, the happiness of the king-of-kings *(cakravartī)* and of the lord of the devas (the Indra) is insignificant.

The treatise deals with the objects-of-knowledge that constitute the reality. There is beginningless intermingling of the soul *(jīva)* and the non-soul *(ajīva)* karmic matter, the two wholly independent substances. Our activities *(yoga)* are responsible for the influx *(āsrava)* of the karmic matter into

the soul. Actuated by passions *(kaṣāya)* the soul retains the particles of matter fit to turn into karmas. The taking in of the karmic matter by the soul is bondage *(bandha)*. Obstructing fresh inflow of the karmic matter into the soul – *saṃvara* – and its subsequent separation or falling off from the soul – *nirjarā* – are two important steps in attaining the infallible, utterly pristine, sense-independent and infinitely blissful state of the soul, called liberation *(mokṣa)*.

'Samādhitaṅtram' (also known as *'Samādhiśataka'*) – a spiritual work consisting of 105 verses outlines the path to liberation for an inspired soul. Living beings have three kinds of soul – the extroverted-soul *(bahirātmā)*, the introverted-soul *(antarātmā)*, and the pure-soul *(paramātmā)*. The one who is utterly pure and rid of all karmic dirt is the pure-soul *(paramātmā)*. *'Samādhitaṅtram'* expounds the method of realizing the pure-soul *(paramātmā)*, the light of supreme knowledge, and infinite bliss. It answers the vexed question, 'Who am I?' in a forceful and outrightly logical manner, in plain words.

'Iṣṭopadeśa' – a concise work of 51 didactic verses leads the reader from the empirical to the transcendental, from the mundane to the sublime, through an experiential process of self-realization, rather than through a metaphysical study of the soul-nature. *'Iṣṭopadeśa'* unambiguously establishes the glory of the Self. It is an essential reading for the ascetic. The householder too who ventures to study it stands to benefit much as the work establishes the futility of worldly objects and pursuits, and strengthens right faith, the basis for all that is good and virtuous.

'Daśabhakti' or 'Collection of Devotions' – comprises a set of devotions whose study is essential to tread the difficult path to liberation. This great work by *Ācārya* Pūjyapāda is an 'essential reading' for the ascetic *(sādhu, muni)* as well as the householder *(śrāvaka)*. It not only helps the soul acquire merit

(puṇya) but, more importantly, saves it from engaging in evil tendencies and pursuits. The devotions pertain, among others, to the Supreme Beings, the Scripture, the Perfect Conduct, the sacred adobes of attainment of liberation of the Great Ones, and the Nandīśvara *dvīpa*. This 'Collection of Devotions' includes *'Śāntyaṣṭaka'* (hymn in praise of the sixteenth *Tīrthaṅkara,* Lord Śāntinātha).

Some other works, including *'Sārasaṃgraha'*, *'Cikitsā-śāstra'* and *'Jainābhiṣeka'*, are also believed to have been authored by *Ācārya* Pūjyapāda.

Lucid style, precise expression and masterly exposition of the subject accord all his compositions a highly revered place in the Jaina literature. What *Ācārya* Pūjyapāda has expounded is the word of the Omniscient Lord; his compositions are the never-setting sun that will continue to illumine the ten directions for eternity.

I make obeisance humble at the Holy Feet of *Ācārya* Pūjyapāda whose highly pristine soul had mastered the ocean that is the Scripture *(śruta, Jinavāṇī)*.

The Essence of Devotion *(bhakti)*

When on rise of the deluding *(mohanīya)* karmas the soul adopts cognition *(upayoga)* that is tinged with attachment *(rāga)*, it entertains dispositions *(bhāva)* toward other substances that are either auspicious *(śubha)* or inauspicious *(aśubha)*. Such a soul is said to be devoid of the conduct *(cāritra)* based on the own-nature *(svabhāva)* of the soul – *svasamaya* or *svacāritra*. The reason is that the conduct *(cāritra)* based on the pure-soul-substance *(svadravya)* – pure-cognition *(śuddhopayoga)* – is *svasamaya* or *svacāritra*; and the conduct based on the other substance *(paradravya)* – cognition *(upayoga)* tinged with attachment *(rāga)* – is *paracāritra* or *parasamaya*.

When the soul *(jīva)* is engaged in auspicious-cognition *(śubho-payoga)*, like giving of gifts and adoration of the Supreme Beings, there is certainly the bondage of meritorious *(puṇya)* karmas. When the soul *(jīva)* is engaged in inauspicious-cognition *(aśubhopayoga)*, like evil passions and sense-gratification, there is certainly the bondage of evil *(pāpa)* karmas. When the soul *(jīva)* is not engaged in either cognition, no bondage of material karmas takes place.

The worthy *(bhavya)* soul, treading the path to liberation, first practices the empirical *(vyavahāra)* path represented by the discrete Three-Jewels *(bheda ratnatraya)*. The empirical *(vyavahāra)* path is the means *(sādhana)* to ascend the stages of spiritual-development *(guṇasthāna)* till the soul *(ātmā)* reaches the stage where it is able to attain the state of indestructible bliss. At the advanced stage of its development, the soul *(ātmā)* gets transformed into the indiscrete Three-Jewels *(abheda ratnatraya)*. The distinction between the means *(sādhana)* and the goal *(sādhya)* vanishes and the soul *(ātmā)* becomes the path to liberation *(mokṣa)*.

Ācārya Kundakunda, in *'Pañcāstikāya-saṃgraha',* has mentioned three causes of influx-of-merit *(puṇyāsrava),* as under:

Ācārya Kundakunda in *'Pañcāstikāya-saṃgraha'*:

रागो जस्स पसत्थो अणुकंपासंसिदो य परिणामो ।
चित्तम्हि णत्थि कलुसं पुण्णं जीवस्स आसवदि ॥१३५॥

– आचार्य कुन्दकुन्द विरचित **'पंचास्तिकाय-संग्रह'**

जिस जीव को प्रशस्त राग है, अनुकम्पा-युक्त परिणाम है और चित्त में कलुषता का अभाव है, उस जीव को पुण्य का आस्रव होता है।

The influx-of-merit *(puṇyāsrava)* takes place in the soul *(jīva)* that has commendable-attachment *(praśasta-rāga)*, compassion *(anukampā)*, and absence-of-evil-inclinations *(citta-akaluṣatā)*.

What is meant by commendable-attachment *(praśasta-rāga)*? This

is explained in the next verse of the same treatise.

अरहंत सिद्धसाहुसु भत्ती धम्मम्मि जा य खलु चेट्ठा ।
अणुगमणं पि गुरूणं पसत्थरागो त्ति वुच्चंति ॥१३६॥

– आचार्य कुन्दकुन्द विरचित **'पंचास्तिकाय-संग्रह'**

अर्हन्त-सिद्ध-साधुओं के प्रति भक्ति, धर्म में यथार्थतया चेष्टा और गुरुओं का अनुगमन, वह 'प्रशस्त राग' कहलाता है।

Commendable-attachment *(praśasta-rāga)* entails: 1) devotion *(bhakti)* to the *'Arhanta'* (Lords Jina), the *'Siddha'* (the Liberated-souls), and the *'Sādhu'* (the Ascetics), 2) involvement, with dedication, in pious activities, and 3) following the 'Masters' *(Guru)*.

Ācārya Kundakunda, in *'Pravacanasāra'*, has instructed that even the ascetics *(muni, śramaṇa)* have to get engaged in auspicious-cognition *(śubhopayoga)*.

Ācārya Kundakunda's *Pravacanasāra:*

अरहंतादिसु भत्ती वच्छलदा पवयणाभिजुत्तेसु ।
विज्जदि जदि सामण्णे सा सुहजुत्ता भवे चरिया ॥३-४६॥

– आचार्य कुन्दकुन्द विरचित **'प्रवचनसार'**

जो मुनि-अवस्था में अर्हन्तादि पञ्चपरमेष्ठियों में अनुराग और परमागमकर युक्त शुद्धात्म स्वरूप के उपदेशक महामुनियों में प्रीतिरूप, अर्थात् जिस तरह गौ अपने बछड़े में अनुरागिणी होती है उसी तरह, प्रवर्ते तो वह शुभरागकर संयुक्त आचार की प्रवृत्ति होती है।

The course of conduct for the ascetic *(muni, śramaṇa)* engaged in auspicious-cognition *(śubhopayoga)* consists in devotion *(bhakti)* to the *Arhanta,* etc. (the five Supreme Beings), and fervent affection *(vātsalya)* – similar to the tender love of the cow for her calf – for the preceptors of the Doctrine.

By and large, commendable-attachment *(praśasta-rāga)* is based on devotion *(bhakti)*. For those aspiring to tread the path to liberation – the householders *(śravaka)* – the only means to escape the web of evil dispositions that is ever-ready to entangle them is to take refuge in the Lotus-Feet of Lord Jina and his Doctrine. They must incessantly strive for observance of commendable-attachment *(praśasta-rāga)*. Devotion *(bhakti)* to Lord Jina (the *Tīrthaṅkara)* and other Supreme-Beings *(parameṣṭhī)* is the most potent means of observing commendable-attachment. Those who are in the advanced stages of spiritual-development *(guṇasthāna)* – the ascetics *(muni, śramaṇa)* – also take recourse, when required, to commendable-attachment so as to vanquish the influx of inauspicious-attachment *(aśubha-rāga)* for sensual-pleasures *(viṣaya),* or of passions *(kaṣāya)*.

Note that the epicentre of all devotions *(bhakti)* is the *'Arhanta'* or Lord Jina, also called the Omniscient-Lord *(kevalajñānī)*, the *Tīrthaṅkara* and the Ford-maker. No soul can acquire the status of the Liberated-soul *(Siddha)* without first becoming the *Arhanta*. The *Ācārya* (the masters of ascetics), the *Upādhyāya* (the teachers of ascetics), and *Sādhu* (the ascetics) whose ultimate aim is to attain liberation *(mokṣa, nirvāṇa)* must tread the path that comprises the Three-Jewels *(ratnatraya),* the trio of right faith-knowledge-conduct, as expounded by the *Arhanta* or Lord Jina. The immense Scripture *(śruta)*, emanates from the divine-speech of Lord Jina – the *Jinavāṇī*. The *Arhanta* or Lord Jina is the instrumental-cause of the bondage of amazing meritorious-karmas *(puṇya)* that ensure pious states-of-existence *(gati)*. He is the bestower of right-knowledge and perception, the destroyer of the heap of evil-karmas and the illuminator of the path to liberation. Before attaining the most coveted state of liberation, the worthy *(bhavya)* soul, as a concomitance, must attain, without asking, all the splendors of the three worlds, as the lord of the devas and the lord of the men. And, as a corollary, the soul that is rid of devotion to the *Arhanta* or Lord Jina must remain ignorant of the true path to eternal happiness; it, as a consequence, remains engaged in

misdirected or evil activities that are the cause of worldly miseries, including the inferior or miserable states-of-existence *(gati)*.

All objects and happenings associated with the *Arhanta* or Lord Jina are propitious *(maṅgala)*; that is the reason for our devotion to the natural *(akṛtrima)* as well as the man-made Temples *(caityālaya)* and the Idols *(pratimā)* of Lord Jina. Even the lords of the devas (the Indras) routinely worship the natural *(akṛtrima)* Temples *(caityālaya)* and the Idols *(pratimā)* of Lord Jina in the Nandīśvara *dvīpa* and other places. The sacred places where the five most auspicious events *(pañca kalyāṇaka)* of the *Tīrthaṅkara* take place too are pious and propitious. Narration of the splendor of their heavenly-pavilion *(samavasaraṇa)*, of the thirty-four miraculous-happenings *(atiśaya)* that appear during their lifetime, and of the stories about their past lives, too, brings about propitiousness.

Ācārya Kundakunda, in *'Pravacanasāra',* has expounded that the nature of the *Arhanta* is the nature of the pure-soul *(śuddhātmā)*. The knowledge that the own-soul is pure by nature results in destruction of the intractable enemy called delusion *(moha)*.

Ācārya Kundakunda's *Pravacanasāra:*

जो जाणदि अरहंतं दव्वत्तगुणत्तपज्जयत्तेहिं ।
सो जाणदि अप्पाणं मोहो खलु जादि तस्स लयं ॥१-८०॥

– आचार्य कुन्दकुन्द विरचित **'प्रवचनसार'**

जो पुरुष द्रव्य, गुण, पर्यायों से पूज्य अर्हन्त (वीतरागदेव) को जानता है, वह पुरुष अपने स्वरूप को जानता है और निश्चयकर उसी का मोहकर्म नाश को प्राप्त होता है।

He, who knows the Omniscient Lord (the *Arhanta*) with respect to substance *(dravya)*, qualities *(guṇa)*, and modes *(paryāya)*, knows the nature of his soul *(ātmā)*, and his delusion *(moha)*, for certain, gets destroyed.

Until I attain liberation, may I be endowed, life after life, with the unshakeable faith in the path to liberation as expounded by Lord Jina, the intellect that rejects outrightly the false doctrines, the activities that keep me engaged in adoration of Lord Jina, and the inclination toward the Scripture *(śruta, Jinavāṇī)*.

The Original Composers of Devotions *(bhakti)*

In the Jaina tradition, reading of the devotions *(bhakti)* constitutes an essential-duty *(kṛtikarma)* for the ascetic *(sādhu, muni)* as well as the householder *(śrāvaka)*; the tradition is as ancient as the Scripture *(śruta)* itself. Pannalal Soni Śāstrī (Vikrama *Saṃvat* 1993), in Preface to his masterpiece work *'Kriya-Kalāpaḥ'* writes that, as per certain commentators, the *'Caityabhakti'*, the *'Daivāsika-rātri-pratikramaṇa'* and *'Pākṣikādi-pratikramaṇa'* have been composed by the Apostle *(gaṇadhara)* Gautama Svāmī himself. It is evident that the following seven devotions *(bhakti),* in Sanskrit, have been composed by *Ācārya* Pūjyapāda: 1) *'Siddhabhakti',* 2) *'Śrutabhakti',* 3) *'Cāritrabhakti',* 4) *'Yogibhakti',* 5) *'Ācāryabhakti',* 6) *'Nirvāṇabhakti',* and 7) *'Nandīśvarabhakti'*. The following five devotions *(bhakti),* in Prakrit, have been composed by *Ācārya* Kundakunda: 1) *(Prākṛta) 'Siddhabhakti',* 2) *(Prākṛta) 'Śrutabhakti',* 3) *(Prākṛta) 'Cāritrabhakti,* 4) *(Prākṛta) 'Yogibhakti',* and 5) *(Prākṛta) 'Ācāryabhakti'*. Authorship of other devotions *(bhakti)* is difficult to be ascertained; it is, however, clear that all these have been composed earlier than the thirteenth century CE.

Ācārya Pūjyapāda's *Bhakti Saṃgraha* – Collection of Devotions

Many learned authors of modern Jaina texts, especially those meant for daily recitation of prayers and *'pratikramaṇa'* by the ascetics,

contain *Ācārya* Pūjyapāda's *'Daśa Bhakti'* or *'Bhakti Samgraha'*. Most of these texts have just the original devotional verses in Sanskrit, without their meaning or commentary in either Sanskrit or Hindi. The earliest and original commentary, in Sanskrit, of some of the devotions that are extant today is by the Most Learned *Ācārya* Prabhācandra (circa 13th century, Vikrama *Saṃvat*). I was looking for books that have the literal-meaning *(anvayārtha)* and/or the general-meaning *(bhāvārtha)*, in Hindi, of the verses by *Ācārya* Pūjyapāda. Courtesy certain pious souls, I could get hold of the following publications which have proved to be the foundation stones of the present volume:

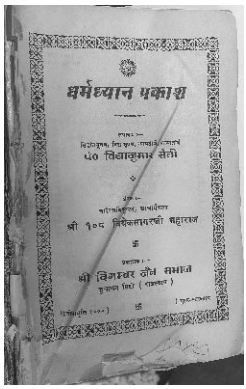

1) *'Dharmadhyāna Prakāśa'*, (1980), edited by *Paṇḍita* Vidyakumar Sethi under the guidance and blessings of *Ācārya* Vivekasāgara *Mahārāja*. Notably, this particular copy of the book, with pages turned yellow-brown, has been very extensively used, is in a dilapidated condition, and its many pages are scattered with personal markings. The Most Venerable *Āryikā* Vidhāśrī *Mātājī* at Hastinapur, Dist. Meerut, Uttar Pradesh, graciously gave me this priceless book, her personal copy, when I visited her some three months ago and mentioned to her about my project-on-hand. The book has almost flawless printing of the letter-press era. Detailed explanations of the original verses by *Ācārya* Pūjyapāda have been provided in an easy-to-understand language.

2) *'Vimala Bhakti – Vimala Jñāna Probodhinī Ṭīkā'*, (2015), translated by *Āryikā* Syādvādamatī *Mātājī*. This is the fourth edition of the book that was first published in 1998. The book has been painstakingly produced with immaculate literal-

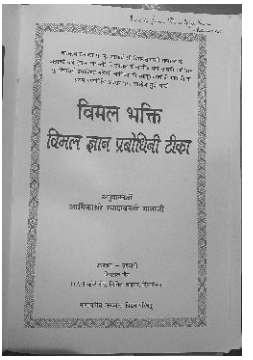

meaning *(anvayārtha)* as well as detailed general-meaning *(bhāvārtha)* of each verse. The printing and editing is of high standard. It has proved to be extremely handy to me in my translation into Hindi as well as English. My trusted friend Shri Ajit Prasad Jain of Rewari, Haryana, graciously sent me the physical copy of the book.

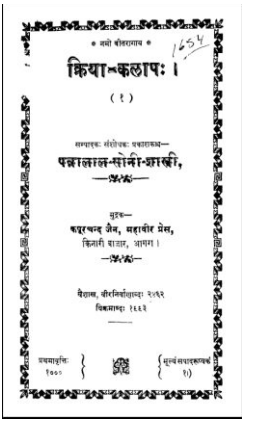

3) *'Kriya-Kalāpaḥ'*, (Vikrama *Saṃvat* 1993), edited and published by Pannalal Soni Śāstrī. This valuable treatise, the oldest among those mentioned here, deals with the essential activities of the ascetic *(sādhu, muni)* as well as the householder *(śrāvaka)*; hence the name *'Kriya-Kalāpaḥ'*. It details several daily activities, including devotions and installation in equanimity *'sāmāyika'*. All that is contained in the book has been excerpted from authentic texts like *'Mulācāra'*, *'Cāritrasāra'*, *'Ācārasāra'*, *'Dharmāmṛta-anagāra'* and *'Harivaṃśa Purāṇa'*, making it a highly readable and informative publication. The book contains original devotions *(bhakti)* composed in Prakrit as well as Sanskrit languages. Not content with the first draft of my present work which I had sent to him for review, my most learned friend and the 'Master of Devotions' Dr. Chakravarthi Nainar Devakumar, who lives in New Delhi, sent me a soft copy of this book along with several suggestions for improvement. I have no words to express my gratitude for this gracious gesture from him.

4) *'Ācārya Śrī Kundakunda and Ācārya Śrī Pūjyapāda viracita Bhakti Saṃgraha'*, (2012), Sanskrit commentary by *Ācārya*

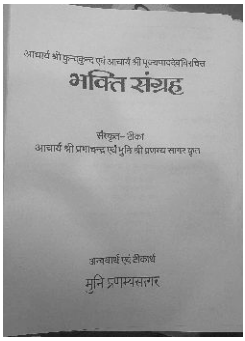

Prabhācandra and *Muni* Praṇamyasāgara; literal-meaning *(anvayārtha)* and general-meaning *(ṭīkārtha)* by *Muni* Praṇamya-sāgara. This book has a vast collection of devotions composed by *Ācārya* Kundakunda in Prakrit language and by *Ācārya* Pūjyapāda in Sanskrit language. The book has been lavishly produced making it extremely reader-friendly. The explanations are detailed and in tune with the tenets contained in the Scripture; this could well be expected as the commentator (*Muni* Praṇamyasāgara) himself is a learned *digambara* ascetic belonging to the congregation *(saṃgha)* of the Most Worshipful *Ācārya* Vidyāsāgara. My trusted friend Shri Ajit Prasad Jain of Rewari, Haryana, sent me the physical copy of this book too.

5) *'Pūjyapāda Bhāratī'*, (2017), published by Jain Vidyāpīṭha, Sagar, Madhya Pradesh. Besides *'Daśabhakti'* this volume contains other works by *Ācārya* Pūjyapāda, including *'Samādhitaṅtram'*, *'Iṣṭopadeśa',* and *'Sarvārthasiddhi'*. So far as *'Daśabhakti'* is concerned, only the literal-meaning *(anvayārtha)* of the verses is given. I could access the digital version of this book.

6) *'Kundakunda Bhāratī'*, (2007). Besides *Ācārya* Kundakunda's all the major and most profound works, like *'Samayasāra', 'Niyamasāra'* and *'Paṅcāstikāya',* this publication contains a section called *'Bhattisaṃgaho (bhaktisaṃgraha)',* a compilation of devotions *(bhakti)* composed by him. The meaning in Hindi is provided.

My endeavour has been to make this book a useful reference text not only for the readers interested primarily in the English rendering but also for the Hindi-loving scholars. The meanings of the original Sanskrit verses have been given both in Hindi and English languages.

It is imperative that due to the lack of my understanding and also to my inadvertence, but certainly not due to my intention and wrong-belief *(mithyātva)*, learned scholars would be able to find in this text errors and omissions in respect of typos, grammar and expression; I shall remain ever apologetic for such imperfections and seek from them forbearance and forgiveness.

It is due to my devotion to the Scripture *(śruta, āgama, Jinavāṇī)* and my hope that the outcome will help in propagation of the true Doctrine that I have embarked on this project.

All verses contained in this sacred text are worth reading over and over again; better still, to be assimilated and learned by heart.

Ācārya Viśuddhasāgara

A *digambara* ascetic *(nirgrantha muni)* since last thirty-one[1] years, *Ācārya* Viśuddhasāgara performs three major activities: 1) to dwell in own-soul through the fire of concentration *(ekāgratā, dhyāna)*, 2) to study the Scripture *(Jinavāṇī)*, and 3) to deliver discourses *(pravacana)* on the nature of the reality *(vastutva, vastu-svabhāva)*.

Ācārya Viśuddhasāgara meditates on the pure, effulgent soul through the medium of his soul imbued with the 'Three Jewels' *(ratnatraya)* that constitute the path to liberation. He reckons that no substance other than the soul is potent enough to either assist or obstruct the functioning of the soul. By thus renouncing attachment *(rāga)* and aversion *(dveṣa)*, he has built a shield around his soul to protect it from extraneous influence. Conventionally, concentration is to establish the soul in the 'Three Jewels', or the three limbs *(aṅga)* of

1. *Digambara* Jina-ordination *(Jinadīkṣā)* – 21 November, 1991.

the soul. From the real point-of-view, however, the soul is one whole *(aṅgī)*, comprising indiscrete 'Three Jewels' – *abheda ratnatraya*. Concentration is the means to savour the nectar found in own-soul.

The study of the Scripture bears the fruit of meditation through subjugation of the senses *(indriya)* and the passions *(kaṣāya)*. As a rule, the study of the Scripture destroys the heap of delusion *(moha)*. This explains his deep inclination toward the study of the Scripture.

Ācārya Viśuddhasāgara, through his discourses *(pravacana)*, provides an opportunity to hundreds of thousands of souls to know the nature of the reality, as expounded in the Scripture. His discourses are beneficial *(hitakārī)*, pleasing *(madhura)* and unambiguous *(nirmala)*. He has mastered the science-of-thought *(nyāya)*, and his grip on complex concepts of the Jaina metaphysics including *anekāntavāda* and *syādvāda* is amazing. He is able to shatter the absolutist *(ekānta)* views – called *durnaya* or faulty points-of-view – of the wrong-believers *(mithyādṛṣṭi)* with the sharp sword of *'syādvāda'*.

I make worshipful obeisance not only to *Ācārya* Viśuddhasāgara but to each of the 8,99,99,997 supreme-ascetics *(bhāvaliṅgī-muni)*, from the sixth *(pramatta-saṃyata)* to the fourteenth *(ayogakevalī)* stage-of-spiritual-development *(guṇasthāna)*, present in the human-world *(manuṣya-loka)* comprising the two-and-a-half continents, starting from Jambūdvīpa and up to the mountain range of Mānuṣottara in the centre of Puṣkaradvīpa.[1]

I must express my gratitude to two exceptional individuals devoted to the service of Mother *Jinavāṇī*: 1) *Śramaṇa* Sāmyasāgara *muni* for meticulously proofreading the manuscript, and 2) Dr. Chakravarthi Nainar Devakumar for writing the Foreword and guiding me at every step.

– Vijay K. Jain

4 June, 2022 [ज्येष्ठ शुक्ल पञ्चमी (श्रुत-पञ्चमी)]
Dehradun, India

* * *

1. See, *Ācārya* Nemicandra's *Gommaṭasāra Jīvakāṇḍa,* Part-2, p. 869-870.

VIJAY K. JAIN – BIOGRAPHICAL NOTE

Having had his schooling from Mhow and Bhopal in Madhya Pradesh, Vijay K. Jain (b. 1951) did his graduation in Electronics Engineering from Institute of Technology, Banaras Hindu University, and Post-Graduation in Management from Indian Institute of Management, Ahmedabad.

An independent researcher, Vijay K. Jain has authored several books, and edited and translated into English a number of profound Jaina texts.

1. *Marketing Management for Small Units* (1988).
2. **जैन धर्म : मंगल परिचय** (1994).
3. *From IIM-Ahmedabad to Happiness* (2006).
4. *Ācārya Umāsvāmi's* ***Tattvārthsūtra*** *– With Hindi and English Translation* (2011).
5. *Ācārya Kundkund's* ***Samayasāra*** *– With Hindi and English Translation* (2012).
6. *Shri Amritachandra Suri's* ***Puruṣārthasiddhyupāya*** *– With Hindi and English Translation* (2012).
7. *Ācārya Nemichandra's* ***Dravyasaṃgraha*** *– With Authentic Explanatory Notes* (2013).
8. *Ācārya Pūjyapāda's* ***Iṣṭopadeśa*** *– The Golden Discourse* (2014).
9. *Ācārya Samantabhadra's* ***Svayambhūstotra*** *– Adoration of the Twenty-four Tīrthaṅkara* (2015).
10. *Ācārya Samantabhadra's* ***Āptamīmāṃsā (Devāgamastotra)*** *– Deep Reflection On The Omniscient Lord* (2016).
11. *Ācārya Samantabhadra's* ***Ratnakaraṇḍaka-śrāvakācāra*** *– The Jewel-casket of Householder's Conduct* (2016).
12. *Ācārya Pūjyapāda's* ***Samādhitaṅtram*** *– Supreme Meditation* (2017).
13. *Ācārya Kundakunda's* ***Pravacanasāra*** *– Essence of the Doctrine* (2018).
14. *Ācārya Umāsvāmī's* ***Tattvārthasūtra*** *– With Explanation in English from Ācārya Pūjyapāda's* ***Sarvārthasiddhi*** (2018).

15. *Ācārya Kundakunda's* ***Niyamasāra*** *– The Essence of Soul-adoration (With Authentic Explanatory Notes)* (2019).
16. *Ācārya Guṇabhadra's* ***Ātmānuśāsana*** *– Precept on the Soul* (2019).
17. *Ācārya Kundakunda's* ***Pañcāstikāya-saṃgraha*** *– With Authentic Explanatory Notes in English* (2020).
18. आचार्य समन्तभद्र विरचित **युक्त्यनुशासन** - अन्वयार्थ एवं व्याख्या सहित (2020).
19. आचार्य समन्तभद्र विरचित **स्तुतिविद्या (जिनशतक, जिनस्तुतिशतं)** (2020).
20. English translation of: दिगम्बराचार्य विशुद्धसागर विरचित **सत्यार्थ-बोध;** *Ācārya Viśuddhasāgara's* ***Satyārtha-bodha*** *– Know The Truth* (2021).
21. *Ācārya Māṇikyanandi's* ***Parīkṣāmukha Sūtra*** *– Essence of the Jaina Nyāya* (2021).
22. *Ācārya Kundakunda's* ***Bārasa Aṇuvekkhā*** *– The Twelve Contemplations (With Authentic Explanatory Notes)* (2021).
23. *Ācārya Pūjyapāda's* ***Bhakti Saṃgraha*** – Collection of Devotions (2022).

Mr. Jain is the proprietor of Vikalp Printers, a small, high-end printing and publishing firm, based in Dehradun, India.

* * *

CONTENTS

		PAGE
मंगल आशीर्वाद - श्रमणाचार्य विशुद्धसागर मुनि	-----	(V)
मम भावना - श्रमण साम्यसागर मुनि	-----	(VII)
FOREWORD – DR. CHAKRAVARTHI NAINAR DEVAKUMAR	-----	(VIII)
PREFACE – VIJAY K. JAIN	-----	(XVI)
VIJAY K. JAIN – BIOGRAPHICAL NOTE	-----	(XXXI)

Sr. No.	*Topic*		*Page*
1.	Installation in *Sāmāyika* सामायिक दण्डक	---	**3**
2.	Devotion to Lord Jina and Purity of Activity *(Yoga)* श्री अर्हद् भक्ति तथा ईर्यापथशुद्धि	---	**15**
3.	Devotion to the Liberated Souls श्री सिद्ध भक्ति	---	**35**
4.	Devotion to Lord Jina's Idol and the Temple श्री चैत्य भक्ति	---	**51**
5.	Devotion to the Scripture श्री श्रुत भक्ति	---	**85**
6.	Devotion to the Conduct श्री चारित्र भक्ति	---	**103**
7.	Devotion to the Adept-Ascetics श्री योगि भक्ति	---	**116**

Sr. No.	*Topic*		*Page*
8.	Devotion to the Master-Ascetics श्री आचार्य भक्ति	---	**125**
9.	Devotion to the Five Supreme-Guru श्री पञ्चमहागुरु भक्ति	---	**137**
10.	Devotion to the Twenty-four Ford-makers *(Tīrthaṅkara)* श्री चतुर्विंशतितीर्थंकर भक्ति	---	**147**
11.	Devotion to Lord Śāntinātha श्री शान्ति भक्ति (शान्त्यष्टकम्)	---	**155**
12.	Devotion to Supreme Meditation श्री समाधि भक्ति	---	**173**
13.	Devotion to Liberation श्री निर्वाण भक्ति	---	**187**
14.	Devotion to Nandīśvara श्री नन्दीश्वर भक्ति	---	**213**

APPENDICES

1.	ABRIDGED DEVOTIONS **लघु भक्तियाँ**	---	**252**
2.	REFERENCES AND GRATEFUL ACKNOWLEDGMENT **संदर्भ सूची एवं कृतज्ञता ज्ञापन**	---	**259**
3.	GUIDE TO TRANSLITERATION	---	**261**

* * *

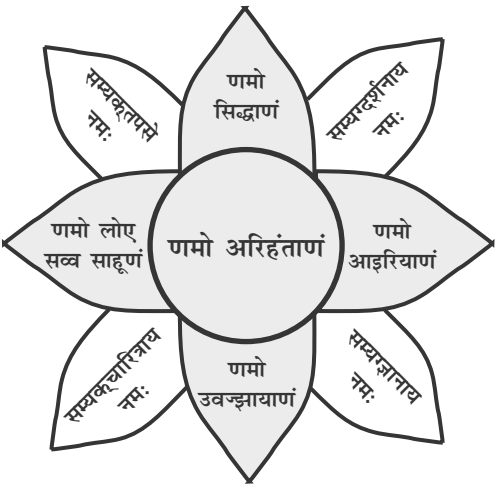

स्वयम्भुवे नमस्तुभ्यं ॥

अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः ॥

Ācārya Pūjyapāda's

Bhakti Saṃgraha

Collection of Devotions

आचार्य पूज्यपाद विरचित

भक्ति संग्रह

Ācārya Samantabhadra's *Svayambhūstotra:*

न पूजयार्थस्त्वयि वीतरागे न निन्दया नाथ विवान्तवैरे ।
तथापि ते पुण्यगुणस्मृतिर्नः पुनाति चित्तं दुरिताञ्जनेभ्यः ॥

(आचार्य समन्तभद्र विरचित **'स्वयम्भूस्तोत्र'**, 12 : 2; पृ. 81)

अर्थ – हे (वासुपूज्य) नाथ! आप वीतरागी हैं इसलिए आपको अपनी पूजा होने से कोई प्रयोजन नहीं है। आप वैर रहित हैं इसलिए आपको अपनी निन्दा होने से भी कोई प्रयोजन नहीं है। तो भी आपके पवित्र गुणों का स्मरण हमारे चित्त को पापरूपी मल से पवित्र कर ही देता है।

O (Vāsupūjya) Lord! You had conquered all attachment and, therefore, do not pay heed to worship; you entertain no aversion and, therefore, do not pay heed to calumny. Still, just the thought of your auspicious qualities washes the evil mire of karmic matter from our hearts.

सामायिक दण्डक
Installation in *Sāmāyika*[1]

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

लोक के सर्व अर्हन्तों को नमस्कार हो, सिद्धों को नमस्कार हो,
आचार्यों को नमस्कार हो, उपाध्यायों को नमस्कार हो,
और साधुओं को नमस्कार हो।

My obeisance humble to all *Arhanta* (the embodied perfect souls), *Siddha* (the liberated souls), *Ācārya* (the masters of ascetics), *Upādhyāya* (the teachers of ascetics), and *Sādhu* (the ascetics) in the universe *(loka)*.

चत्तारि मंगलं - अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलीपण्णत्तो धम्मो मंगलं।

चत्तारि लोगुत्तमा - अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलीपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा।

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि - अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि।

---

1. To merge or become one is *'samaya'*. That, which has oneness as its object, is *'sāmāyika'*. Thus, to become one with the self is *'sāmāyika'* – equanimity.

अर्थ - (संसार में) ये चार मंगल हैं- 1) अर्हन्त भगवान् मंगल हैं, 2) सिद्ध भगवान् मंगल हैं, 3) साधु (आचार्य, उपाध्याय और साधु) मंगल हैं, 4) केवली भगवान् के द्वारा प्रणीत धर्म मंगल है।
ये चार उत्तम हैं- 1) अर्हन्त भगवान् उत्तम हैं, 2) सिद्ध भगवान् उत्तम हैं, 3) साधु (आचार्य, उपाध्याय और साधु) उत्तम हैं, 4) केवली भगवान् के द्वारा प्रणीत धर्म उत्तम है।
ये चार शरणरूप हैं (मैं इन चारों की शरण को प्राप्त होता हूँ)- 1) अर्हन्त भगवान् शरणरूप हैं, मैं उनकी शरण को प्राप्त होता हूँ, 2) सिद्ध भगवान् शरणरूप हैं, मैं उनकी शरण को प्राप्त होता हूँ, 3) साधु (आचार्य, उपाध्याय और साधु) शरणरूप हैं, मैं उनकी शरण को प्राप्त होता हूँ, 4) केवली भगवान् के द्वारा प्रणीत धर्म शरणरूप है, मैं उसकी शरण को प्राप्त होता हूँ।

(In this world–) These four are propitious *(maṅgala)*: 1) Lords Jina *(Arhanta)* are propitious, 2) the Liberated-souls *(Siddha)* are propitious, 3) all ascetics *(Sādhu)* – *Ācārya*, *Upādhyāya* and *Sādhu* – are propitious, and 4) the dharma expounded by the Omniscient-Lord *(kevalī)* is propitious.

These four are excellent *(uttama)*: 1) Lords Jina *(Arhanta)* are excellent, 2) the Liberated-souls *(Siddha)* are excellent, 3) all ascetics *(Sādhu)* – *Ācārya*, *Upādhyāya* and *Sādhu* – are excellent, and 4) the dharma expounded by the Omniscient-Lord *(kevalī)* is excellent.

These four are the providers of refuge *(śaraṇa)* and I take refuge in them: 1) I take refuge in Lords Jina

(Arhanta), 2) I take refuge in the Liberated-souls *(Siddha)*, 3) I take refuge in all ascetics *(Sādhu)* – *Ācārya*, *Upādhyāya* and *Sādhu* – and 4) I take refuge in the dharma expounded by the Omniscient-Lord *(kevalī)*.

गद्य (Prose)

अड्ढाइज्जदीव-दो समुद्देसु पण्णारस-कम्मभूमिसु जाव-अरहंताणं, भयवन्ताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसगाणं, धम्मणायगाणं, धम्मवरचाउरंग चक्कवट्टीणं, देवाहिदेवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं, सदा करेमि किरियम्मं।

अर्थ - अढ़ाई द्वीप में और दो समुद्रों में तथा पन्द्रह कर्मभूमियों में होने वाले जितने अर्हन्त भगवान् हैं, ज्ञानवान और पूज्य भगवन्त हैं, आदितीर्थ (संसार सागर से पार करने का हेतु) प्रवर्त्तक अर्थात् तीर्थंकर हैं, कर्म-शत्रुओं को जीतने वाले 'जिन' हैं, 'जिनों' में श्रेष्ठ जो जिनोत्तम हैं, केवलज्ञान-सम्पन्न केवली हैं, सिद्ध हैं, त्रिकालवर्ती समस्त द्रव्य-गुण-पर्यायों के ज्ञाता 'बुद्ध' हैं, सुख-स्वरूप परिनिर्वृत्त सिद्ध हैं, समस्त कर्म और उनसे उत्पन्न संसार का अन्त करने वाले 'अन्तकृत' सिद्ध हैं, संसार-सागर से पार होने वाले 'पारकृत' सिद्ध हैं, जो धर्माचार्य हैं, धर्म के उपदेशक (उपाध्याय) हैं, धर्म का अनुष्ठान करने वाले धर्मनायक साधु हैं, उत्कृष्ट धर्मरूपी चतुरंग सेना के अधिपति अर्थात् चतुर्निकाय देवों से वन्दनीय जो देवाधिदेव भगवान् हैं, तथा जो ज्ञान है, दर्शन है, और चारित्र है, उन सब की मैं सदा भक्तिपूर्वक अपना आवश्यक कृतिकर्म अर्थात् कर्त्तव्य जानकर सदा वन्दना करता हूँ, उन सब को मैं सदा नमस्कार करता हूँ।

As my essential-duty *(kṛtikarma)*, I always worship, and bow down, with devotion, before the following: all the *Arhanta* in the two-and-a-half continents *(aḍhāī dvīpa)* including the two oceans *(samudra)* and the fifteen regions-of-labour *(karmabhūmi)*; the Ford-makers *(Tīrthaṅkara),* the promulgators of the dharma to cross the ocean of worldly-existence *(saṃsāra)*; the *'Jina'* who have vanquished enemies in form of the karmas; the best of the *'Jina'*, i.e., the *'Jinottama'*; those with infinite-knowledge *(kevalajñāna)*; those who have attained liberation, i.e., the *Siddha*; those *'Buddha'* who know all substances *(dravya)* of the three times with their qualities *(guṇa)* and modes *(paryāya)*; those who are of the nature of happiness; those who are the *'Antakṛta' Siddha* having brought to end their worldly-existence *(saṃsāra)* due to the karmas; those who are the *'Pārakṛta' Siddha* having crossed the world-ocean; those who are Masters of the dharma *(Dharmācārya)*; those who are Preachers of the dharma *(Dharmopadeśaka)*; those who are engaged in activities *(anuṣṭhāna)* of the dharma; those who are the Lords-of-the-lords *(Devādhideva)* being the lords of fourfold army of the dharma or else the four classes of the devas; the knowledge *(jñāna)*; the perception or faith *(darśana)*; and the conduct *(cāritra)*.

करेमि भंते! सामाइयं, सव्वसावज्जजोगं पच्चक्खामि। जावज्जीवं तिविहेण मणसा, वचसा, कायेण ण करेमि, ण कारेमि, ण अण्णं करंतं पि समणुमणामि। तस्स भंते! अइचारं पडिकम्मामि णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं जाव अरहंताणं भयवंताणं पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

अर्थ – हे भगवान्! मैं सामायिक करते समय सब प्रकार के सावद्य-योग का प्रत्याख्यान (त्याग) करता हूँ। मैं जीवन पर्यन्त तीनों प्रकार से – मन, वचन और काय से – सावद्य-योग न स्वयं करूँगा, न दूसरे से कराऊँगा, और न ही करने वालों की अनुमोदना करूँगा। हे भगवन्! इस पावन क्रिया में होने वाले सब अतिचारों का भी मैं प्रतिक्रमण करता हूँ, आत्मसाक्षी पूर्वक निन्दा करता हूँ, तथा गुरुसाक्षी पूर्वक गर्हा करता हूँ। जितने काल अर्हन्त भगवन्तों की पर्युपासना करता हूँ उतने काल पर्यन्त समस्त पापकर्मों का और दुश्चरित्र का त्याग करता हूँ।

O Lord Jina! I renounce all evil *(sāvadya)* activities during my engagement in observing equanimity *(sāmāyika)*. For life, I shall not engage my mind, speech and body in such evil activity; I shall not do it myself, get it done by others or grant approval to others. O Lord! I make repentence *(pratikramaṇa)* for all transgressions committed during this pious act of observing equanimity *(sāmāyika)*. I censure myself for all transgressions and also make confession in front of the Guru. I renounce all evil karmas and activities till I remain engaged in the worship of Lord Jina.

सामायिक का लक्षण

The mark of *sāmāyika*

जीविदमरणे लाभालाभे संजोयविप्पओगे य ।
बंधुरिसुहदुक्खादिसु समदा सामाइयं णाम ॥

अर्थ – जीवन-मरण में, लाभ-अलाभ में, संयोग-वियोग में, मित्र-शत्रु में, और सुख-दुःख इत्यादि में समभाव होने का नाम सामायिक है।

Maintenance of composure in life and death, gain and loss, union and separation, friend and foe, happiness and misery, etc., is termed the equanimity *(sāmāyika)*.

चतुर्विंशतिस्तवः

Adoration of the Twenty-four *Tīrthaṅkara*

(Verses attributed to the Most Worshipful *Ācārya* Kundakunda.)

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंतजिणे ।
णरपवरलोयमहिए विहुयरयमले महप्पण्णे ॥१॥

अर्थ – मनुष्यों में श्रेष्ठ, लोक में पूज्य, कर्म-मल को जिन्होंने दूर कर दिया है, केवलज्ञान से जो युक्त हैं, अनन्त संसार को जीतने वाले, ऐसे उत्कृष्ट तीर्थंकरों की मैं स्तुति करता हूँ।

Finest among men, worhipped by all in the world, who have washed away all dirt due to the karmas, who are endowed with infinite-knowledge *(kevalajñāna),* and

who have snapped the never-ending cycle of worldly-existence; I pay my adoration to such excellent Ford-makers or the *Tīrthaṅkara*.

लोयस्सुज्जोययरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से चउवीसं चेव केवलिणो ॥२॥

अर्थ – मैं लोक को प्रकाशित करने वाले तथा धर्मरूपी तीर्थ के कर्ता जिनों को नमस्कार करता हूँ। और अर्हन्त पद को प्राप्त केवलज्ञानी चौबीस तीर्थंकरों का कीर्तन करूँगा।

I bow down before all Lords Jina, the Ford-makers, who have illumined the world by promulgating the dharma. I will pay my adoration to the twenty-four *Arhanta*, the Omniscient *(kevalajñānī)* Lords.

उसहमजियं च वंदे संभवमभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥३॥

अर्थ – मैं वृषभ, अजित, संभव, अभिनन्दन और सुमति जिनेन्द्र की वन्दना करता हूँ। इसी प्रकार पद्मप्रभ, सुपार्श्व और चन्द्रप्रभ भगवान् को नमस्कार करता हूँ।

I bow down before Lords Jina Ṛṣabha, Ajita, Saṃbhava, Abhinandana and Sumati. I also make

obeisance to Lords Jina Padmaprabha, Supārśva and Candraprabha.

सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमलमणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ॥४॥

अर्थ – मैं सुविधि अथवा पुष्पदन्त, शीतल, श्रेयांस, वासुपूज्य, विमल, अनन्त, धर्म और शान्तिनाथ भगवान् को नमस्कार करता हूँ।

I bow down before Lords Jina Suvidhi or Puṣpadanta, Śītala, Śreyāṅsa, Vāsupūjya, Vimala, Ananta, Dharma and Śāntinātha.

कुंथुं च जिणवरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदामिरिट्ठणेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ॥५॥

अर्थ – मैं कुन्थु, अर, मल्लि, मुनिसुव्रत, नमि, अरिष्टनेमि, पार्श्व और वर्धमान जिनेन्द्र को नमस्कार करता हूँ।

I bow down before Lords Jina Kunthu, Ara, Malli, Munisuvrata, Nami, Ariṣṭanemi, Pārśva and Vardhmāna.

एवं मए अभित्थुया विहुयरयमला पहीणजरमरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ॥६॥

अर्थ – इस प्रकार मेरे द्वारा जिनकी स्तुति की गई है, जिन्होंने आवरण-रूपी मल को नष्ट कर दिया है, जिनके जरा और मरण नष्ट हो गए हैं तथा जो जिनों में श्रेष्ठ हैं, ऐसे चौबीस तीर्थंकर मेरे ऊपर प्रसन्न हों।

Those whom I have paid my adoration in the aforesaid manner, those who have washed away the enveloping dirt of the karmas, those who have vanquished old-age and death, and those who are excellent among all the *Arhanta*, may such twenty-four Ford-makers (*Tīrthaṅkara)* bless me.

कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्गणाणलाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ॥७॥

अर्थ – जो मेरे द्वारा कीर्तित, वन्दित और पूजित हैं, लोक में उत्तम हैं, तथा कृतकृत्य हैं, ऐसे ये जिनेन्द्र चौबीस भगवान् मेरे लिए आरोग्यलाभ, ज्ञानलाभ, समाधि और बोधि प्रदान करें।

May the twenty-four Ford-makers (*Tīrthaṅkara)* who are the subject of my adoration, obeisance, and worship, who are excellent in the world, and who have nothing to attain further, bestow on me freedom-from-the-ailment *(ārogya)* of transmigration, knowledge *(jñāna)*, supreme-meditation *(samādhi),* and the trio of right faith-knowledge-conduct *(bodhi)*.

चंदेहिं णिम्मलयरा आइच्चेहिं अहियपयासंता ।
सायरमिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥८॥

अर्थ - जो चन्द्रों से अधिक निर्मल हैं, सूर्यों से अधिक प्रभासमान हैं, समुद्र के समान गम्भीर हैं, तथा सिद्ध-पद को प्राप्त हुए हैं, ऐसे चौबीस जिनेन्द्र मेरे लिए सिद्धि प्रदान करें।

Those who are more soothing than the moons, more illuminating than the suns, tranquil like the ocean, and who have attained liberation; may such twenty-four Ford-makers (*Tīrthaṅkara)* bestow on me the ultimate attainment (of liberation).

अञ्चलिका (Submission)

गद्य (Prose)

इच्छामि भंते! चउवीसतित्थयरभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। पञ्चमहाकल्लाणसम्पण्णाणं अट्ठमहापाडिहेरसहियाणं चउतीसातिसय-विसेससंजुत्ताणं बत्तीसदेविंदमणिमयमउडमत्थयमहियाणं बलदेव-वासुदेव-चक्कहर-रिसिमुणिजइ अणगारोव गूढाणं थुइसयसहस्स-णिलयाणं उसहाइ वीरपच्छिम मंगलमहापुरिसाणं णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।[1]

1. यह अञ्चलिका **'कुन्दकुन्द भारती'** (1992) के भत्तिसंगहो खण्ड, पृ. 282 से ली गई है।

अर्थ – हे भगवन्! मैंने चौबीस तीर्थंकर भक्ति सम्बन्धी कायोत्सर्ग किया। उसमें लगे दोषों की आलोचना करने की मैं इच्छा करता हूँ। जो गर्भ, जन्म आदि पाँच महाकल्याणकों से सुशोभित हैं; जो आठ महाप्रातिहार्यों सहित विराजमान हैं; जो चौंतीस विशेष अतिशयों से सुशोभित हैं; जो बत्तीस देवेन्द्रों के रत्नमय मुकुटों से सुशोभित मस्तकों से नमस्कार किए जाते हैं; बलदेव, वासुदेव, चक्रवर्ती, ऋषि, मुनि, यति और अनगार जिनकी सदा सेवा करते रहते हैं; और लाखों स्तुतियों के पात्र ऐसे श्री वृषभदेव से लेकर महावीर पर्यन्त चौबीसों महापुरुषों अर्थात् तीर्थंकरों की मैं सदा–काल अर्चा करता हूँ, पूजा करता हूँ, वन्दना करता हूँ, नमस्कार करता हूँ। मेरे दु:खों का क्षय हो, कर्मों का क्षय हो, मुझे बोधि (रत्नत्रय) की प्राप्ति हो, उत्तम गति में गमन हो, समाधिमरण हो, तथा जिनेन्द्रदेव के गुणों की सम्पत्ति मुझे प्राप्त हो।

O Lord! I have performed devotion to the twenty-four Ford-makers *(Tīrthaṅkara)* with detachment-to-own-body *(kāyotsarga)*. I now desire confession *(ālocanā)* for faults therein. I incessantly adore, worship, make obeisance, and salute all the twenty-four Ford-makers *(Tīrthaṅkara),* starting from Ṛṣabhadeva to Mahāvīra. The life of these Ford-makers *(Tīrthaṅkara)* is marked by the five most auspicious events *(kalyāṇaka),* including that which takes place when their soul enters the Mother's womb *(garbha kalyāṇaka)* and that which takes place when they take birth *(janma kalyāṇaka)*. They are accompanied by eight divine-splendors *(prātihārya)* in their heavenly-pavilion *(samava-saraṇa)*. Thirty-four miraculous-happenings *(atiśaya)* appear during their lifetime. Thirty two lords of the

devas (the Indras) bow down their heads, sporting gems-studded diadems, before them. Excellent personages like *baladeva, vāsudeva, cakravartī, ṛṣi, muni, yati* and *anagāra* are ever present in their service. They are worthy of adoration, hundreds of thousands times. May my miseries be obliterated; may my karmas be destroyed; may I attain the trio of right faith-knowledge-conduct *(bodhi, ratnatraya)*; may I attain a superior state-of-existence *(gati)*; may I embrace, at the end of my life, a pious and dispassionate-death *(samādhimaraṇa)*; and may I attain the wealth of the qualities appertaining to Lord Jina!

* * *

श्री अर्हद् भक्ति तथा ईर्यापथशुद्धि

Devotion to Lord Jina and Purity of Activity *(Yoga)*

(स्रग्धरा)

निःसंगोऽहं जिनानां सदनमनुपमं त्रिःपरीत्येत्य भक्त्या ।
स्थित्वा नत्वा[1] निषद्योच्चरण-परिणतोऽन्तः शनैर्हस्तयुग्मम् ॥
भाले संस्थाप्य बुद्ध्या मम दुरितहरं कीर्तये शक्रवन्द्यम् ।
निन्दादूरं सदाप्तं क्षयरहितममुं ज्ञानभानुं जिनेन्द्रम् ॥१॥

अर्थ – मैं त्रियोगों (मन-वचन-काय) की शुद्धिपूर्वक, निस्पृह होकर, भक्ति से जिनेन्द्रदेव के उपमारहित जिनालय में आकर, तीन प्रदक्षिणा देकर, खड़ा होता हूँ। पश्चात् नमस्कार करके, बैठकर, मन में मन्द-मन्द स्वर से उच्चारण करता हूँ। दोनों हाथों को कमलाकार से जोड़कर भक्ति से अपने मस्तक पर रखता हूँ। मेरे पापों को हरने वाले, इन्द्रों से वन्दनीय, निन्दा से दूर, अविनाशी, केवलज्ञानसूर्य, ऐसे आप्त (वीतरागी, सर्वज्ञ, हितोपदेशी) इन जिनेश्वर की मैं सदा बुद्धिपूर्वक स्तुति करता हूँ।

With purity of my threefold activities (pertaining to the mind, speech and body), rid of all desires, and with devotion, I enter the inimitable Temple of Lord Jina. After three circumambulations I stand in front of Lord Jina. Bowing before him, I sit down and recite my

1. पाठान्तर – 'गत्वा'

prayer in feeble voice. With devotion, I touch my forehead with folded hands. Using discrimination, I always eulogize Lord Jina or *Āpta*[1], the destroyer of my evil karmas, who is adored by the lords of the devas, indifferent to censure, indestructible, and the sun that is infinite-knowledge *(kevalajñāna)*.

(वसन्ततिलका)

श्रीमत् पवित्रमकलंकमनन्तकल्पम्,
स्वायंभुवं सकलमंगलमादितीर्थम् ।
नित्योत्सवं मणिमयं निलयं जिनानाम्,
त्रैलोक्य-भूषणमहं शरणं प्रपद्ये ॥२॥

अर्थ – शोभायुक्त अर्थात् परम ऐश्वर्य सहित, पवित्र, कलंक-रहित, अनन्त काल से निर्मित, समस्त जीवों के लिए मंगलरूप, अद्वितीय तीर्थ-स्वरूप, निरन्तर होने वाले उत्सवों (अष्टाह्निका, दसलक्षण आदि) से युक्त, मणिमय, तीनों लोकों के आभूषण-रूप, ऐसे जिनेन्द्रदेव के अकृत्रिम आलयों (जिनालयों) की शरण को मैं प्राप्त होता हूँ।

I take refuge in the natural *(akṛtrima)* Temples

---

1. The word *'Āpta'* refers to Lord Jina – the *'Arhanta'*, the *'Tīrthaṅkara'*, the 'Ford-maker' – who has vanquished the four inimical *(ghātiyā)* karmas due to delusion *(moha)*, attachment *(rāga)* and aversion *(dveṣa)*. The four *ghātiyā* karmas are deluding *(mohanīya)*, knowledge-obscuring *(jñānāvaraṇīya)*, perception-obscuring *(darśanāvaraṇīya)*, and obstructive *(antarāya)*. The *'Āpta'* must necessarily be the victor-of-attachment *(vītarāgī)*, the all-knowing *(sarvajña)*, and the supreme-preacher *(hitopadeśī)* whose teachings benefit all living-beings.

(cityālaya) of Lord Jina that are endowed with supreme magnificence, utterly holy and stainless, in existence since eternity, cause of propitiousness for all living-beings, unparalleled abodes for pilgrimage, centres of incessant festivities (for example, during *aṣṭāhnikā* and *dasalakṣaṇa*), studded with gems, and like ornaments adorning the three worlds.

(अनुष्टुप)

श्रीमत्परमगम्भीर स्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात्-त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥३॥

अर्थ - श्रीमत् अर्थात् अन्तरंग-बहिरंग लक्ष्मी से पूर्ण, अत्यन्त गम्भीर, स्याद्वाद जिसका अमोघ लक्षण है, तथा तीन लोक के स्वामी (इन्द्र, चक्रवर्ती आदि) पर जो शासन करने वाला है, ऐसा जिनशासन सदा जयवन्त रहे।

Victory forever to Lord Jina's regime that is full of internal as well as external splendors, is most profound, has the doctrine of conditional predication – *syādvāda* – as its infallible mark, and that reigns over the lords of the three worlds (like the lord of the devas, the Indra, and the lord of the men, the *cakravartī*)!

(अनुष्टुप)

श्रीमुखालोकनादेव श्रीमुखालोकनं भवेत् ।
आलोकन-विहीनस्य तत् सुखावाप्तयः कुतः ॥४॥

अर्थ - (वीतरागता रूप लक्ष्मी से युक्त) जिनेन्द्रदेव के श्रीमुख को देखने से ही मुक्तिलक्ष्मी के मुख का दर्शन/अवलोकन हो जाता है। जिनेन्द्रदेव के दर्शन से रहित जीव को वह सुख कैसे प्राप्त हो सकता है?

Just by beholding Lord Jina's countenance, the wealth of victory-over-attachment *(vītarāgatā)* permeating it, one gets to behold the countenance of the wealth of liberation. How can the one devoid of the vision for Lord Jina attain that wealth of liberation?

(वसन्ततिलका)

अद्याभवत्-सफलता नयन-द्वयस्य,
देव! त्वदीय-चरणाम्बुज-वीक्षणेन ।
अद्य-त्रिलोक-तिलक! प्रतिभासते मे,
संसार-वारिधिरयं चुलुक-प्रमाणः ॥५॥

अर्थ - हे वीतराग देव! आज आपके चरण-कमलों के दर्शन करने से मेरे दोनों नयन सफल हो गए हैं। हे तीन लोक के तिलक-स्वरूप भगवन्! आज मुझे यह संसार-सागर मात्र चुल्लूभर पानी सम (अल्प समय में ही रिक्त होने वाला) प्रतीत होता है।

O Attachment-free *(vītarāga)* Lord Jina! It is a great fortune of my two eyes to have watched today your Lotus-Feet *(caraṇa-kamala)*. O Lord! You are like the distinctive, ornamental mark on the forehead – *tilaka* – of the three worlds. Today, the immense ocean of worldly existence appears to me like just the handful of water!

(अनुष्टुप)

अद्य मे क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमलीकृते ।
स्नातोऽहं धर्मतीर्थेषु जिनेन्द्र! तव दर्शनात् ॥६॥

अर्थ – हे जिनेन्द्रदेव! आपके दर्शन से आज मेरा शरीर प्रक्षालित (शोधित) हो गया, मेरे दोनों नेत्र निर्मल हो गए तथा मैंने आज मानो धर्मतीर्थों में ही स्नान कर लिया है। (ऐसी विशुद्ध अनुभूति आज मुझे प्राप्त हो रही है!)

O Lord Jina! By your sight *(darśana)* today my body has been washed of impurities; both my eyes have become serene. Today it appears to me as if I have taken a holy bath in the sacred places of pilgrimage.

(उपजाति)

नमो नमः सत्त्वहितंकराय वीराय भव्याम्बुज-भास्कराय ।
अनन्तलोकाय सुरार्चिताय देवाधिदेवाय नमो जिनाय ॥७॥

अर्थ – प्राणीमात्र का हित करने वाले, भव्य-रूपी कमलों के लिए सूर्य-समान, ऐसे श्री वीर-जिन के लिए बारम्बार नमस्कार हो। जिनके केवलज्ञान में अनन्त पदार्थ युगपत् दिखाई देते हैं और जो देवों के द्वारा अर्चना को प्राप्त हैं, ऐसे देवाधिदेव जिनेन्द्र भगवान् के लिए नमस्कार हो।

I bow down, over and over again, to Lord Vīra Jina, the benefactor of all living-beings and who is like the sun for the lotus-souls of the worthy *(bhavya)* beings. I bow down to the Lord-of-the-lords, Vīra Jina, in whose knowledge reflect simultaneously the infinite objects of the world and who is adored by the celestial-beings (deva).

(उपजाति)

नमो जिनाय त्रिदशार्चिताय विनष्ट-दोषाय गुणार्णवाय ।
विमुक्ति-मार्ग-प्रतिबोधनाय देवाधिदेवाय नमो जिनाय ॥८॥

अर्थ – (चतुर्णिकाय) देवों के द्वारा अर्चना को प्राप्त, जिनके सर्व दोष[1] नष्ट हो गए हैं, जो गुणों के सागर हैं, ऐसे श्री जिन-देव के लिए नमस्कार हो। जो मुक्तिमार्ग का प्रतिबोध कराने वाले हैं, ऐसे देवाधिदेव जिनेन्द्र भगवान् के लिए नमस्कार हो।

---

1. अठारह दोष- जिसके अशेष (समस्त) दोष नष्ट हो गये हैं ऐसा सकलगुणमय पुरुष आप्त कहलाता है।
छुहतण्हभीरुरोसो रागो मोहो चिंता जरा रुजा मिच्चू ।
सेदं खेद मदो रइ विम्हिय णिद्दा जणुव्वेगो ॥६॥ – आचार्य कुन्दकुन्द 'नियमसार'
क्षुधा, तृष्णा (तृषा), भय, रोष (क्रोध), राग, मोह, चिन्ता, जरा (बुढ़ापा), रोग, मृत्यु, स्वेद (पसीना), खेद, मद, रति, विस्मय, निद्रा, जन्म और उद्वेग (विषाद) – ये अठारह दोष हैं।

I bow down to Lord Jina who is adored by the celestial-beings (deva of the four orders), and who has vanquished all imperfections[1]. I bow down to the Lord-of-the-lords, Jinadeva, who has expounded the path to liberation.

(वसन्ततिलका)

देवाधिदेव! परमेश्वर! वीतराग!
सर्वज्ञ! तीर्थकर! सिद्ध! महानुभाव!
त्रैलोक्यनाथ! जिन-पुंगव! वर्धमान!
स्वामिन्! गतोऽस्मि शरणं चरणद्वयं ते ॥९॥

अर्थ – हे देवाधिदेव! परमेश्वर! वीतराग! सर्वज्ञ! तीर्थंकर! सिद्ध! महानुभाव! त्रैलोक्यनाथ! जिन-पुंगव (जिनश्रेष्ठ)! वर्धमान! स्वामिन्! मैं आपके चरण-युगलों की शरण को प्राप्त होता हूँ।

O Lord-of-the-lords! Supreme God! All-knowing! Ford-maker (*Tīrthaṅkara)*! All-accomplished *(Siddha)*! Excellency! Lord-of-the-three-worlds! Jina-Supreme!

---

1. The eighteen imperfections are: hunger *(kṣudhā)*, thirst *(tṛṣā)*, fear *(bhaya)*, displeasure *(roṣa, krodha, arati)*, attachment *(rāga)*, delusion *(moha)*, anxiety *(cintā)*, old-age *(żarā)*, sickness *(roga)*, death *(mṛtyu)*, perspiration *(sveda)*, regret *(kheda)*, pride *(mada)*, liking *(rati)*, astonishment *(vismaya)*, sleep *(nidrā)*, rebirth *(janma)*, and despondency or grief *(viṣāda, śoka, udvega)*. [see, Vijay K. Jain (2019), *Ācārya* Kundakunda's *Niyamasāra*, 1 : 6, p. 15.]

Ever-growing *(vardhamāna)*[1]! Master! I take refuge in the duo of your Feet.

(आर्या)

जितमद-हर्ष-द्वेषा जितमोह-परीषहाः जितकषायाः ।
जितजन्म-मरण-रोगा जितमात्सर्या जयन्तु जिनाः ॥१०॥

अर्थ - जिन्होंने मद, हर्ष, द्वेष को जीता है, मोह और परीषहों को जीता है, कषायों को जीता है, जन्म-मरण-रूपी रोग को जीता है, तथा मात्सर्य अर्थात् ईर्ष्या-भावों को जीता है, ऐसे जिनेन्द्रदेव जयवन्त हों।

Victory to Lord Jina who has vanquished pride, exultation and abhorrence; who has vanquished delusion and afflictions; who has vanquished passions; who has vanquished the ailment that is the cycle of births and deaths, and who has vanquished envy.

(आर्या)

जयतु जिन वर्धमानस्त्रिभुवनहित-धर्मचक्र-नीरजबन्धुः ।
त्रिदशपतिमुकुटभासुर चूडामणिरश्मिरञ्जितारुणचरणः ॥११॥

---

2. Here *'Vardhamāna'* can as well be interpreted as another name of Lord Mahāvīra, Lord Vīra.

अर्थ – जिस प्रकार सूर्य कमल (पद्म) को विकसित करता है उसी प्रकार जिनका धर्मचक्र-रूपी सूर्य तीनों लोकों के भव्य-जीव रूपी कमलों का हित करने वाला है, जिनके चरण इन्द्र के मुकुट में दीप्तिमान चूड़ामणि की किरणों के स्पर्श से लाल वर्ण को प्राप्त हो रहे हैं, ऐसे वर्धमान (महावीर) जिन जयवन्त हों।

As lotuses bloom in the sun, the worthy *(bhavya)* souls of the three worlds flourish in presence of his divine-discus-of-piety – *dharmacakra*. His Feet appear red with the kiss of the rays emanating from the glowing crest-jewels in the diadems of the Indras. Victory to such Lord Vardhamāna (Lord Mahāvīra)!

(हरिणी)

जय जय जय त्रैलोक्य-काण्ड-शोभि-शिखामणे,
नुद नुद नुद स्वान्त-ध्वान्तं जगत्-कमलार्क नः ।
नय नय नय स्वामिन्! शान्तिं नितान्तमनन्तिमाम्,
नहि नहि नहि त्राता लोकैकमित्र! भवत्परः ॥१२॥

अर्थ – तीनों लोकों के समूह पर शिखामणि रूप शोभायमान, हे भगवान्! आपकी जय हो, जय हो, जय हो। जगत् के प्राणियों रूपी कमलों को विकसित करने हेतु सूर्य समान, आप हमारे हृदय के अन्धकार को नष्ट कीजिए, नष्ट कीजिए, नष्ट कीजिए। हे स्वामी! (हमें) अविनाशी शान्ति को अवश्य ही प्राप्त कराइये, प्राप्त कराइये, प्राप्त कराइये। हे लोक के एकमात्र मित्र! आपसे भिन्न दूसरा कोई रक्षक नहीं है, नहीं है, नहीं है।

O Lord, the splendid crest-jewel of all the three worlds! Victory to you, victory to you, victory to you. You are like the sun for blossoming the lotuses that are the living-beings of the world; may the darkness in our hearts be washed away, washed away, washed away. O Lord! May indestructible peace be unfailingly bestowed on us, bestowed on us, bestowed on us. O Lord, the only friend of the world! A saviour other than you is not present, not present, not present.

(वसन्ततिलका)

चित्ते मुखे शिरसि पाणिपयोजयुग्मे,
भक्तिं स्तुतिं विनतिमञ्जलिमञ्जसैव ।
चक्रीयते चरिकरीति चरीकरीति,
यश्चर्करीति तव देव! स एव धन्यः ॥१३॥

अर्थ – हे स्वामिन्! जो यथार्थरूप से (श्रद्धापूर्वक) चित्त से आपकी भक्ति (गुणानुराग) को करता है, मुख से (वचनों से) आपकी स्तुति (गुणानुवाद) करता है, शिर से (नत-मस्तक होकर) आपकी विनति करता है, तथा हस्तकमल-युगल को अञ्जलिबद्ध करता है, वही धन्य है।

O Lord! Blessed is the one who, with firm belief, does the following: your devotion *(bhakti)* with his heart; your adoration *(stuti)* with his speech; your prayer

(vinati) by bowing his head; and raises his folded hands to his forehead in your salutation.

(मन्दाक्रान्ता)

जन्मोन्मार्ज्यं भजतु भवतः पाद-पद्मं न लभ्यम्,
तच्चेत्-स्वैरं चरतु न च दुर्देवतां सेवतां सः ।
अश्नात्यन्नं यदिह सुलभं दुर्लभं चेन्मुधास्ते,
क्षुद्-व्यावृत्यै कवलयति कः कालकूटं बुभुक्षुः ॥१४॥

अर्थ - यदि कोई जीव अपने जन्म का मार्जन/निवारण (संसार भ्रमण से छूटना) चाहता है तो वह आपके चरण-कमलों की सेवा करे। यदि आपके चरण-कमल प्राप्त न हो सकें तो अपनी इच्छानुसार आचरण करे परन्तु कुदेवों की उपासना न करे। भूखा मनुष्य यहाँ जो सुलभ/उपलब्ध है उस अन्न को खाता है। यदि अन्न दुर्लभ है तो व्यर्थ ही भूख को दूर करने के लिए कालकूट विष को कौन भूखा खाता है? कोई नहीं।

If a man wishes to snap his cycle of worldly existence, he should serve your Lotus-Feet. If your Lotus-Feet are not accessible, he should act according to his discretion but never adore false-deities *(durdeva, kudeva)*. The hungry man eats what cereal is available to him. If cereal is not easily available, which hungry man will consume the deadly-poison, called *kālakūṭa*, to satiate his hunger? No one.

(शार्दूल विक्रीडितम्)

रूपं ते निरुपाधि-सुन्दरमिदं पश्यन् सहस्रेक्षणः,
प्रेक्षा-कौतुक-कारिकोऽत्र भगवन् नोपैत्यवस्थान्तरम् ।
वाणीं गद्गद्यन् वपुः पुलकयन् नेत्रद्वयं श्रावयन्,
मूर्द्धानं नमयन् करौ मुकुलयंश्चेतोऽपि निर्वापयन् ॥१५॥

अर्थ – हे भगवन्! उपाधि से रहित, अर्थात् आभूषण/वस्त्र आदि से रहित, आपके इस अत्यन्त सुन्दर रूप को देखने के लिए कौतुकवश इन्द्र भी सहस्र नेत्रों को धारण करता है। इस जगत् में कौन ऐसा मानव है जो आपके इस सुन्दर रूप को देखकर अपनी वाणी को गद्गद् रूप से करता हुआ, शरीर को पुलकित/ रोमांचित करता हुआ, दोनों नेत्रों से हर्षाश्रु झराता हुआ, मस्तक को नमाता हुआ, दोनों हाथों को जोड़ता हुआ और चित्त को संतुष्ट करता हुआ, दूसरी अवस्था को प्राप्त नहीं होता? अर्थात् वह आपके दर्शन से नवीन अनुभव को प्राप्त होता है।

O Lord! Indra, out of sheer curiosity, adopts a thousand eyes to savour your enchantingly beautiful figure rid of all external embellishments (clothes or ornaments). Which man in this world does not experience a new state of being as he sees your figure; his voice turns euphoric in your extolment, his body titillates with joy, both his eyes get moist with exultation, his head bows down, and his heart experiences great tranquility.

(शार्दूल विक्रीडितम्)

त्रस्तारातिरिति त्रिकालविदिति त्राता त्रिलोक्या इति,
श्रेयः सूति-रिति श्रियां निधिरिति श्रेष्ठः सुराणामिति ।
प्राप्तोऽहं शरणं शरण्यमगतिस्त्वां तत्-त्यजोपेक्षणम्,
रक्ष क्षेमपदं प्रसीद जिन! किं विज्ञापितैर्गोपितैः ॥१६॥

अर्थ – आपने (घातिया कर्मरूपी) शत्रुओं का क्षय किया है, इसलिए आप तीनों लोकों के ज्ञाता हैं, इसलिए आप तीनों लोकों के रक्षक हैं, इसलिए आप कल्याण की उत्पत्ति करने वाले हैं, इसलिए आप लक्ष्मी की निधि हैं, इसलिए आप देवों में श्रेष्ठ हैं, इसलिए आप अद्वितीय शरण देने में निपुण हैं, इसलिए आप कल्याण/मंगल के स्थानभूत हैं। अन्य उपाय से रहित ऐसा मैं आपकी शरण को प्राप्त हुआ हूँ, इसलिए हे जिनदेव! अब (मेरे प्रति) उपेक्षा को छोड़िये, मेरी रक्षा कीजिये, मुझ पर प्रसन्न होइये। मेरी इस प्रार्थना को गुप्त रखने से क्या प्रयोजन; आप सर्वज्ञ हैं।

O Jinadeva! You have vanquished enemies (in form of inimical karmas). Therefore, you are the knower of the three worlds, you are the saviour of the three worlds, you are the originator of prosperity, you are the treasure-crest of good fortune, you are the best among the devas, you are apt in providing unparalleled refuge, and you are the abode of propitiousness. Devoid of other expedients, I now seek your refuge. Now leave indifference towards me, protect me and be pleased with me. No point keeping my prayer a secret; you know all.

(उपजाति)

त्रिलोक-राजेन्द्र-किरीट-कोटि-प्रभाभिरालीढ-पदारविन्दम् ।
निर्मूलमुन्मूलित-कर्मवृक्षं जिनेन्द्रचन्द्रं प्रणमामि भक्त्या ॥१७॥

अर्थ - जिनके चरण-कमल तीनों लोकों के अधिपति इन्द्रों-राजाओं के करोड़ों मुकुटों की प्रभा से सुशोभित हो रहे हैं, जिन्होंने कर्म-रूपी वृक्ष को निर्मूल कर उखाड़ दिया है, ऐसे चन्द्रमा के समान शीतलता देने वाले जिनेन्द्रदेव अथवा चन्द्रप्रभ भगवान् को मैं भक्ति से प्रणाम करता हूँ।

Whose Lotus-Feet look lustrously conspicuous as the rays from the tens of millions of diadems of the lords of the three worlds kiss these and who has uprooted the tree in form of the karmas; I bow down, with devotion, before such Jinadeva, or Lord Candraprabha, who has soothing effect like the moon.

ईर्यापथशुद्धिः

(आर्या)

करचरणतनु विघातादटतो निहितः प्रमादतः प्राणी ।
ईर्यापथमिति भीत्या मुञ्चे तद्दोषहान्यर्थम् ॥१८॥

अर्थ - प्रमाद के वश गमन करते हुए मेरे हाथ, पैर अथवा शरीर के आघात से किसी प्राणी का हनन/घात हुआ है, इस भय से मैं उससे (प्राणीघात से) उत्पन्न दोषों की हानि के लिए ईर्यापथ को (अर्थात् गमन को) छोड़ता हूँ। (गमनकाल में लगे दोषों का पश्चाताप करता हूँ।)

Due to my walking with negligence *(pramāda)*, on being struck by my hands, feet or body, certain living-beings have been injured/killed. With this fear in mind, to avoid such faults, I renounce negligent walking *(īryā)*. (I am filled with remorse for my faults due to walking with negligence.)

ईर्यापथे प्रचलताऽद्य मया प्रमादा-
देकेन्द्रिय प्रमुख जीव निकायबाधा ।
निर्वर्तिता यदि भवेदयुगान्तरेक्षा
मिथ्या तदस्तु दुरितं गुरुभक्तितो मे ॥१९॥

अर्थ - यदि आज मेरे द्वारा मार्ग में चलते हुए प्रमाद के वश एकेन्द्रिय आदि जीवों के समूह को बाधा/पीड़ा दी गई हो, मैंने (चार-हाथ) भूमि के अन्तराल को न देखकर गमन किया हो (अर्थात् ईर्यासमिति का पालन न किया हो), तो मेरा वह पाप गुरुभक्ति से मिथ्या हो।

If today, due to my walking with negligence *(pramāda)* on the pathway, I have caused obstruction or injury to any living-beings, including the one-sensed beings, and have failed to observe carefulness in walking by way of inspecting the (four-hand) land ahead (called, *īryā-samiti*), let such evil deed of mine become ineffectual on the strength of my devotion to the Guru.

गद्य (Prose)

पडिक्कमामि भंते! इरिया-वहियाए, विराहणाए, अणागुत्ते, अइग्गमणे, णिग्गमणे, ठाणे, गमणे, चंकमणे, पाणुग्गमणे, बीजुग्गमणे, हरिदुग्गमणे, उच्चारपस्सवणखेल-सिंहाण-वियडियपइट्ठावणियाए, जे जीवा एइंदिया वा, बे इंदिया वा, ते इंदिया वा, चउरिंदिया वा, पंचिंदिया वा, णोल्लिदा वा, पेल्लिदा वा, संघट्टिदा वा, संघादिदा वा, उद्दाविदा वा, परिदाविदा वा, किरिंच्छिदा वा, लेस्सिदा वा, छिंदिदा वा, भिंदिदा वा, ठाणदो वा, ठाण-चंकमणदो वा, तस्स उत्तरगुणं, तस्स पायच्छित्त-करणं, तस्स विसोहिकरणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, णमोक्कारं, पज्जुवासं करेमि, ताव कालं, पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

अर्थ – हे भगवन्! ईर्यापथ में, मन-वचन-काय की गुप्ति-रहित होकर जो कुछ जीवों की विराधना की है उसका मैं प्रतिक्रमण करता हूँ- शीघ्र गमन करने में, चलने की क्रिया प्रारम्भ करने में, ठहरने में, गमन में, हाथ-पैर फैलाने या संकोच करने में, प्राणियों पर गमन करने में, बीज पर गमन करने में, हरितकाय पर गमन करने में, मल-मूत्र क्षेपण करने में, थूकने में, कफ डालने में, इत्यादि विकृतियों के क्षेपण में, जो एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय, जीव रोके गए हों, स्वस्थान से दूसरे स्थान पर रखे गए हों, एक दूसरे की रगड़ से पीड़ित हुए हों, समस्त जीव इकट्ठे एक जगह रखे गए हों, संतापित किये गए हों, चूर्ण किये गए हों, मूर्च्छित किये गए हों, टुकड़े-टुकड़े कर दिये गए हों, विदीर्ण कर दिये गए हों, अपने ही स्थान पर स्थित हों, गमन कर रहे हों, ऐसे जीवों की मुझ से जो कुछ विराधना हुई हो, उसका प्रायश्चित्त करने के लिए, उसकी शुद्धि के लिए, मैं प्रतिक्रमण करता हूँ। जब तक मैं अर्हन्त भगवन्तों को नमस्कार करता हूँ, उनकी उपासना करता हूँ, उतने काल तक अशुभ/पाप कर्मों को तथा अशुभ चेष्टाओं को छोड़ता हूँ।

O Lord! My repentance *(pratikramaṇa),* with the object of expiation of faults and exoneration, for any injury caused to the living-beings due to my movement without proper control *(gupti)* of my activities of the mind, the speech and the body. If I have injured any one-sensed, two-sensed, three-sensed, four-sensed, five-sensed beings, stationary or moving, due to my rapid motion, commencement of walking, stopping, walking, stretching or recoiling, traversing the land with living organism, seeds or vegetation, discharging excreta, saliva or phlegm, and disposal of waste-matter. Further, if I have impeded their movement, displaced, rubbed with one-another, made a heap of these, caused anguish, crushed these, made these unconscious, tore these into pieces, and ruptured these. So long as I salute and adore all the Supreme Lords *(Arhanta)*, I relinquish all evil and inauspicious deeds.

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

ॐ नमः परमात्मने नमोऽनेकान्ताय शान्तये ।

लोक के सर्व अर्हन्तों को नमस्कार हो, सिद्धों को नमस्कार हो,
आचार्यों को नमस्कार हो, उपाध्यायों को नमस्कार हो,
और साधुओं को नमस्कार हो।

(ॐ उच्चारण के साथ) शान्ति के लिए मेरा परमात्मा के लिए
नमस्कार हो तथा अनेकान्त के लिए नमस्कार हो।

My obeisance humble to all *Arhanta* (the embodied perfect souls), *Siddha* (the liberated souls), *Ācārya* (the masters of ascetics), *Upādhyāya* (the teachers of ascetics), and *Sādhu* (the ascetics) in the universe *(loka)*.

With utterance of *'Om'* (also, *'Aum'*) I salute, for tranquility, the Pure-Soul *(Paramātmā)*, and *Anekānta* (the manifold nature of all objects).

गद्य (Prose)

इच्छामि भंते! आलोचेउं इरियावहियस्स पुव्वुत्तर-दक्खिण-पच्छिम चउदिसु विदिसासु विहरमाणेण, जुगंतर दिट्ठिणा भव्वेण दट्ठव्वा। पमाददोसेण डवडवचरियाए पाण-भूद-जीव-सत्ताणं एदेसिं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

अर्थ - हे भगवन्! ईर्यापथ के दोषों की आलोचना करने की इच्छा करता हूँ। पूर्व-उत्तर-दक्षिण-पश्चिम चारों दिशाओं तथा विदिशाओं में विहार करते हुए मेरे द्वारा चार-हाथ प्रमाण भूमि पर दृष्टि रखते हुए भी, प्रमाद के वश से, जल्दी-जल्दी चलने से, विकलेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक, पञ्चेन्द्रिय व पृथिवी, जल, अग्नि और वायुकायिक जीवों का उपघात स्वयं किया हो, कराया हो या करते हुए की अनुमोदना की हो तो तत्संबन्धी मेरे दुष्कृत्य मिथ्या हों।

O Lord! I desire confession *(ālocanā)* for my faults due to walking, i.e., while moving around in the four main-directions *(diśā)* – east, north, south and west – and in the four intermediate-directions *(vidiśā)*. Although I

have observed carefulness by way of inspecting the four-hand land ahead, still due to negligence or due to rapid movement I may have by myself, by others or by approval caused injury to two-to-four-sensed beings, plant-bodied beings, five-sensed beings, and earth-bodoed, water-bodied, fire-bodied or air-bodied beings. May all my faults in this regard become ineffectual.

(शार्दूल विक्रीडितम्)

पापिष्ठेन दुरात्मना जडधिया मायाविना लोभिना,
रागद्वेषमलीमसेन मनसा दुष्कर्म यन्निर्मितम् ।
त्रैलोक्याधिपते! जिनेन्द्र! भवतः श्रीपाद मूलेऽधुना,
निन्दापूर्वमहं जहामि सततं निर्वर्तये कर्मणाम् ॥१॥

अर्थ – हे तीन लोक के अधिपति! हे जिनेन्द्रदेव! मुझ पापी, दुष्ट, मन्दबुद्धि ने, मायाचारी तथा लोभी ने, राग-द्वेष की कलुषता युक्त मलिन मन से, जो दुष्कर्म किये हैं अब आपके श्रीपाद-मूल में मैं उन कर्मों का क्षय करने के लिए उनकी सतत निन्दा करता हुआ छोड़ता हूँ।

O Lord of the three worlds! O Jinadeva! Being immoral, wicked, dumbhead, crafty and greedy, and with dirty mind soiled with attachment and aversion, I have committed many evil deeds. Now, I take shelter in your Lotus-Feet and to destroy the evil karmas, I constantly censure and renounce these.

जिनेन्द्रमुन्मूलित कर्मबन्धं प्रणम्य सन्मार्गकृत स्वरूपम् ।
अनन्तबोधादि भवंगुणौघं क्रियाकलापं प्रकटं प्रवक्ष्ये ॥२॥

अर्थ – जिन्होंने (चार घातिया कर्मरूप) कर्मबन्ध को जड़ से क्षय कर दिया है, समीचीन मुक्तिमार्ग के स्वरूप को प्रकट किया है, ऐसे अनन्तज्ञानादि गुणों को धारण करने वाले जिनेन्द्रदेव को नमस्कार करके मैं क्रियाकलाप को प्रकट-रूप कहता हूँ।

Bowing down before the Jinadeva who has uprooted the bondage of karmas (in form of inimical karmas), and has manifested the path to liberation, I describe directly the methodology.

॥ इति श्री अर्हद् भक्ति तथा ईर्यापथशुद्धि ॥

* * *

Note: "Installation in *Sāmāyika"* (सामायिक दण्डक) – p. 3 to 14, *ante* – to be read after the above devotion.

श्री सिद्ध भक्ति

Devotion to the Liberated Souls

(स्रग्धरा)

सिद्धानुद्धूत-कर्म-प्रकृति-
समुदयान् साधितात्मस्वभावान्,
वन्दे सिद्धि-प्रसिद्ध्यै तदनुपम-
गुण-प्रग्रहाकृष्टि-तुष्टः ।
सिद्धिः स्वात्मोपलब्धिः
प्रगुणगुण-गणोच्छादि-दोषापहाराद्,
योग्योपादान-युक्त्या दृषद्
इह यथा हेम-भावोपलब्धिः ॥१॥

अर्थ - (सिद्ध भगवान् के) उन अनुपम गुण रूपी रस्सी (जैसे रस्सी कूप में गिरी वस्तु को ऊपर लाने में सहायक होती है) के आकर्षण से संतुष्ट हुआ मैं (आचार्य पूज्यपाद) स्व आत्मा की सिद्धि के लिए आपकी वन्दना करता हूँ। सिद्ध भगवान् ने अष्ट कर्मों की प्रकृतियों के समूह को नष्ट कर दिया है और आत्मा के स्वभाव (अनन्त ज्ञान-दर्शन आदि) को प्राप्त कर लिया है। इस लोक में जिस प्रकार योग्य उपादान व निमित्त (अन्तरंग व बहिरंग कारण) की संयोजना से दृषद् अर्थात् स्वर्णपाषाण स्वर्ण पर्याय को प्राप्त होता है, उसी प्रकार श्रेष्ठतम गुणों के समूह को आवृत करने वाले (ज्ञानावरणादि) अथवा

दोषों (राग-द्वेष-मोह आदि) के क्षय हो जाने से अपने शुद्ध आत्म-स्वरूप की प्राप्ति हो जाना सिद्ध अवस्था कही गयी है।

Contented with the attractiveness of your unparalleled qualities, akin to the rope that pulls objects out of the well, in order to accomplish my soul-nature, I (*Ācārya* Pūjyapāda) make obeisance to the Liberated Soul (the *Siddha)*. The Liberated Soul has annihilated all species *(prakṛti)* of the eight kinds of karmas and attained pure soul's own-nature (comprising infinite-knowledge and perception, etc.). In this world, as on the availability of proper external causes the gold-rock *'svarṇapāṣāṇa'* – inherently having gold particles – turns into gold, similarly, on removal of obstructive causes (like knowledge-obscuring karmas) and destruction of faults (like attachment, aversion and delusion), the soul attains its own pure nature; and that is the state of liberation *(siddha)*.

नाभावः सिद्धिरिष्टा न
निजगुण-हतिस्तत् तपोभिर्न युक्तेः,
अस्त्यात्मानादि-बद्धः
स्वकृतज-फलभुक्-तत्क्षयान् मोक्षभागी ।
ज्ञाता दृष्टा स्वदेह-प्रमिति-
रुपसमाहार-विस्तार-धर्मा,

ध्रौव्योत्पत्ति-व्ययात्मा
स्वगुण-युत-इतो नान्यथा साध्यसिद्धिः ॥२॥

अर्थ - आत्मा का अभाव हो जाता है ऐसी सिद्धि इष्ट नहीं है। ज्ञान-दर्शन आदि स्व-गुणों का नष्ट हो जाना सिद्धि नहीं है। वह इसलिए क्योंकि आत्मा का अभाव और गुणों का नाश सिद्धि मानने वालों के यहाँ तपश्चरण आदि की योजना नहीं बनती। आत्मा है, अनादि काल से कर्मों से बद्ध है, अपने द्वारा किये गए शुभ-अशुभ कर्मों के फल का भोक्ता है, कर्मों का क्षय हो जाने से मुक्ति को प्राप्त होता है, ज्ञान-दर्शन स्वभाव वाला है, अपने शरीर प्रमाण है, संकोच-विस्तार स्वभाव वाला है, उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य रूप है, तथा अपने आत्मीय गुणों से सहित है। इससे भिन्न मान्यता वालों के यहाँ साध्य की सिद्धि नहीं हो सकती, मुक्ति की प्राप्ति नहीं हो सकती।

The soul *(ātmā)* gets destroyed; this conclusion is not acceptable. The argument of destruction of the soul's own-qualities, like knowledge and perception, is not sustainable. It is so because in case the soul and its qualities are accepted to be liable to destruction, efforts like observing austerities become futile. The soul is present; it is bound with karmas since beginningless time; it experiences fruits of its own karmas, auspicious and inauspicious; it attains liberation when all associated karmas are destroyed; its nature is knowledge and perception; it takes the size of the associated body; expansion and contraction are its nature; it undergoes (from the point-of-view of its mode) origination *(utpāda)*, destruction *(vyaya)* and

permanence *(dhrauvya)*; and it is one with its inherent qualities. The object-to-be-proved *(sādhya)* cannot be established by those who consider it otherwise.

स त्वन्तर्बाह्य-हेतु-प्रभव-
विमल-सद्दर्शन-ज्ञान-चर्या-
सम्पद्धेति-प्रघात-क्षत-
दुरिततया व्यञ्जिताचिन्त्य-सारैः ।
कैवल्यज्ञानदृष्टि-प्रवर-
सुख-महावीर्य सम्यक्त्वलब्धि-
ज्योतिर्वातायनादि-स्थिर-
परमगुणैरद्भुतैर्भासमानः ॥३॥

अर्थ – और वह आत्मा अन्तरंग-बहिरंग कारणों से उत्पन्न निर्मल सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र की प्राप्ति रूप शस्त्र के प्रबल प्रहार से पाप कर्मों के पूर्ण क्षय हो जाने से प्रकट हुए अचिन्त्य सार (फल) से युक्त केवलज्ञान, केवलदर्शन, अनन्तसुख, अनन्तवीर्य, क्षायिक सम्यक्त्व, क्षायिक दान, लाभ, भोग, उपभोग रूप नवलब्धियों, तथा भामण्डल, चामर, सिंहासन, छत्र आदि आश्चर्यकारी श्रेष्ठ गुणों से शोभायमान होता है।

And in that soul *(ātmā)*, due to the availability of proper internal and external causes, manifest pristine right-perception, right-knwledge and right-conduct; with the strong blow of this weapon, it (the soul) destroys

completely the inimical karmas. The unimaginable result is that the soul gets adorned with astonishing qualities that include the following: the nine destructional[1] *(kṣāyika)* attainments comprising infinite-knowledge *(kevalajñāna)*, infinite-perception *(kevaladarśana)*, infinite-happiness *(ananta-sukha)*, infinite-energy *(ananta-vīrya)*, perfect-belief *(kṣāyika-samyaktva)*, destructional *(kṣāyika)* gift *(dāna)*, gain *(lābha)*, enjoyment *(bhoga)* and re-enjoyment *(upabhoga)*, besides external splendors like the halo *(bhāmaṇḍala)* of unmatched luminance, majestic hand-fans *(cāmara)*, bejeweled throne *(siṃhāsana)*, and three-tier canopy *(chatra)*.

जानन् पश्यन् समस्तं
सममनुपरतं संप्रतृप्यन् वितन्वन्,
धुन्वन् ध्वान्तं नितान्तं
निचितमनुसभं[2] प्रीणयन्नीशभावम् ।
कुर्वन् सर्व-प्रजानामपरमभिभवन्
ज्योतिरात्मानमात्मा,

---

1. The word destructional *(kṣāyika)* refers to arising from destruction *(kṣāya)*, and not subsidence *(upaśama)*, of karmas. Destructional *(kṣāyika)* dispositions give rise to indestructible and perfect nine attainments, called the nine-accomplishments *(navalabdhi)*, in the soul.

2. पाठान्तर – 'निचितमनुपमं'

आत्मन्येवात्मनासौ क्षणमुपजनयन्-
सत्-स्वयम्भूः प्रवृत्तः ॥४॥

अर्थ - वे स्वयम्भू अर्हन्त परमात्मा एक-साथ (युगपत्) समस्त पदार्थों को जानते-देखते हुए, सतत (निरन्तर) आत्मीक सुख से तृप्त होते हुए, (ज्ञान को) सर्वलोक में विस्तृत करते हुए, अनादिकाल से संचित मोहरूपी अन्धकार को नष्ट करते हुए, समवसरण सभा में सबको सन्तुष्ट करते हुए, तीन लोक के समस्त प्राणियों (प्रजा) के ईश्वरत्व/स्वामीपने को करते हुए, अन्य (सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र आदि) की ज्योति को पराभूत (तिरस्कृत) करते हुए, और निश्चय से प्रतिक्षण अपनी आत्मा को अपनी आत्मा में ही आत्मा के द्वारा निमग्न करते हुए, समीचीन रूप में प्रवृत हुए थे।

The self-enlightened *(svayambhū)* Perfect-soul of the *Arhanta* knows and sees all objects simultaneously, it incessantly gets satiated with inherent soul-happiness, its knowledge encompasses the whole of universe and beyond, it destroys the beginningless darkness in form of delusion *(moha)*, it gratifies all present in the heavenly-pavilion *(samavasaraṇa)*, it acquires lordship over all living-beings of the three worlds, it subdues the brightness of all others (like the sun, the moon and the constellations of stars), and it (the soul) certainly remains engrossed, every instant, only in own-soul, through own-soul. This is the real absorption of the Perfect-soul of the *Arhanta*.

छिन्दन् शेषानशेषान्-निगल-
बल-कलींस्तैरनन्त-स्वभावैः,
सूक्ष्मत्वाग्र्यावगाहागुरुलघुक-
गुणैः क्षायिकैः शोभमानः ।
अन्यैश्चान्य-व्यपोह-प्रवण-
विषय-संप्राप्ति-लब्धि-प्रभावै-
रूर्ध्व-व्रज्या स्वभावात्
समयमुपगतो धाम्नि संतिष्ठतेऽग्र्ये ॥५॥

अर्थ – वे अर्हन्त परमात्मा शेष बची हुई समस्त बेड़ी के समान बलवान अघाति कर्म-प्रकृतियों को नष्ट (क्षय) करते हुए उस अनन्त-स्वभाव (सम्यग्दर्शनादि गुणों से युक्त) को धारण करने वाले होकर शोभायमान होते हैं। और अन्य कर्मों के अत्यन्त क्षय से उत्पन्न होने वाले सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व आदि गुणों से सुशोभित होते हैं एवं अन्य कर्म-प्रकृतियों के क्षय से प्रकट शुद्ध आत्मस्वरूप की प्राप्ति-रूप लब्धि के प्रभाव से शोभित होते हैं। पश्चात् आत्मा के ऊर्ध्वगमन स्वभाव से एक समय में ही लोक के अग्रभाग (सिद्धालय) में सम्यक् प्रकार से स्थित हो जाते हैं।

The Perfect-souls of the *Arhanta* destroy all the remaining non-destructive *(aghāti)* species of the karmas, strong like a shackle, and attain the lustrous status marked by the indestructible own-nature. On utter destruction of all the residual karmas, the Perfect-souls are adorned with the following eight supreme qualities:

1. *kṣāyika-samyaktva* – infinite faith or belief in the *tattva* or essential principles of Reality. It is manifested on destruction of the faith-deluding *(darśana mohanīya)* karma.
2. *kevalajñāna* – infinite knowledge, manifested on destruction of the knowledge-obscuring *(jñānāvaraṇīya)* karma.
3. *kevaladarśana* – infinite perception, manifested on destruction of the perception-obscuring *(darśanāvaraṇīya)* karma.
4. *anantavīrya* – literally, infinite power; it is the absence of fatigue in having knowledge of infinite substances. It is manifested on destruction of the obstructive *(antarāya)* karma.
5. *sūkṣmatva* – literally, fineness; it means that the liberated soul is beyond sense-perception and its knowledge of the substances is direct, without the use of the senses and the mind. It is manifested on destruction of the name-determining *(nāma)* karma.
6. *avagāhanatva* – inter-penetrability; it means that the liberated soul does not hinder the existence of other such souls in the same space. It is manifested on destruction of the life-determining *(āyuḥ)* karma.
7. *agurulaghutva* – literally, neither heavy nor

light. Due to this quality of *agurulaghutva*, the soul continues to manifest through its form, complete and perfect. This supreme quality is manifested on destruction of the status-determining *(gotra)* karma.

8. *avyābādha* – it is undisturbed, infinite bliss, manifested on destruction of the feeling-producing *(vedanīya)* karma.

Thenceforth, as per the upward-movement nature of such souls, these dart up, in one *'samaya'* (the smallest unit of empirical time), to the topmost part of the universe to remain there for eternity.

अन्याकाराप्ति-हेतुर्न च
भवति परो येन तेनाल्प-हीनः,
प्रागात्मोपात्त-देह-प्रति-
कृति-रुचिराकार एव ह्यमूर्तः ।
क्षुत्-तृष्णा-श्वास-कास-
ज्वर-मरण-जरानिष्टयोग-प्रमोह-
व्यापत्त्याद्युग्र-दुःख-प्रभव-
भवहतेः कोऽस्य सौख्यस्य माता ॥६॥

अर्थ – और जिस कारण से उन सिद्ध भगवन्तों के अन्य आकार की प्राप्ति का दूसरा कोई हेतु नहीं है, इसलिए वे किञ्चित् कम पूर्व में आत्मा के द्वारा ग्रहण

किये गए शरीर की प्रतिकृति (प्रतिबिम्ब) समान मनोहर आकार वाले ही होते हैं। तथा वह (आकार) निश्चय से अमूर्तिक होता है। भूख, प्यास, श्वास, खाँसी, ज्वर, मरण, बुढ़ापा, अनिष्ट संयोग, प्रकृष्ट-मूर्च्छा, विशेष-आपत्ति आदि उग्र दु:खों की उत्पत्ति का कारणभूत संसार का अभाव होने से इन सिद्ध भगवन्तों के सुख को जानने वाला कौन है? अर्थात् वह सुख अपरिमेय है।

The liberated souls assume the size and shape that is like the reflection, albeit marginally small, of the last body. One may argue that since the soul in transmigratory condition is of the extent of the body but as it is as extensive as the universe with regard to the space-points, in the absence of the body it should expand to the extent of the universe. But there is no cause for it. The expansion or contraction of the soul is determined by the body-making karma *(nāma karma)* and in its absence there is neither expansion nor contraction. The liberated souls, certainly, have no material body and as these are rid of the causes of grave worldly miseries like hunger, thirst, respiration, cough, fever, death, old-age, contact with disagreeable objects, bewilderment, and calamities, who in this world can realize their extreme bliss? Their bliss is ineffable.

आत्मोपादान-सिद्धं स्वयमतिशय-
वद्-वीतबाधं विशालम्,

वृद्धि-ह्रास-व्यपेतं
विषय-विरहितं निःप्रतिद्वन्द्व-भावम् ।
अन्यद्रव्यानपेक्षं निरुपममममितं
शाश्वतं सर्वकालम्,
उत्कृष्टानन्त-सारं परम-
सुखमतस्तस्य सिद्धस्य जातम् ॥७॥

अर्थ - इसलिए (दुःखों के अभाव से) उन सिद्ध-परमेष्ठी का श्रेष्ठ अनन्त सुख आत्मा की उपादान शक्ति से उत्पन्न हुआ है। वह सुख सहज/स्वयं अतिशयवान् है, बाधा रहित है, अत्यन्त विस्तीर्ण है, हीनाधिकता से रहित है, पञ्चेन्द्रिय विषयों से रहित है, प्रतिपक्षी भाव से रहित है, अन्य द्रव्यों की अपेक्षा से रहित है, उपमातीत है, प्रमाणातीत है, शाश्वत/अविनाशी है, सर्वकाल रहने वाला है, तथा उत्कृष्ट अनन्त-सार वाला होता है।

Rid of all worldly miseries, the infinite happiness of the Liberated-souls *(Siddha)* originates from the own soul, its substantive cause *(upādāna)*. Being born in the self, that happiness is natural, unsurpassed, without impediment, all-encompassing, rid of expansion and contraction, not based on the objects of the five senses, without resistance, independent of all externalities, unparalleled, immeasurable, permanent, forever-existing, and with extreme profoundness.

नार्थः क्षुत्-तृड्-विनाशाद्
विविध-रसयुतैरन्नपानैरशुच्या,
नास्पृष्टैर्गन्धमाल्यैर्नहि-
मृदु-शयनैर्ग्लानि-निद्राद्यभावात् ।
आतंकार्तेरभावे तदुपशमन-
सद्भेषजानर्थतावद्,
दीपानर्थक्यवद् वा
व्यपगत-तिमिरे दृश्यमाने समस्ते ॥८॥

अर्थ - (सिद्ध-परमेष्ठी भगवन्तों के) भूख-प्यास का नाश हो जाने से अनेक प्रकार के रसों से युक्त भोजन-पानी का कोई प्रयोजन नहीं है। अशुचिता/अपवित्रता से स्पर्श न होने से सुगंधित पुष्पमाला/गन्धमाला से कोई अर्थ नहीं है। थकावट, निद्रा आदि का अभाव होने से निश्चय से कोमल शय्या से भी कोई प्रयोजन नहीं है। (यह इस प्रकार समझाया है-) जिस प्रकार रोग-जनित पीड़ा का अभाव होने पर उसे शमन/शान्त करने वाली उत्तम औषधि अप्रयोजन ही है, अथवा अन्धकार-रहित स्थान जहाँ समस्त पदार्थ दिखाई देते हों दीपक भी निरर्थक है।

As the Liberated-souls *(Siddha)* are rid of hunger or thirst, a variety of juicy and toothsome food is unavailing. As they are untouched by impurities, fragrant garlands are meaningless. As they are rid of exhaustion and sleep, cosy bed, too, is worthless. This has been explained further: For a person not experiencing pain of ailment, most potent medication

is of no avail; and in a well-illumined place, rid of darkness, lighting a lamp is useless.

तादृक्-सम्पत्-समेता
विविध-नय-तपः-संयम-ज्ञान-दृष्टि-
चर्या-सिद्धाः समन्तात्
प्रवितत्-यशसो विश्व-देवाधिदेवाः ।
भूता भव्या भवन्तः
सकल-जगति ये स्तूयमाना विशिष्टै-
स्तान् सर्वान् नौम्यनन्तान्
निजिगमिषुररं तत्स्वरूपं त्रिसन्ध्यम् ॥९॥

अर्थ - जो उपर्युक्त सम्पत्ति से सहित हैं, जो विविध (अनेक प्रकार के) नय, तप, संयम, ज्ञान, दर्शन/सम्यक्त्व, और चारित्र से सिद्ध अवस्था को प्राप्त हुए हैं, जिनका यश चारों दिशाओं में व्याप्त है, जो विश्व के सब देवों में प्रधान अर्थात् देवाधिदेव हैं, समस्त संसार में जो विशिष्ट महापुरुषों (तीर्थंकर आदि) से स्तुति को प्राप्त हैं, ऐसे भूतकाल में जो हो गये हैं, भविष्य में जो होने योग्य हैं और वर्तमान में जो हो रहे हैं, उन समस्त अनन्त सिद्धों को उनके स्वरूप को शीघ्र ही प्राप्त करने का इच्छुक मैं प्रातः-मध्याह्न-सायं तीनों संध्याओं में नमस्कार करता हूँ।

With a wish to speedily attain their nature, I make obeisance, during the three junctures (morning, noon and evening) of the day, to the infinite Liberated-souls

(Siddha) possessing the aforesaid qualities. I worship all the Liberated-souls *(Siddha)* – who have attained the status in the past, are going to attain it in the future, and are attaining it in the present. They have accomplished this supreme state of liberation through appreciation of multifaceted viewpoints *(naya)*, self-restraint, right knowledge, right faith and belief, and right conduct. Their glory pervades all four directions; they are the Lord-of-the-lords *(devādhideva)*. They are adored by the most exceptional personages including the Ford-makers *(Tīrthaṅkara)*.

क्षेपक श्लोक (Concluding Verse)

कृत्वा कायोत्सर्गं चतुरष्टदोष विरहितं सु परिशुद्धं ।
अतिभक्ति संप्रयुक्तो यो वन्दते सो लघु लभते परम सुखम् ॥

अर्थ - जो जीव अत्यन्त भक्तिपूर्वक, बत्तीस दोषों से रहित हो, अत्यन्त निर्मल/विशुद्ध कायोत्सर्ग करके वन्दना करता है, वह शीघ्र ही परम-सुख (मुक्ति-सुख) को प्राप्त होता है।

The man who, with extreme devotion, free from the thirty-two faults, and with pristine detachment-to-own-body *(kāyotsarga)*, performs adoration attains speedily the Supreme Bliss of Liberation.

अञ्चलिका (Submission)

गद्य (Prose)

इच्छामि भंते! सिद्धभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। सम्मणाण-सम्मदंसण सम्मचरित्तजुत्ताणं, अट्ठविहकम्म-विप्पमुक्काणं, अट्ठगुण-संपण्णाणं, उड्ढलोयमत्थयम्मि पइट्ठियाणं, तवसिद्धाणं, णयसिद्धाणं, संजमसिद्धाणं, चरित्तसिद्धाणं, अतीताणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं, सया णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

अर्थ – हे भगवन्! सिद्धभक्ति करके जो कायोत्सर्ग किया उसमें लगे दोषों की आलोचना करने की मैं इच्छा करता हूँ। जो सिद्ध भगवान् सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन और सम्यक्चारित्र से युक्त हैं, आठ प्रकार के कर्मों से रहित हैं, आठ गुणों से सम्पन्न हैं, ऊर्ध्वलोक के मस्तक पर विराजमान हैं, तप सिद्धों को, नय सिद्धों को, संयम सिद्धों को, चारित्र सिद्धों को, भूत-भविष्य-वर्तमान तीनों कालों में होने वाले सिद्धों को, समस्त सिद्ध-परमात्माओं को, सदा-काल मैं अर्चा करता हूँ, पूजा करता हूँ, वन्दना करता हूँ, नमस्कार करता हूँ। मेरे दु:खों का क्षय हो, कर्मों का क्षय हो, बोधि (रत्नत्रय) की प्राप्ति हो, उत्तम गति में गमन हो, समाधिमरण हो, तथा जिनेन्द्रदेव के गुणों की सम्पत्ति मुझे प्राप्त हो।

O Lord! I have performed devotion to the Liberated-souls *(Siddha)* observing detachment-to-own-body *(kāyotsarga)*. I now desire confession *(ālocanā)* for faults therein. The Liberated-souls *(Siddha)* are full of right knowledge, faith and conduct; they are rid of eight kinds of karmas; they possess eight supreme

qualities; and they have their abode at the top of the upper-universe. Incessantly, I adore, worship, make obeisance, and salute all the Liberated-souls *(Siddha)* – those who have attained this supreme status through austerities *(tapa)*, through appreciation of multi-faceted viewpoints *(naya)*, through self-restraint *(saṃyama)*, and through conduct *(cāritra);* those who have attained this supreme status in the past, are going to attain it in the future, and are presently attaining it. May my miseries be obliterated; may my karmas be destroyed; may I attain the trio of right faith-knowledge-conduct *(bodhi, ratnatraya)*; may I attain a superior state-of-existence *(gati)*; may I embrace, at the end of my life, a pious and dispassionate-death *(samādhimaraṇa)*; and may I attain the wealth of the qualities appertaining to Lord Jina!

॥ इति श्री सिद्ध भक्ति ॥

* * *

This preview does not contain pages 51 to 100.

The fruit of my adoration, in the above manner, of all forms of knowledge, the eyes to see the three worlds, may soon be bestowed on me; this fruit comprises extraordinary knowledge-accomplishment *(ṛddhi)* that finally gives rise to the eternal bliss of liberation.

अञ्चलिका (Submission)

गद्य (Prose)

इच्छामि भंते! सुदभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। अंगोवंगपइण्णए पाहुडय-परियम्म-सुत्त-पढमाणिओग-पुव्वगय-चूलिया चेव सुत्तत्थय-थुइ-धम्मकहाइयं णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

अर्थ – हे भगवन्! मैंने श्रुतभक्ति संबन्धी कायोत्सर्ग किया। उसमें लगे दोषों की आलोचना करने की मैं इच्छा करता हूँ। श्रुतज्ञान के जो अंग और उपांग, प्रकीर्णक, प्राभृत, परिकर्म, सूत्र, प्रथमानुयोग, पूर्वगत, चूलिका, सूत्रार्थ, स्तुति, धर्मकथा आदि हैं उन सबकी मैं सदा-काल अर्चा करता हूँ, पूजा करता हूँ, वन्दना करता हूँ, नमस्कार करता हूँ। मेरे दु:खों का क्षय हो, कर्मों का क्षय हो, मुझे बोधि (रत्नत्रय) की प्राप्ति हो, उत्तम गति में गमन हो, समाधिमरण हो, तथा जिनेन्द्रदेव के गुणों की सम्पत्ति मुझे प्राप्त हो।

O Lord! I have performed devotion to the Scripture *(śruta)* with detachment-to-own-body *(kāyotsarga)*. I

now desire confession *(ālocanā)* for faults therein. I adore, worship, make obeisance, and salute all classes of the scriptural-knowledge *(śrutajñāna)*, including *aṅga, upāṅga, prakīrṇaka, prābhṛta, parikarma, sūtra, prathamānuyoga, pūrvagata, cūlikā, sūtrārtha, stuti* and *dharmakathā*, incessantly. May my miseries be obliterated; may my karmas be destroyed; may I attain the trio of right faith-knowledge-conduct *(bodhi, ratnatraya)*; may I attain a superior state-of-existence *(gati)*; may I embrace, at the end of my life, a pious and dispassionate-death *(samādhimaraṇa)*; and may I attain the wealth of the qualities appertaining to Lord Jina!

॥ इति श्री श्रुत भक्ति ॥

* * *

श्री चारित्र भक्ति

Devotion to the Conduct

(शार्दूल विक्रीडितम्)

येनेन्द्रान् भुवनत्रयस्य विलसत्केयूर-हारांगदान्,
भास्वन्-मौलि-मणिप्रभा-प्रविसरोत्तुंगोत्तमांगान्नतान् ।
स्वेषां पाद-पयोरुहेषु मुनयश्चक्रुः प्रकामं सदा,
वन्दे पञ्चतयं तमद्य निगदन्नाचारमभ्यर्चितम् ॥१॥

अर्थ - शोभायमान हो रहे हैं केयूर, हार, बाजूबंद आदि आभूषण जिनके, देदीप्यमान मुकुट की मणियों की कान्ति के विस्तार से बहुत ऊँचे दिखाई देते हैं मस्तक जिनके, ऐसे तीनों लोकों के समस्त इन्द्रों को जिन मुनियों ने अपने चरण-कमलों में जिस पञ्चाचार के प्रभाव से सदा नम्रीभूत किया है, ऐसे अत्यन्त पूज्य उन पाँच-भेद वाले (ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार, वीर्याचार) पञ्चाचारों का कथन करने की इच्छा करता हुआ मैं (आचार्य पूज्यपाद) आज बड़ी भक्ति से उन्हें (पञ्चाचारों को) नमस्कार करता हूँ।

Owing to the effect of the fivefold-observances *(pañcācāra)* the ascetics *(muni)* have subjugated, in their Lotus-Feet, all the lords of the three worlds – with bodies adorned with ornaments like bracelet, necklace and armlet, and stature elevated due to the expanse of the glow of gems in their resplendent diadems. I

(*Ācārya* Pūjyapāda), with great devotion, bow down before these fivefold-observances *(paṅcācāra)* – in regard to knowledge *(jñānācāra)*, faith *(darśanācāra)*, conduct *(cāritrācāra)*, austerities *(tapācāra)* and strength *(vīryācāra)* – the hallmarks of the ascetics. I shall describe these now.

अर्थ-व्यञ्जन-तद्द्वयाविकलता-कालोपधा-प्रश्रयाः,
स्वाचार्याद्यनपह्नवो बहुमतिश्चेत्यष्टधा व्याहृतम् ।
श्रीमज्ज्ञाति-कुलेन्दुना भगवता तीर्थस्य कर्त्राऽञ्जसा,
ज्ञानाचारमहं त्रिधा प्रणिपताम्युद्धूतये कर्मणाम् ॥२॥

अर्थ – अन्तरंग और बहिरंग लक्ष्मी के स्वामी, ज्ञातृवंश (जाति व कुल) के चन्द्रमास्वरूप, धर्मतीर्थ के कर्ता भगवान् महावीर स्वामी के द्वारा आठ प्रकार से कहे गये – 1) अर्थ अविकलता, 2) व्यञ्जन अविकलता, 3) अर्थ व व्यञ्जन अविकलता, 4) काल शुद्धि, 5) उपधान शुद्धि, 6) विनय शुद्धि, 7) अपने आचार्य आदि का नाम न छिपाना, और 8) बहुमान – ज्ञानाचार को मैं कर्मों का क्षय करने के लिए, मन-वचन-काय से, सम्यक् प्रकार से नमस्कार करता हूँ।

Endowed with internal as well as external splendors, like the moon to illumine the lineage, and the Ford-maker *(Tīrthaṅkara),* Lord Mahāvīra has expounded that the observance in regard to knowledge *(jñānācāra)* has eight limbs: 1) correct assimilation of the meaning, 2) correct pronunciation of the letters,

words, and phrases, 3) understanding correct meaning as well as correct reading, 4) observance of the propriety of time, 5) studying with some special vow, 6) studying with due modesty, 7) no concealment of the source of knowledge, and 8) reverence for the Scripture and the Teacher. With the object of destroying all my karmas, I bow down – with my mind, speech and body – before such observance in regard to knowledge *(jñānācāra)*.

शंका-दृष्टि-विमोह-काङ्क्षणविधि-व्यावृत्ति-सन्नद्धताम्,
वात्सल्यं विचिकित्सनादुपरतिं धर्मोपबृंह-क्रियाम् ।
शक्त्या शासनदीपनं हितपथाद् भ्रष्टस्य संस्थापनम्,
वन्दे दर्शनगोचरं सुचरितं मूर्ध्ना नमन्नादरात् ॥३॥

अर्थ - दर्शनाचार- 1) शंका का त्याग करने में तत्परता, 2) दृष्टि-विमोह अर्थात् मूढ़-दृष्टि के त्याग करने में तत्परता, 3) निःकांक्षित अर्थात् भोगकांक्षा के त्याग करने में तत्परता, 4) रत्नत्रय धारकों में वात्सल्य, 5) ग्लानि अर्थात् विचिकित्सा से दूर होना, 6) धर्म की वृद्धि की क्रिया करना, 7) शक्ति अनुसार जिनशासन की प्रभावना करना, तथा 8) जिनशासन से भ्रष्ट हुए व्यक्ति को पुनः सम्यक् प्रकार से मार्ग में स्थिर करना। इस प्रकार सम्यग्दर्शन विषयक उत्तम आचार को मैं आदरपूर्वक सिर से नमस्कार करता हूँ।

The observance in regard to faith *(darśanācāra)* has eight limbs: 1) freedom from doubt *(niḥśaṅkita)*, 2)

freedom from superstitions *(amūḍhadṛṣṭi),* 3) freedom from worldly desires *(niḥkāṅkṣita),* 4) joy and affection towards the right path and its followers *(vātsalya),* 5) freedom from revulsion *(nirvicikitsā),* 6) charitable forbearance and concealment of defects in others *(upagūhana),* 7) propagation of the true path *(prabhāvanā),* 8) ensuring steadfastness of right faith and conduct so as not to swerve from the path to liberation *(sthitikaraṇa).* I bow my head with reverence before such excellent observance in regard to faith *(darśanācāra).*

एकान्ते शयनोपवेशनकृतिः सन्तापनं तानवम्,
संख्यावृत्तिनिबन्धनामनशनं विष्वाणमर्द्धोदरम् ।
त्यागं चेन्द्रिय-दन्तिनो मदयतः स्वादो रसस्यानिशम्,
षोढा बाह्यमहं स्तुवे शिवगति-प्राप्त्यभ्युपायं तपः ॥४॥

अर्थ - बहिरंग तप- मोक्षगति की प्राप्ति के उपायभूत 1) एकान्त स्थान में शयन-आसन करना अर्थात् विविक्तशय्यासन, 2) शरीर को संतापित करना अर्थात् कायक्लेश, 3) चर्या में कारणभूत संख्या को नियमित करना अर्थात् वृत्तिपरिसंख्यान, 4) उपवास करना अर्थात् अनशन, 5) अर्द्ध-पेट आहार करना अर्थात् अवमौदर्य, 6) इन्द्रियरूपी हाथी को मद उत्पन्न करने वाले रसों का सदा के लिए त्याग करना अर्थात् रसपरित्याग, ये छह प्रकार के बहिरंग तप हैं। मैं इनकी स्तुति करता हूँ।

The observances in regard to the six kinds of external-austerities *(bahiraṅga tapa)* are: 1) lonely habitation – *viviktaśayyāsana*, 2) mortification of the body – *kāyakleśa*, 3) quantitative restrictions for begging food – *vṛttiparisaṃkhyāna*, 4) fasting – *anaśana*, 5) eating less than full stomach or reduced diet – *avamaudarya*, and 6) giving up stimulating and delicious food that inebriates the sense-elephant – *rasaparityāga*. I adore these external-austerities *(bahiraṅga tapa)*.

स्वाध्यायः शुभकर्मणश्च्युतवतः संप्रत्यवस्थापनम्,
ध्यानं व्यापृतिरामयाविनि गुरौ वृद्धे च बाले यतौ ।
कायोत्सर्जन सत्क्रिया विनय इत्येवं तपः षड्विधं,
वन्देऽभ्यन्तरमन्तरंग बलवद्विद्वेषि विध्वंसनम् ॥५॥

अर्थ – अन्तरंग तप– 1) स्वाध्याय करना, 2) शुभ क्रियाओं से च्युत होने वाले अपने आप को पुनः सम्यक् प्रकार से स्थिर करना अर्थात् प्रायश्चित्त, 3) अपने मन को एकाग्रचित्त करना अर्थात् ध्यान, 4) रोगी गुरु, वृद्ध और अल्पवय (बालक अवस्था) वाले मुनियों के विषय में सेवा करना अर्थात् वैयावृत्त्य, 5) शरीर से ममत्व का त्याग कर देना अर्थात् कायोत्सर्ग, तथा 6) विनय धारण करना। इस प्रकार अन्तरंग तप के छह भेद हैं। ये अन्तरंग तप अत्यन्त बलवान ऐसे क्रोधादिक शत्रुओं का नाश करने वाले हैं। मैं इनको भक्ति के साथ नमस्कार करता हूँ।

The internal-austerities *(antaraṅga tapa)* are: 1) study

(of the Scripture) is *svādhyāya*, 2) re-establishing self in right activities when led astray is expiation *(prāyaścitta)*, 3) checking the rambling of the mind is meditation *(dhyāna)*, 4) rendering help to the ailing guru, elderly or youngster saints is service – *vaiyāvṛttya*, 5) giving up infatuation for the body is *kāyotsarga,* and 6) veneration (of four kinds) is *vinaya*. Thus, the internal-austerities are of six kinds. These cause destruction of the extremely strong enemies, like anger. I bow down, with devotion, before these internal-austerities.

सम्यग्ज्ञान विलोचनस्य दधतः श्रद्धानमर्हन्मते,
वीर्यस्याविनिगूहनेन तपसि स्वस्य प्रयत्नाद्यतेः ।
या वृत्तिस्तरणीव नौरविवरा लघ्वी भवोदन्वतो,
वीर्याचारमहं तमूर्जितगुणं वन्दे सतामर्चितम् ॥६॥

अर्थ – सम्यग्ज्ञान रूपी नेत्र से युक्त तथा अर्हन्तदेव के मत/शासन में श्रद्धान रखने वाले मुनि के अपनी शक्ति को नहीं छिपाने से, प्रयत्नपूर्वक (बारह प्रकार के) तप के सम्बन्ध में जो प्रवृत्ति है वह छिद्र-रहित छोटी नौका के समान संसार-सागर से पार कराने वाली नौका है, यही वीर्याचार है। प्रबल गुणों से सहित, सज्जनों के पूज्य, उस वीर्याचार को मैं नमस्कार करता हूँ।

The enterprise of the ascetic *(muni)*, equipped with the eye of right-knowledge *(samyagjñāna)* and faith in the

Doctrine of Lord *Arhanta*, in regard to observance of the (twelve kinds) of austerities *(tapa)* is the small boat that can help him cross the ocean of worldly-existence. This is the observance in regard to strength *(vīryācāra)*. I adore this observance that has robust qualities and is worshipped by the nobility.

तिस्रः सत्तमगुप्तयस्तनुमनो भाषानिमित्तोदयाः,
पञ्चेर्यादि-समाश्रयाः समितयः पञ्चव्रतानीत्यपि ।
चारित्रोपहितं त्रयोदशतयं पूर्वं न दृष्टं परै-
राचारं परमेष्ठिनो जिनपतेर्वीरं नमामो वयम् ॥७॥

अर्थ – शरीर, मन और वचन के निमित्त उदय होने वाली तीन श्रेष्ठ गुप्तियाँ[1], ईर्यागमन आदि के आश्रय से होने वाली पाँच समितियाँ[2] और अहिंसा आदि पाँच महाव्रत[3], इस प्रकार तेरह प्रकार का चारित्राचार है, जो परमपद में स्थित महावीर जिनेश्वर से पूर्व अन्य तीर्थंकरों (भगवान् ऋषभदेव के सिवाय अन्य बाईस तीर्थंकरों) के द्वारा नहीं निरूपित किया गया है। ऐसे चारित्राचार को हम नमस्कार करते हैं।

The thirteenfold observance of conduct *(cāritrācāra)* is described now. The three kinds of *gupti* are controlling

---

1. आ. उमास्वामी 'तत्त्वार्थसूत्र', सूत्र 9 : 4 – **'सम्यग्योगनिग्रहो गुप्तिः।'**
2. आ. उमास्वामी 'तत्त्वार्थसूत्र', सूत्र 9 : 5 – **'ईर्याभाषैषणादाननिक्षेपोत्सर्गाः समितयः।'**
3. आ. उमास्वामी 'तत्त्वार्थसूत्र', सूत्र 7 : 1 – **'हिंसाऽनृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम्।'**

or curbing well the activities *(yoga)* of the body *(kāya)*, the mind *(mana)* and the speech *(vacana)*; the five kinds of *samiti* are regulation of activities pertaining to walking (*īryā),* speaking *(bhāṣā*), eating *(eṣaṇā)*, lifting-and-laying-down *(ādānanikṣepa*), and discarding-waste-products *(utsarga)*; the five kinds of *mahāvrata* are desisting from injury *(hiṃsā)*, falsehood *(anṛta)*, stealing *(steya)*, unchastity *(abrahma)* and attachment-to-possessions *(parigraha)*. This thirteenfold observance of conduct *(cāritrācāra)* has not been expounded by the Supreme Lords *(Tīrthaṅkara)* other than Lord Mahāvīra (and, the first *Tīrthaṅkara,* Lord Ādinātha). We bow down before such observance of conduct *(cāritrācāra).*

आचारं सहपञ्चभेदमुदितं तीर्थं परं मंगलम्,
निर्ग्रन्थानपि सच्चरित्रमहतो वन्दे समग्रान्यतीन् ।
आत्माधीन सुखोदयामनुपमां लक्ष्मीमविध्वंसिनीम्,
इच्छन्केवलदर्शनावगमन प्राज्य प्रकाशोज्वलाम् ॥८॥

अर्थ – आत्माश्रित सुख के उदय से सहित, उपमारहित, केवलदर्शन और केवलज्ञान रूप उत्कृष्ट प्रकाश से उज्ज्वल, अविनाशी मोक्षलक्ष्मी की इच्छा करता हुआ मैं उत्कृष्ट तीर्थ तथा मंगलरूप कहे गये, पाँच भेदों से सहित आचार की वन्दना करता हूँ। साथ ही इन पञ्चाचारों को धारण करने वाले सम्यक् चारित्र से महान्, सम्पूर्ण परिग्रह से रहित मुनियों को भी नमस्कार करता हूँ।

That which gives rise to bliss that is dependent solely on the soul, that which is without a parallel, that which is illumined by bright rays of infinite-knowledge *(kevalajñāna)* and infinite-perception *(kevala-darśana)*, that which has been termed the most pious place-of-pilgrimage *(tīrtha)* and the most propitious object, that which is said to be of five kinds; I worship those fivefold-observances *(pañcācāra)* for attainment of the eternal splendor of liberation. Further, I worship all ascetics, great in respect of conduct *(cāritra)* and rid of all attachment *(parigraha)*, who adopt such fivefold-observances *(pañcācāra)*.

अज्ञानाद्यदवीवृतं नियमिनोऽवर्तिष्यहं चान्यथा,
तस्मिन्नर्जितमस्यति प्रतिनवं चैनो निराकुर्वति ।
वृत्ते सप्ततयीं निधिं सुतपसामृद्धिं नयत्यद्भुतं,
तन्मिथ्या गुरुदुष्कृतं भवतु मे स्वंनिंदितो निंदितम् ॥९॥

अर्थ – मैंने अज्ञान से मुनियों को जो अन्यथा, अर्थात् आगम के प्रतिकूल, प्रवर्तन कराया हो, अथवा स्वयं मैंने आगम के प्रतिकूल प्रवर्तन किया हो, उसमें पापों को जो संचित किया हो और प्रतिक्षण नवीन बंधने वाले ऐसे सब पापों को इस श्रेष्ठ चारित्र के पालन से नष्ट किया जाता है। इसके अलावा इस चारित्र के प्रभाव से श्रेष्ठ तपस्वियों को आश्चर्यकारी निधिरूप सात प्रकार की ऋद्धियाँ (बुद्धि ऋद्धि, तप ऋद्धि, विक्रिया ऋद्धि, औषधि ऋद्धि, रस ऋद्धि, बल ऋद्धि और अक्षीण ऋद्धि) प्राप्त होती हैं। ऐसे इस चारित्र के पालन करने में

मुझ से जो अन्यथा प्रवृत्ति हुई है, निन्दा के पात्र, अपने-आप की निन्दा करने वाले, मेरे वे भारी पाप मिथ्या हों।

If, out of ignorance, I have prompted any ascetics *(muni)* to act in contravention of the tenets expounded by the Doctrine, or if I myself have engaged in such a contravention, the observance of the great conduct [consisting of the fivefold-observances *(pañcācāra)*] has the power to destroy all accumulated evil karmas and also to stop the influx of fresh karmas. Besides, excellent ascetics acquire seven most extraordinary accomplishments *(ṛddhi)*[1] as a result of such conduct. I am the subject of censure for all my transgressions. I censure myself and may all my grave faults become ineffectual.

संसारव्यसनाहति-प्रचलिता नित्योदय प्रार्थिनः,
प्रत्यासन्न विमुक्तयः सुमतयः शान्तैनसः प्राणिनः ।
मोक्षस्यैव कृतं विशालमतुलं सोपानमुच्चैस्तराम्,
आरोहन्तु चरित्रमुत्तममिदं जैनेन्द्रमोजस्विनः ॥१०॥

अर्थ - जो संसार के कष्टों/दुःखों के प्रहार से भयभीत हैं, निरन्तर/शाश्वत रहने वाली मोक्षलक्ष्मी के प्राप्त होने की प्रार्थना करते हैं, जो आसन्न-भव्य हैं अर्थात्

1. The seven most extraordinary accomplishments *(ṛddhi)* are: 1) *buddhi ṛddhi,* 2) *tapa ṛddhi,* 3) *vikriyā ṛddhi,* 4) *auṣadhi ṛddhi,* 5) *rasa ṛddhi,* 6) *bala ṛddhi,* and 7) *akṣīṇa ṛddhi.*

मोक्षलक्ष्मी जिनके समीप आ पहुँची है, जिनकी बुद्धि मोक्षमार्ग अर्थात् रत्नत्रय में लगी होने से उत्तम है, जिनके पापकर्मों का उदय शान्त हो गया है, जो तेजस्वी अर्थात् महाप्रतापी हैं, ऐसे भव्यजीव, ऊपर कहे हुए, श्री जिनेन्द्रदेव द्वारा मोक्ष के लिए ही निरूपण किये हुए, अत्यन्त विस्तार को प्राप्त, अनुपम, उन्नत सीढ़ीरूप, इस उत्तम चारित्र पर आरोहण करें, अर्थात् इसे धारण करें।

Those who are afraid of the assaults in form of worldly sufferings; those who long for the splendor of liberation that persists forever; those who are destined to attain liberation in a short time; those whose intellect, being engaged in the path to liberation or the Three-Jewels *(ratnatraya)*, is stellar; those whose fruition of evil-karmas has subsided; and those who have great vigour; such worthy *(bhavya)* souls must ascend the aforesaid excellent conduct [comprising the fivefold-observances *(pañcācāra)*] that is expansive, unparalleled, like a towering ladder, and has been expounded, for the benefit of those seeking liberation, by Lord Jina.

अञ्चलिका (Submission)

गद्य (Prose)

इच्छामि भंते! चारित्तभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्स आलोचेउं। सम्माणाणजोयस्स सम्मत्ताहिट्ठियस्स सव्वपहाणस्स णिव्वाणमग्गस्स कम्मणिज्जरफलस्स खमाहारस्स पञ्चमहव्वयसंपण्णस्स तिगुत्तिगुत्तस्स

पञ्चसमिदिजुत्तस्स णाणज्झाण-साहणस्स समया इव पवेसयस्स सम्मचारित्तस्स णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

अर्थ - हे भगवन्! मैंने चारित्र-भक्ति सम्बन्धी कायोत्सर्ग किया। उसमें लगे दोषों की आलोचना करने की मैं इच्छा करता हूँ। जो सम्यग्ज्ञान रूप उद्योत/प्रकाश से सहित है, सम्यग्दर्शन से अधिष्ठित है, सब में प्रधान है, निर्वाण का मार्ग है, कर्मों की निर्जरा ही जिसका फल है, क्षमा जिसका आधार है, पाँच महाव्रतों से सुशोभित है, तीन गुप्तियों से रक्षित है, पाँच समितियों से युक्त है, ज्ञान और ध्यान का मुख्य साधन है, समता का प्रवेश जिसके अन्तर्गत है, ऐसे सम्यक्चारित्र की मैं सदा-काल अर्चा करता हूँ, पूजा करता हूँ, वन्दना करता हूँ, नमस्कार करता हूँ। मेरे दुःखों का क्षय हो, कर्मों का क्षय हो, मुझे बोधि (रत्नत्रय) की प्राप्ति हो, उत्तम गति में गमन हो, समाधिमरण हो, तथा जिनेन्द्रदेव के गुणों की सम्पत्ति मुझे प्राप्त हो।

O Lord! I have performed devotion to the conduct *(cāritra)* with detachment-to-own-body *(kāyotsarga)*. I now desire confession *(ālocanā)* for faults therein. The conduct *(cāritra)* that is illumined by the light of right-knowledge *(samyagjñāna)*, based on right-perception *(samyagdarśana),* foremost among the virtues, that constitutes the path to liberation, shedding of the karmas is whose fruit, forbearance is whose foundation, that is adorned by the five major-vows *(mahāvrata)*, fortified with the three controls *(gupti)*, accompanied by the five regulations *(samiti)*, the main

tool for knowledge-acquisition and meditation, and the doorway to equanimity *(samatā)*; I incessantly adore, worship, make obeisance, and salute such right-conduct *(samyakcāritra)*. May my miseries be obliterated; may my karmas be destroyed; may I attain the trio of right faith-knowledge-conduct *(bodhi, ratnatraya)*; may I attain a superior state-of-existence *(gati)*; may I embrace, at the end of my life, a pious and dispassionate-death *(samādhimaraṇa)*; and may I attain the wealth of the qualities appertaining to Lord Jina!

॥ इति श्री चारित्र भक्ति ॥

* * *

श्री योगि भक्ति

Devotion to the Adept-Ascetics

(दुबई)

जातिजरोरुरोग मरणातुर शोक सहस्त्रदीपिताः,
दुःसहनरकपतन सन्त्रस्तधियः प्रतिबुद्धचेतसः ।
जीवितमंबु-बिन्दुचपलं तडिदभ्रसमा विभूतयः,
सकलमिदं-विचिन्त्यमुनयः प्रशमाय-वनान्तमाश्रिताः ॥१॥

अर्थ - जो मुनिराज जन्म, बुढ़ापा, दुःसह हजारों रोगों और मरण से दुःखी हैं, जो वियोगजनित संताप से अत्यन्त जाज्वल्यमान हो रहे हैं, नरक-पतन की असह्य पीड़ा से जिनकी बुद्धि भयभीत हो रही है, जिनके हृदय में हेय-उपादेय का विवेक जागृत हो रहा है, ऐसे मुनि इस जीवन को पानी की बूंद के समान अत्यन्त चंचल तथा संसार की समस्त विभूतियों को बिजली व मेघ के समान क्षणभंगुर, यह सब विचार कर आत्मिक शान्ति अथवा प्रशमभाव के लिए वन का आश्रय लेते हैं, अर्थात् वन में चले जाते हैं।

The Adept-Ascetics are grieved by birth, old-age, thousands of grave ailments, and death; they are scorched by the agony of separation; their minds are fearful of the unbearable pain that those who fall into the hells have to suffer; and the sense of discrimination between what is worth discarding and accepting has

arisen in their hearts. Such ascetics consider life highly unsteady like the water-bubble, and all splendors in the world momentary like the lightning and the clouds. Filled with such thoughts and to attain tranquility or freedom-from-passions *(praśama)* they go away to the woods.

(भद्रिका)

व्रतसमिति गुप्ति संयुताः शमसुखमाधाय मनसि वीतमोहाः ।
ध्यानाध्ययनवशंगताः विशुद्धये कर्मणां तपश्चरन्ति ॥२॥

अर्थ – जो मुनिराज (पाँच) महाव्रतों का पालन करते हैं, (पाँच) समितियों का पालन करते हैं, और (तीन) गुप्तियों का पालन करते हैं, जिनका मोह सर्वथा नष्ट हो गया है, और जो ध्यान तथा अध्ययन में ही सदा लीन रहते हैं, ऐसे मुनि अपने मन में मोक्ष-सुख को धारण कर, कर्मों का नाश करने के लिए तपश्चरण करते हैं।

The Adept-Ascetics who observe the five major-vows *(mahāvrata)*, the five regulations *(samiti)*, and the three controls *(gupti)*, who have destroyed completely the delusion *(moha)*, and who are ever-engaged in meditation *(dhyāna)* and study *(adhyayana)*; such ascetics, with the bliss appertaining to liberation in their minds, observe austerities *(tapa)* so as to get rid of the karmas.

(दुबई)

दिनकर किरणनिकरसन्तप्त शिलानिचयेषु निःस्पृहाः,
मलपटलावलिप्त तनवः शिथिलीकृत-कर्म-बन्धनाः ।
व्यपगत-मदनदर्प-रति-दोष कषाय विरक्त मत्सराः,
गिरिशिखरेषु चण्डकिरणाभिमुखस्थितयो दिगम्बराः ॥३॥

अर्थ – उन मुनिराज के शरीर पर मैल के पटल जम गये हैं क्योंकि वे कभी स्नान नहीं करते, परन्तु (साथ ही) उनके कर्मों के बन्धन सब शिथिल हो गये हैं। इसके सिवाय उनके काम का उद्रेक, मान, राग, मोहादिक दोष और क्रोधादिक कषाय सब नष्ट हो गये हैं, तथा वे मात्सर्य/ईर्ष्या भाव से रहित हैं। ऐसे दिगम्बर मुनिराज ग्रीष्म ऋतु में निःस्पृह होकर, अर्थात् आकांक्षाओं से रहित होकर, पर्वत के शिखर पर, तेज किरणों वाले सूर्य के सामने, अत्यन्त तपती हुई शिलाओं के समूह पर विराजमान होकर, घोर तपश्चरण करते हैं।

The body of these Adept-Ascetics gets covered with layers of dust as they never bathe; however, their bonds of the karmas have all disentangled. Besides, their dispositions of lust *(kāma, madana)*, pride *(māna, darpa)* and attachment *(rati, rāga)* have all been destroyed, and they are rid of imperfections *(doṣa)* like delusion *(moha),* passions *(kaṣāya)* like anger *(krodha),* and envy *(mātsarya).* Such *digambara* (naked) Adept-Ascetics, free from all desires, observe severe austerities *(tapa)* during summers by reaching out to the top of mountains and perching themselves, facing the blazing sun, on scorching rocks.

(भद्रिका)

सज्ज्ञानामृतपायिभिः क्षान्तिपयः सिंच्यमानपुण्यकायैः ।
धृतसंतोषच्छत्रकैः तापस्तीव्रोऽपि सह्यते मुनीन्द्रैः ॥४॥

अर्थ - जो मुनिराज निरन्तर सम्यग्ज्ञान रूपी अमृत का पान करते हैं, पुण्यमयी (अपने) शरीर को क्षमारूपी जल से सींचते रहते हैं, तथा जिन्होंने संतोषरूपी छत्र को धारण किया है, ऐसे मुनिराजों के द्वारा असह्य ताप भी सहन किया जाता है। अभिप्राय यह है कि जो मुनिराज ग्रीष्मकाल में पर्वत के शिखर पर जाकर घोर तपश्चरण करते हैं वे केवल मात्र ज्ञान रूपी जल का ही पान करते हैं, क्षमारूपी जल से स्नान करते हैं और संतोषरूपी छत्र को धारण करते हैं।

The Adept-Ascetics endure unbearable heat with the following aids: they constantly drink the nectar-like water of right-knowledge *(samyagjñāna)*, they keep on bathing their auspicious bodies with the water of forbearance *(kṣamā)*, and they use the canopy *(chatra)* of contentment *(saṅtoṣa)*.

(दुबई)

शिखिगल कज्जलालिमलिनैर्विबुधाधिप-चापचित्रितैः,
भीमरवैर्विसृष्टचण्डाशनि शीतल-वायु-वृष्टिभिः ।
गगनतलं विलोक्य जलदैः स्थगितं सहसा तपोधनाः,
पुनरपि तरुतलेषु विषमासु निशासु विशंकमासते ॥५॥

अर्थ - वर्षाऋतु के बादल मयूर के कण्ठ के समान नीले अथवा काजल या

भ्रमर के समान काले होते हैं; वे बादल इन्द्रधनुष से चित्रित तथा भयंकर गर्जना करने वाले होते हैं; वे प्रचण्ड बिजली गिराते हैं, शीतल वायु चलाते हैं और घनघोर वर्षा करते हैं। ऐसे बादलों से आकाशमण्डल को आच्छादित देखकर वे मुनिराज शीघ्र ही निर्भय होकर भयानक रात्रियों में बार-बार वृक्षों के नीचे विराजमान रहते हैं।

The clouds of the rainy season are blue like the neck of the peacock or pitch-black like the collyrium or the black bee; flashing the rainbow, these clouds roar with terrifying thunder; these clouds discharge spurts of intense lightning; these clouds cause strong and cold winds accompanied by torrential rains. During the terrifying nights when such clouds envelop the sky, the Adept-Ascetics, shedding their sense of fear, soon and repeatedly perch themselves under the trees.

(भद्रिका)

जलधाराशरताडिता न चलन्ति चरित्रतः सदा नृसिंहाः ।
संसार-दुःख-भीरवः परीषहाराति-घातिनः प्रवीराः ॥६॥

अर्थ - वे मुनिराज (वर्षा ऋतु में) यद्यपि जलधारा रूपी बाणों से ताड़ित किये जाते हैं, परन्तु क्योंकि वे मुनिराज मनुष्यों में सिंह के समान श्रेष्ठ होते हैं तथा संसार के दुःखों से भयभीत रहते हैं, इसीलिये परीषह रूपी शत्रुओं का वे सर्वथा घात कर डालते हैं। ऐसे वे शूरवीर मुनिराज अपने चारित्र से कभी विचलित नहीं होते हैं।

The Adept-Ascetics (in the rainy season) although are thrashed by the strong arrows of rainfall but since they are lion-like pre-eminent among men, and are fearful of the miseries of the worldly-existence, they destroy all their enemies in form of afflictions *(parīṣaha)*. Such lion-hearted Adept-Ascetics never get unsettled and therefore never move away from their conduct *(cāritra)*.

(दुबई)

अविरत-बहल तुहिन-कण वारिभिरङ्घ्रिपपत्र पातनै-
रनवरतमुक्तसात्काररवैः परुषैरथानिलैः शोषितगात्रयष्टयः ।
इह श्रमणा धृतिकम्बलावृताः शिशिरनिशां,
तुषार विषमां गमयन्ति चतुःपथे स्थिताः ॥७॥

अर्थ - शीतकाल में जो वायु चलती है वह निरन्तर हिमकण मिश्रित जल से सहित है (अर्थात् जिस काल में ओलावृष्टि हो रही है), जिस वायु से वृक्षों के पत्ते गिर रहे हैं, जिससे अनवरत 'सांय-सांय' ऐसा बड़ा भारी शब्द होता रहता है। ऐसी कठोर (असह्य) वायु से वे मुनिराज, जिनकी शरीररूपी लकड़ी सब सूख रही है, चौराहे पर स्थित होकर, धैर्य रूपी कम्बल से ढके हुए, हिमपात से विषम ऐसी शीतकाल की रात्रि को व्यतीत करते हैं।

The air during winters is full of icy droplets of water (especially during a hailstorm), it causes the tree-leaves to fall on to the ground, and the hard-blowing air

makes loud, howling sound. In face of such unbearable wintery air, the Adept-Ascetics, whose body-wood is all but dried up, perch themselves on a wide crossroad, cover themselves up with the blanket of resoluteness *(dhairya)* and spend the hostile night of snowfall.

(भद्रिका)

इति योगत्रयधारिणः सकलतपशालिनः प्रवृद्धपुण्यकायाः ।
परमानन्दसुखैषिणः समाधिमग्र्यं दिशन्तु नो भदन्ताः ॥८॥

अर्थ – इस प्रकार तीन प्रकार के योगों को धारण करने वाले (ग्रीष्मकाल में पर्वत के शिखर पर आतापन योग, वर्षाकाल में वृक्षमूल योग और शीतकाल में अभ्रावकाश योग अर्थात् खुले आकाश में स्थान बनाना), बाह्य-अभ्यन्तर समस्त तपों से सुशोभित होने वाले, अत्यन्त वृद्धि को प्राप्त पुण्य के समूह से सहित, और मोक्ष के परमानन्द-अव्याबाध सुख की इच्छा करने वाले, वे भगवन् मुनिराज हम सबको उत्कृष्ट शुक्लध्यान की प्राप्तिरूप समाधि की शक्ति प्रदान करें।

The Adept-Ascetics adopt three kinds of *yoga* (*ātāpana yoga* in summers, *vṛakṣamūla yoga* in monsoons and *abhrāvakāśa yoga* in winters), they are adorned by the external as well as the internal austerities *(tapa)*, they are equipped with the abundance of meritorious *(puṇya)* karmas, and they long for the supreme- and uninterrupted-bliss of liberation. May such Adept-

Ascetics grant us the strength to engage in the supreme meditation, i.e., the pure-meditation *(śukladhyāna)*.

अञ्चलिका (Submission)

गद्य (Prose)

इच्छामि भंते! योगि भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्स आलोचेउं। अड्ढाइज्जदीव-दोसमुद्देसु पण्णारस-कम्मभूमिसु आदावणरुक्खमूल-अब्भोवासठाण-मोणवीरासणेक्कपास कुक्कुडासण चउछपक्ख-खवणादि जोगजुत्ताणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

अर्थ - हे भगवन्! मैंने योगि-भक्ति सम्बन्धी कायोत्सर्ग किया। उसमें लगे दोषों की आलोचना करने की मैं इच्छा करता हूँ। अढ़ाई द्वीप और दो समुद्रों में तथा पन्द्रह कर्मभूमियों में जो आतापन योग, वृक्षमूल योग, अभ्रावकाश योग, मौन, वीरासन, एकपार्श्व, कुक्कुटासन आदि योग, चार, छह, पक्ष आदि उपवासों से युक्त हैं, ऐसे सर्व साधुओं की मैं सदा-काल अर्चा करता हूँ, पूजा करता हूँ, वन्दना करता हूँ, नमस्कार करता हूँ। मेरे दु:खों का क्षय हो, कर्मों का क्षय हो, मुझे बोधि (रत्नत्रय) की प्राप्ति हो, उत्तम गति में गमन हो, समाधिमरण हो, तथा जिनेन्द्रदेव के गुणों की सम्पत्ति मुझे प्राप्त हो।

O Lord! I have performed devotion to the Adept-Ascetics *(yogi)* with detachment-to-own-body *(kāyot-sarga)*. I now desire confession *(ālocanā)* for faults

therein. In the two-and-a-half continents, the two oceans and the fifteen regions-of-labour *(karmabhūmi)* the Adept-Ascetics *(yogi)* observe various kinds of *yoga* including *ātāpana, vṛakṣamūla, abhrāvakāśa, mauna, virāsana, ekapārśva, kukkuṭāsana,* and also fasting *(upavāsa)* for different durations including a fortnight. I incessantly adore, worship, make obeisance, and salute such Adept-Ascetics *(yogi).* May my miseries be obliterated; may my karmas be destroyed; may I attain the trio of right faith-knowledge-conduct *(bodhi, ratnatraya)*; may I attain a superior state-of-existence *(gati)*; may I embrace, at the end of my life, a pious and dispassionate-death *(samādhimaraṇa)*; and may I attain the wealth of the qualities appertaining to Lord Jina!

॥ इति श्री योगि भक्ति ॥

* * *

श्री आचार्य भक्ति

Devotion to the Master-Ascetics

(स्कन्द)

सिद्धगुणस्तुति-निरतानुद्धूत-रुषाग्नि-जाल-बहुलविशेषान् ।
गुप्तिभिरभिसंपूर्णान् मुक्तियुतः सत्यवचनलक्षित-भावान् ॥१॥

अर्थ - जो आचार्य सिद्धों के सम्यक्त्व आदि गुणों की स्तुति करने में सदा लीन रहते हैं, क्रोध, मान, माया, लोभ रूपी कषायों के जो अनन्तानुबन्धी आदि विशेष भेद हैं उन रूप अग्नि के जाल को जिन्होंने नष्ट कर दिया है, जो गुप्तियों (मनोगुप्ति, वचनगुप्ति, कायगुप्ति) से परिपूर्ण हैं, जो मोक्ष से ही सदा सम्बन्ध रखते हैं, सत्य वचनों से ही जिनके निर्मल भावों का परिचय प्राप्त होता है, ऐसे आचार्य परमेष्ठी भगवन्तों को मैं नमस्कार करता हूँ।

नोट - यद्यपि इस श्लोक में नमस्कार-सूचक पद नहीं है तथापि 'अभिनौमि' पद ग्यारहवें श्लोक से लिया गया है। आगे के श्लोकों में भी ऐसा ही समझना।

The Master-Ascetics *(Ācārya)* are always engaged in adoration of the Liberated-souls *(Siddha)*; they have destroyed the fire-like entanglement comprising passions *(kaṣāya)* like anger, pride, deceitfulness and greed, and their subclasses like infinitely-binding *(anantānubandhī)*; they are equipped with the three kinds of control *(gupti),* of the mind, the speech and the

body; they are concerned perennially only about liberation *(mukti, mokṣa)*; and speaking only the truth is the indicator of their pristine dispositions. I make obeisance humble to such Master-Ascetics *(Ācārya)*.

(The present verse does not mention of obeisance to the Master-Ascetics; it has been taken from verse 11; this connection continues up to verse 10.)

मुनिमाहात्म्यविशेषान् जिनशासनसत्प्रदीपभासुरमूर्तीन् ।
सिद्धिं प्रपित्सुमनसो बद्धरजोविपुलमूलघातनकुशलान् ॥२॥

अर्थ – जो मुनियों के विशिष्ट माहात्म्य को प्राप्त हैं, जिनशासन रूपी समीचीन दीपक के प्रकाश से जिनका शरीर देदीप्यमान है अथवा जिनकी मूर्ति जिनशासन को प्रकाशित करने के लिए दीपक के समान देदीप्यमान है, जिनके मन में सिद्धपद प्राप्त करने की इच्छा है, जो बँधे हुए कर्मों के विशाल कारणों का मूल नाश करने में कुशल हैं, ऐसे आचार्यों को मैं नमस्कार करता हूँ।

They possess extraordinary glory among the ascetics *(muni);* their bodies glow owing to the sublime light of the lamp of the Jina Doctrine, or else, their figure itself is the bright lamp that illumines the Jina Doctrine; their hearts long for the attainment of liberation; and they are adept in uprooting the immense causes that have resulted in bondage of the karmas. I make obeisance humble to such Master-Ascetics *(Ācārya)*.

गुणमणिविरचितवपुषः षड्द्रव्यविनिश्चितस्यधातृन् सततम् ।
रहितप्रमादचर्यान् दर्शनशुद्धान् गणस्य संतुष्टि करान् ॥३॥

अर्थ – जिनका शरीर गुणरूपी (सम्यग्दर्शन आदि) मणियों से रचा गया है, जो सदाकाल छह द्रव्यों के निश्चय को धारण करने वाले हैं अर्थात् जो सदाकाल छह द्रव्यों का गाढ़ श्रद्धान रखते हैं, जो प्रमाद-चर्या (विकथा आदि) से रहित हैं, जिनका सम्यग्दर्शन शुद्ध है अर्थात् पच्चीस दोषों से रहित है, और जो गण को (साधु-संघ को) संतुष्ट करने वाले हैं; ऐसे आचार्य परमेष्ठी भगवन्तों को मैं नमस्कार करता हूँ।

Their bodies have been crafted with jewels of qualities *(guṇa)* like right-perception *(samyagdarśana)*; they incessantly maintain unshakeable faith in the six substances *(dravya)*[1]; they never engage in negligent-activity *(pramāda-caryā)*[2]; they possess right-perception *(samyagdarśana)* free from the twenty-five faults; and they cause great contentment to the members of their congregation. I make obeisance humble to such Master-Ascetics *(Ācārya)*.

1. The six substances *(dravya)* are: five substances with extensive magnitude, *pañcāstikāya* – 1) the soul *(jīva)*, 2) the physical matter *(pudgala)*, 3) the medium of motion *(dharma)*, 4) the medium of rest *(adharma)*, and 5) the space *(ākāśa)* – besides 6) the substance of time *(kāla)* that has no extensiveness.

2. The fifteen activities due to negligence *(pramāda)* are indulgence in four passions *(kaṣāya)*, five senses *(indriya)*, four kinds of narratives *(vikathā)* – pertaining to monarch *(rājakathā)*, woman *(strīkathā)*, thief *(corakathā)* and food *(bhojanakathā)* – sleep *(nidrā)* and fondness *(sneh)*.

मोहच्छिदुग्रतपसः प्रशस्तपरिशुद्धहृदयशोभन-व्यवहारान् ।
प्रासुकनिलयाननघानाशा विध्वंसिचेतसो हतकुपथान् ॥४॥

अर्थ - जिनका उग्र तप मोह का अथवा अज्ञान का नाश करने वाला है; प्रशस्त, शुभ और शुद्ध हृदय होने से जिनका व्यवहार उत्तम है अर्थात् पर-उपकारक है; जिनके रहने का स्थान सम्मूर्च्छन जीवों से रहित प्रासुक रहता है; जो पापकार्यों से सर्वथा रहित होते हैं; जिनका चित्त आशा-तृष्णा अर्थात् इस लोक की तथा परलोक की आशा से सर्वथा रहित होता है; और जो मिथ्यादर्शन रूप कुमार्ग को सदा नष्ट करने वाले होते हैं। ऐसे आचार्य परमेष्ठी भगवन्तों को मैं नमस्कार करता हूँ।

Their intense austerities *(tapa)* cause destruction of delusion *(moha)* and nescience *(ajñāna)*; their laudable and pure hearts bear only commendable dispositions that cause good to others; their abodes are free from minute, spontaneously-born living-beings; they withdraw themselves completely from all evil activities; their hearts are free from longings pertaining to this life or the next; and they destroy all forms of misleading and false-beliefs. I make obeisance humble to such Master-Ascetics *(Ācārya)*.

धारितविलसन्मुण्डान् वर्जितबहुदण्डपिण्डमण्डल निकरान् ।
सकलपरीषहजयिनः क्रियाभिरनिशं-प्रमादतः परिरहितान् ॥५॥

अर्थ - जो शोभायमान अर्थात् पापरहित मुण्ड (मन, वचन, काय, पाँच

इन्द्रियाँ, हस्त और पाद - ये दस) को धारण करते हैं; बहुत दण्ड (अप्रशस्त प्रवृत्ति अथवा अधिक प्रायश्चित-योग्य आहार) ग्रहण करने वाले मुनियों के समुदाय से जो दूर रहते हैं; जो समस्त (बाईस) परीषहों को जीतने वाले हैं; तथा जो सदा प्रमाद से होने वाली क्रियाओं से रहित हैं। ऐसे आचार्य परमेष्ठी भगवन्तों को मैं नमस्कार करता हूँ।

They possess praiseworthy limbs *(muṇḍa)* [comprising these ten: the mind, speech, body, five senses, hands and feet]; they distance themselves from the groups of ascetics indulging in unmerited activities including partaking unworthy food; they endure all (twenty-two) afflictions[1] *(parīṣaha)*; and they are rid of negligent activities tinged with passionate disposition. I make obeisance humble to such Master-Ascetics *(Ācārya)*.

अचलान्व्यपेतनिद्रान् स्थानयुतान्कष्टदुष्टलेश्या हीनान् ।
विधिनानाश्रित-वासानलिप्तदेहान्विनिर्जितेन्द्रियकरिणः ॥६॥

अर्थ - जो उपसर्ग/परीषहों के आ जाने पर भी अपने गृहीत संयम से कभी

1. The twenty-two afflictions *(parīṣaha)* are: hunger – *kṣudhā;* thirst – *tṛṣā;* cold – *śīta;* heat – *uṣṇa;* insect-bite – *dańśamaśaka;* nakedness – *nāgnya;* absence of pleasures – *arati;* woman – *strī;* pain arising from roaming – *caryā;* discomfort of posture – *niṣadyā;* uncomfortable couch – *śayyā;* reproach – *ākrośa;* injury – *vadha;* solicitation – *yācanā;* lack of gain – *alābha;* disease – *roga;* pain inflicted by blades of grass – *tṛṇasparśa;* dirt – *mala;* absence of reverence and honour – *satkārapuraskāra;* (conceit of) learning – *prajñā;* despair or uneasiness arising from ignorance – *ajñāna;* and lack of faith – *adarśana*. (See, *'Tattvārthasūtra'*, 9 : 9.)

चलायमान नहीं होते हैं; जो विशेषकर निद्रा से रहित (अर्थात् अल्प-निद्रा लेने वाले) होते हैं; प्रायः कायोत्सर्ग धारण करते हैं; कष्टकारी दुष्ट (अशुभ) लेश्याओं के परिणामों से हीन हैं; जिन्होंने विधिपूर्वक घर का त्याग कर दिया है अर्थात् जो चरणानुयोग की विधि के अनुसार पर्वत, मन्दिर, गुफा, शून्यगृह आदि में निवास करते हैं; जिनका शरीर केशर-चन्दन-भस्म आदि के लेप से रहित है; तथा जो इन्द्रिय रूपी हाथी को सदा अपने वश में रखते हैं। ऐसे आचार्य परमेष्ठी भगवन्तों को मैं नमस्कार करता हूँ।

They do not deviate from their vows of restraint *(saṃyama)* as calamities *(upasarga)* or afflictions *(parīṣaha)* take place; they are particularly rid of sleep as they take only a short sleep; they often resort to detachment-to-own-body *(kāyotsarga)* in a standing posture; they are rid of misery-causing dispositions called inauspicious-colouration[1] *(aśubha leśyā)* in their souls; they renounce their homes in the prescribed manner and make the mountains, temples, caves, or discarded places as their abodes; they do not besmear their bodies with objects like saffron, sandalwood and ash; and they keep their sense-elephants under subjugation. I make obeisance humble to such Master-Ascetics *(Ācārya)*.

1. Colouration *(leśyā)* is the source or cause of vibratory activity of the soul on rise of the passions *(kaṣāya)*. It is of six kinds: black *(kṛṣṇa)*, blue *(nīla)*, grey *(kāpota)*, yellow *(pīta)*, pink *(padma)* and white *(śukla)*. The first three are inauspicious *(aśubha)* and the remaining are auspicious *(śubha)*.

अतुलानुत्कुटिकासान्विवित्त चित्तानखंडितस्वाध्यायान् ।
दक्षिणभावसमग्रान् व्यपगतमदरागलोभशठमात्सर्यान् ॥७॥

अर्थ – जो अतुलनीय हैं; उत्कुटिका आदि आसनों से तपश्चरण करते हैं; जिनका हृदय सदा हेय-उपादेय बुद्धि से पवित्र/सुशोभित है; जिनका स्वाध्याय सदा अखंडित रहता है अर्थात् जो अभीक्ष्णज्ञानोपयोगी हैं; जो सरल अथवा शुभ परिणामों से सहित हैं; जो मद, राग, लोभ, माया तथा मात्सर्य/ईर्ष्याभाव से रहित हैं। ऐसे आचार्य परमेष्ठी भगवन्तों को मैं नमस्कार करता हूँ।

They are incomparable; they observe austerities *(tapa)* adopting difficult postures like *utkuṭikā*; their heart is pristine due to the intellect that can discern between the desirable and the undesirable; they are persistently engaged in the study *(svādhyāya)* of the Scripture and hence are called *abhīkṣṇajñānopayogī*; they have the disposition of straightforwardness; they are rid of imperfections like pride, attachment, greed, deceit and envy. I make obeisance humble to such Master-Ascetics *(Ācārya)*.

भिन्नार्तरौद्रपक्षान्संभावित धर्मशुक्लनिर्मल हृदयान् ।
नित्यंपिनद्धकुगतीन् पुण्यान्गण्योदयान्विलीनगारव चर्यान् ॥८॥

अर्थ – जिन्होंने आर्तध्यान और रौद्रध्यान के पक्ष को नष्ट कर दिया है; जिनका हृदय धर्म्यध्यान और शुक्लध्यान से निर्मल है; जिन्होंने नरक आदि कुगतियों के

द्वार को सदा के लिए बन्द कर दिया है; जो पुण्य रूप हैं; जिनका तप व ऋद्धि आदि का अभ्युदय अत्यन्त प्रशंसनीय है; और जो शब्द, ऋद्धि और सात/साता इन तीन गारव/अहंकार से सर्वथा रहित हैं। ऐसे आचार्य परमेष्ठी भगवन्तों को मैं नमस्कार करता हूँ।

They have vanquished the two inauspicious kinds of meditation *(dhyāna)*, the sorrowful *(ārta)* and the cruel *(raudra)*; their heart is pristine being engaged always in the two auspicious kinds of meditation *(dhyāna)*, the virtuous *(dharmya)* and the pure *(śukla)*; they have closed forever the doorway to evil states-of-existence *(gati)*, like the infernal state-of-existence; they are the epitome of auspiciousness *(puṇya)*; their austerities *(tapa)* and accomplishments *(ṛddhi)* are highly laudable; and they are rid of conceit *(gārava)* of the three kinds: their skill in pronunciation and speech, their special appurtenances like the elevated throne, and their access to pleasure-giving articles like special food. I make obeisance humble to such Master-Ascetics *(Ācārya)*.

तरुमूलयोगयुक्ता-नवकाशातापयोगराग सनाथान् ।
बहुजन हितकर चर्यानभयाननघान्महानुभाव विधानान् ॥९॥

अर्थ - जो वर्षाकाल में वृक्ष के नीचे 'तरुमूल-योग' अथवा 'वृक्षमूल-योग' को धारण करते हैं; शीतकाल में खुले आकाश के नीचे 'अभ्रावकाश-योग' को

धारण करते हैं; ग्रीष्मकाल में 'आतापन-योग' को धारण करते हैं; जिनकी चर्या अनेक जनों का हित करने वाली है; जो सप्त प्रकार के भय से रहित हैं; जो सर्व पापों से रहित हैं; पुण्य के उदय से जिनका प्रभाव सब जगह पड़ता है। ऐसे आचार्य परमेष्ठी भगवन्तों को मैं नमस्कार करता हूँ।

In monsoons, they adopt the *'tarumūla-yoga'*, also called the *'vṛakṣamūla-yoga'*; in winters, they adopt the *'abhrāvakāśa-yoga'*; in summers, they adopt the *'ātāpana-yoga'*; their manner of living causes good to many living-beings; they are free from the seven kinds of fear[1]; they are rid of all evil-karmas; and abundance of their meritorious *(puṇya)* karmas leaves a mark everywhere. I make obeisance humble to such Master-Ascetics *(Ācārya)*.

ईदृशगुणसंपन्नान् युष्मान्भक्त्या विशालया स्थिरयोगान् ।
विधिनानारतमग्र्यान्मुकुलीकृत हस्तकमलशोभितशिरसा ॥१०॥

अभिनौमि सकलकलुषप्रभावोदय जन्मजरामरणबन्धनमुक्तान् ।
शिवमचलमनघमक्षयमव्याहतमुक्ति सौख्यमस्त्विति सततम् ॥११॥

---

1. The seven kinds of fear are: 1) fear relating to this life – *ihalokabhaya*, 2) fear relating to the next life – *paralokabhaya*, 3) fear of being without protection – *atrāṇabhaya*, 4) fear of losing what is possessed – *aguptibhaya*, 5) fear of pain – *vedanābhaya*, 6) fear of accident – *ākasmikabhaya*, and 7) fear of death – *maraṇabhaya*.

अर्थ – इस प्रकार, जो आचार्य भगवन्त ऊपर कहे गए गुणों से युक्त हैं; जो मन–वचन–काय से तथा परीषहों के आने पर भी सदा स्थिर हैं; जो समस्त गुणों को धारण करने से सदा प्रधान हैं; जो समस्त पापों या कलुषित परिणामों के कारण उत्पन्न होने वाले जन्म–जरा–मरण के बन्धन से मुक्त होने वाले हैं। ऐसे आप आचार्य परमेष्ठी को बड़ी भक्ति से, विधिपूर्वक दोनों हाथों को कमलाकार से जोड़कर अपने मस्तक पर रखकर, मैं सदा नमस्कार करता हूँ। इस प्रकार नमस्कार करने से मुझे कल्याणरूप, अविनाशी, पापरहित, क्षयरहित, बाधारहित ऐसा मोक्ष का सुख प्राप्त होवे। अर्थात् ऐसे मोक्षसुख को प्राप्त करने के लिए ही मैं आचार्य परमेष्ठी भगवन्तों को नमस्कार करता हूँ।

Such Master-Ascetics *(Ācārya)* are equipped with the aforesaid qualities; they remain unperturbed in respect to their mind, speech and body, and on occurrence of afflictions; they remain foremost in adopting all laudable qualities; and they are destined to get rid of the cycle of worldly-existence that subsists on demerit and evil dispositions, and involves birth, old-age and death. I constantly make obeisance humble, with extreme devotion, to such Master-Ascetics *(Ācārya)* by touching my forehead with folded hands. By such obeisance humble I only wish to attain the ineffable bliss of liberation that is most propitious, eternal, rid of all evils, indestructible, and without impediments.

अञ्चलिका (Submission)

गद्य (Prose)

इच्छामि भंते! आयरियभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। सम्मणाण सम्मदंसण सम्मचरित्तजुत्ताणं पंचविहाचाराणं आयरियाणं आयारादि सुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं तिरयणगुणपालणरयाणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

अर्थ - हे भगवन्! मैंने आचार्य-भक्ति सम्बन्धी कायोत्सर्ग किया। उसमें लगे दोषों की आलोचना करने की मैं इच्छा करता हूँ। सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन और सम्यक्चारित्र से युक्त पञ्चाचार के पालक आचार्य परमेष्ठी की; आचाराङ्ग आदि श्रुतज्ञान का उपदेश देने वाले उपाध्याय परमेष्ठी की; तथा रत्नत्रय रूपी गुणों के पालन करने में सदा तत्पर ऐसे सभी साधु परमेष्ठी की मैं सदा-काल अर्चा करता हूँ, पूजा करता हूँ, वन्दना करता हूँ, नमस्कार करता हूँ। मेरे दु:खों का क्षय हो, कर्मों का क्षय हो, मुझे बोधि (रत्नत्रय) की प्राप्ति हो, उत्तम गति में गमन हो, समाधिमरण हो, तथा जिनेन्द्रदेव के गुणों की सम्पत्ति मुझे प्राप्त हो।

O Lord! I have performed devotion to the Master-Ascetics *(Ācārya)* with detachment-to-own-body *(kāyotsarga)*. I now desire confession *(ālocanā)* for faults therein. I incessantly adore, worship, make obeisance, and salute all *Ācārya* – the Master-Ascetics – endowed with right knowledge *(samyagjñāna)*, right-perception *(samyagdarśana)* and right-conduct

(samyakcāritra), who are ever-engaged in the fivefold-observances *(pañcācāra);* all *Upādhyāya* – the teachers of ascetics – who impart knowledge of the Scripture, including the *ācarāṅga;* and all *Sādhu* – the ascetics – who are ever eager to observe the qualities that constitute the Three-Jewels *(ratnatraya)*. May my miseries be obliterated; may my karmas be destroyed; may I attain the trio of right faith-knowledge-conduct *(bodhi, ratnatraya)*; may I attain a superior state-of-existence *(gati)*; may I embrace, at the end of my life, a pious and dispassionate-death *(samādhimaraṇa)*; and may I attain the wealth of the qualities appertaining to Lord Jina!

॥ इति श्री आचार्य भक्ति ॥

* * *

श्री पञ्चमहागुरु भक्ति

Devotion to the Five Supreme-Guru

(आर्या)

श्रीमदमरेन्द्र-मुकुटप्रघटित-मणि-किरण-वारिधाराभिः ।
प्रक्षालित-पद-युगलान् प्रणमामि जिनेश्वरान् भक्त्या ॥१॥

अर्थ - अन्तरंग व बहिरंग लक्ष्मी को धारण करने वाले, इन्द्रों के मुकुटों में जड़े हुए मणियों की किरणरूप जल-धाराओं से जिनके चरण-युगल प्रक्षालित होते हैं, ऐसे अर्हन्त देव को मैं भक्ति से नमस्कार करता हूँ।

The possessor of the internal as well as the external splendors; the sprinkles of water in form of the rays emanating from the crest-jewels in the diadems of the heavenly devas perform, so to speak, the anointment of the duo of his Feet; I bow down, with devotion, before such Lord *Arhanta*.

अष्टगुणैः समुपेतान् प्रणष्ट-दुष्टाष्टकर्मरिपु-समितीन् ।
सिद्धान् सततमनन्तान् नमस्कारोमीष्ट-तुष्टि-संसिद्ध्यै ॥२॥

अर्थ – जिनके दुष्ट आठ कर्मरूपी शत्रुओं का समूह – मोहनीय, ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, अन्तराय, नाम, आयु, गोत्र और वेदनीय –पूर्ण क्षय को प्राप्त हो गया है; जो आठ गुणों – क्षायिक–सम्यक्त्व, केवलज्ञान, केवलदर्शन, अनन्तवीर्य, सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व और अव्याबाध – से युक्त हैं; ऐसे अनन्त सिद्धों को मैं अत्यन्त इष्ट ऐसी मोक्ष–लक्ष्मी को प्राप्त करने के लिए सदा नमस्कार करता हूँ।

Those who have purged themselves completely of the foes in form of the eight kinds of karmas; those who possess the eight supreme qualities[1]; I bow down, to attain the most coveted splendor of liberation, before such infinite Liberated-souls *(Siddha)*.

साचार–श्रुत–जलधीन् प्रतीर्य शुद्धोरुचरण–निरतानाम् ।
आचार्याणां पदयुगकमलानि दधे शिरसि मेऽहम् ॥३॥

अर्थ – जो पञ्चाचार सहित द्वाद्वशांग रूपी श्रुतज्ञान के समुद्र को पार हो गये हैं; जो निर्दोष तथा उग्र तपश्चरण के पालन करने में सदा तत्पर रहते हैं; ऐसे आचार्यों के दोनों चरण–कमलों को मैं अपने मस्तक पर धारण करता हूँ।

Engaging themselves in the fivefold-observances *(pañcācāra),* they have crossed the ocean comprising the twelve-limbs *(dvādaśāṅga)* of the scriptural-

1. The eight supreme qualities of the Liberated-souls *(Siddha)* and the karmas whose destruction give rise to these qualities are enumerated under 'Devotion to the Liberated Souls', verse 5, p. 41-43, *ante*.

knowledge *(śrutajñāna)*; and they are ever ready to observe the faultless and severe austerities *(tapa)*. I touch the duo of the Lotus-Feet of such Master-Ascetics *(Ācārya)* by bowing down my forehead.

मिथ्यावादिमदोग्र-ध्वान्त-प्रध्वन्सि-वचन-सन्दर्भान् ।
उपदेशकान् प्रपद्ये मम दुरितारिप्रणाशाय ॥४॥

अर्थ - जिनके वचनों के सन्दर्भ (अर्थात् प्रकरण) मिथ्यावादियों के बढ़ते हुए अहंकार रूपी अंधकार का नाश करने वाले हैं, ऐसे उपाध्याय परमेष्ठियों को मैं अपने पाप रूपी शत्रुओं का नाश करने के लिए प्राप्त होता हूँ, अर्थात् उनकी शरण में जाता हूँ।

The context or the subject-matter of their speech destroys the darkness of excessive conceit of the wrong-believers. In order to destroy my enemies in form of the evil-karmas, I take refuge in such Supreme-Guru, the *Upādhyāya* – the teachers of ascetics.

सम्यग्दर्शनदीप-प्रकाशका-मेय-बोध-सम्भूताः ।
भूरि-चरित्र-पताकास्ते साधुगणास्तु मां पान्तु ॥५॥

अर्थ - जो सम्यग्दर्शन रूपी दीपक को प्रकाशित करने वाले हैं; जो जीवादि ज्ञेय पदार्थों के समीचीन ज्ञान से सम्पन्न हैं; तथा जो उत्कृष्ट चारित्र रूपी पताका से सहित हैं; ऐसे वे साधुगण मेरी रक्षा करें।

They have lighted up the lamp of right-perception *(samyagdarśana);* they are equipped with the right knowledge *(jñāna)* of all knowable substances, like the soul *(jīva)*; and they keep the flag of excellent conduct *(cāritra)* flying high. May such congregation of Ascetics *(Sādhu, Muni)* keep me safe and secure!

जिन-सिद्ध-सूरि-देशक-साधुवरानमल-गुणगणोपेतान् ।
पञ्चनमस्कार-पदैस्त्रिसन्ध्यमभिनौमि मोक्षलाभाय ॥६॥

अर्थ - जो अनेक निर्मल गुणों के समूह से सुशोभित हैं, ऐसे 1) अर्हन्त, 2) सिद्ध, 3) आचार्य, 4) उपाध्याय, तथा 5) उत्तम साधुओं को मैं मोक्ष की प्राप्ति के लिए पञ्च-नमस्कार पदों (पञ्च-नमस्कार मन्त्र) के द्वारा तीनों सन्ध्याकालों (प्रातः, मध्याह्न तथा सायं) में नमस्कार करता हूँ।

These five are adorned with a collection of pristine qualities: 1) the *Arhanta* (the embodied perfect souls), 2) the *Siddha* (the liberated souls), 3) the *Ācārya* (the masters of ascetics), 4) the *Upādhyāya* (the teachers of ascetics), and 5) the excellent *Sādhu* (the ascetics). I bow down before them and chant, during the three junctures of the day (morning, noon and evening), the supreme mantra of fivefold-adoration *(pañca-namaskāra-mantra)*.

एष पञ्चनमस्कारः सर्वपापप्रणाशनः ।
मङ्गलानां च सर्वेषां प्रथमं मङ्गलं भवेत् ॥७॥

अर्थ - यह पञ्च-नमस्कार मन्त्र समस्त पापों का नाश करने वाला है, और समस्त मंगलों में प्रथम अथवा मुख्य मंगल माना जाता है।

This mantra of fivefold-adoration *(pañca-namaskāra-mantra)* causes destruction of all evil-karmas. It is considered foremost among all harbingers of propitiousness.

अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायाः सर्वसाधवः ।
कुर्वन्तु मङ्गलाः सर्वे निर्वाण परमश्रियम् ॥८॥

अर्थ - अर्हन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय तथा सर्व साधु, ये (पाँचों परमेष्ठी) मंगल-रूप हैं; ये सभी मेरे लिए निर्वाण अर्थात् मोक्ष-रूपी परम-लक्ष्मी को (प्रदान) करें।

The *Arhanta* (the embodied perfect souls), the *Siddha* (the liberated souls), the *Ācārya* (the masters of ascetics), the *Upādhyāya* (the teachers of ascetics), and all the *Sādhu* (the ascetics) are embodiments of propitiousness. May they engender me the splendor of liberation *(mokṣa, nirvāṇa)*!

सर्वान् जिनेन्द्र-चन्द्रान् सिद्धानाचार्य पाठकान् साधून् ।
रत्नत्रयं च वन्दे रत्नत्रयसिद्धये भक्त्या ॥९॥

अर्थ - मैं रत्नत्रय की सिद्धि के लिए सभी अर्हन्तों को नमस्कार करता हूँ; सभी सिद्धों को, सभी आचार्यों को, सभी उपाध्यायों को, सभी साधुओं को और रत्नत्रय को भी भक्ति से नमस्कार करता हूँ।

In order to attain the treasure of the Three-Jewels *(ratnatraya)*, I make adoration, with devotion, to all the *Arhanta* (the embodied perfect souls), to all the *Siddha* (the liberated souls), to all the *Ācārya* (the masters of ascetics), to all the *Upādhyāya* (the teachers of ascetics), to all the *Sādhu* (the ascetics) and also to the Three-Jewels *(ratnatraya)* – the trio of right faith-knowledge-conduct.

पान्तु श्रीपादपद्मानि पञ्चानां परमेष्ठिनां ।
लालितानि सुराधीश चूडामणि मरीचिभिः ॥१०॥

अर्थ - जो इन्द्रों के मुकुटों में लगे हुए चूड़ामणि रत्न की किरणों से अत्यन्त सुशोभित हो रहे हैं, ऐसे पाँचों परमेष्ठियों के श्रीचरण-कमल मेरी रक्षा करें।

Those that are glowing magnificently by the rays emanating from the crest-jewels in the diadems of the Indras, may such Lotus-Feet of all the five *(pañca)* Supreme-beings *(parameṣṭhī)* keep me secure!

प्रातिहार्यैर्जिनान् सिद्धान् गुणैः सूरीन् स्वमातृभिः ।
पाठकान् विनयैः साधून् योगांगैरष्टभिः स्तुवे ॥११॥

अर्थ – जो अर्हन्त भगवान् आठ प्रातिहार्यों – अशोक वृक्ष, सिंहासन, तीन छत्र, भामण्डल, दिव्यध्वनि, पुष्पवृष्टि, चामर और दुन्दुभिनाद – से सुशोभित हैं। जो सिद्ध भगवान् आठ गुणों – क्षायिक-सम्यक्त्व, केवलज्ञान, केवलदर्शन, अनन्तवीर्य, सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व और अव्याबाध – से सहित हैं। जो आचार्य आठ प्रवचन-मातृकाओं – पाँच समिति और तीन गुप्ति – से शोभित हैं। जो उपाध्याय चार प्रकार के विनय – दर्शन, ज्ञान, चारित्र और तप – से शोभित हैं। जो साधु परमेष्ठी योग साधन के आठ प्रकार के अंगों – यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा और समाधि – से शोभित हैं। उन सबकी मैं स्तुति करता हूँ।

I make adoration to: all the *Arhanta* (the embodied perfect souls), whom the following eight divine-splendors *(prātihārya)* adorn: 1) *aśoka-vṛkṣa* – the Aśoka tree, 2) *siṃhāsana* – the bejeweled throne, 3) *chatra* – the three-tier canopy, 4) *bhāmaṇḍala* – the halo of unmatched luminance, 5) *divyadhvani* – the divine voice of the Lord without lip movement, 6) *puṣpavṛṣṭi* – the shower of fragrant flowers, 7) *cāmara* – the waving of sixty-four majestic hand-fans, and 8) *dundubhināda* – the dulcet sound of kettle-drums and other musical instruments; all the *Siddha* (the liberated souls) endowed with the eight supreme qualities[1]; all the *Ācārya* (the masters of ascetics)

1. See, 'Devotion to the Liberated Souls', verse 5, p. 41-43, *ante*.

endowed with the eight *pravacana-mātṛkā* comprising five regulations *(samiti)* and three controls *(gupti)*; all the *Upādhyāya* (the teachers of ascetics) who are ever-engaged in the four kinds of veneration – of faith *(darsana)*, knowledge *(jñāna)*, conduct *(cāritra)* and austerities *(tapa)*; and all the *Sādhu* (the ascetics) who are endowed with the eight limbs of *yoga – yama, niyama, āsana, prāṇāyāma, pratyāhāra, dhyāna, dhāraṇā* and *samādhi*.

अञ्चलिका (Submission)

गद्य (Prose)

इच्छामि भंते! पंचमहागुरुभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। अट्ठमहापाडिहेरसंजुत्ताणं अरहंताणं अट्ठगुणसम्पण्णाणं उड्ढलोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं सिद्धाणं अट्ठपवयणमउसंजुत्ताणं आयरियाणं आयारादि सुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं तिरयणगुणपालणरयाणं सव्वसाहूणं सया णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

अर्थ – हे भगवन्! मैंने पञ्चमहागुरु-भक्ति सम्बन्धी कायोत्सर्ग किया। उसमें लगे दोषों की आलोचना करने की मैं इच्छा करता हूँ। आठ प्रातिहार्यों से युक्त अर्हन्तों की, आठ गुणों से सम्पन्न ऊर्ध्वलोक के मस्तक पर स्थित सिद्धों की,

अष्ट प्रवचन-मातृकाओं से युक्त आचार्यों की, आचाराङ्ग आदि श्रुतज्ञान के उपदेशक उपाध्यायों की, और रत्नत्रय गुणों के पालन करने में सदा रत रहने वाले सब साधुओं की मैं सदा-काल अर्चा करता हूँ, पूजा करता हूँ, वन्दना करता हूँ, नमस्कार करता हूँ। मेरे दु:खों का क्षय हो, कर्मों का क्षय हो, मुझे बोधि (रत्नत्रय) की प्राप्ति हो, उत्तम गति में गमन हो, समाधिमरण हो, तथा जिनेन्द्रदेव के गुणों की सम्पत्ति मुझे प्राप्त हो।

O Lord! I have performed devotion to the Five Supreme-Guru *(pañcamahāguru)* with detachment-to-own-body *(kāyotsarga)*. I now desire confession *(ālocanā)* for faults therein. I incessantly adore, worship, make obeisance, and salute all the *Arhanta* (the embodied perfect souls) whom the eight divine-splendors *(prātihārya)* adorn; all the *Siddha* (the liberated souls) endowed with the eight supreme qualities and stationed eternally at the summit of the upper-world *(ūrdhvaloka)*; all the *Ācārya* (the masters of ascetics) endowed with the eight *pravacana-mātṛkā* comprising five regulations *(samiti)* and three controls *(gupti)*; all the *Upādhyāya* (the teachers of ascetics) who impart knowledge of the Scripture, including the *ācarāṅga*; and all the *Sādhu* – the ascetics – who are ever engaged in observing the qualities that constitute the Three-Jewels *(ratnatraya)*. May my miseries be obliterated; may my karmas be destroyed; may I attain the trio of right faith-knowledge-conduct *(bodhi, ratnatraya)*; may I attain a superior state-of-existence

(gati); may I embrace, at the end of my life, a pious and dispassionate-death *(samādhimaraṇa)*; and may I attain the wealth of the qualities appertaining to Lord Jina!

॥ इति श्री पञ्चमहागुरु भक्ति ॥

* * *

श्री चतुर्विंशतितीर्थंकर भक्ति

Devotion to the Twenty-four Ford-makers *(Tīrthaṅkara)*

चउवीसं तित्थयरे उसहाइवीरपच्छिमे वंदे ।
सव्वे सगणगणहरे सिद्धे सिरसा णमंसामि ॥१॥

अर्थ – मैं श्री वृषभदेव को आदि लेकर श्री वीर (वर्धमान) पर्यन्त चौबीस तीर्थंकरों की वन्दना करता हूँ। साथ ही समस्त गण (मुनिसंघ) सहित गणधरों को तथा सिद्धों को मस्तक झुकाकर नमस्कार करता हूँ।

I pay my adoration to the twenty-four Ford-makers *(Tīrthaṅkara)* starting from the first, Lord Ṛṣabhadeva, to the last, Lord Vīra (Vardhamāna). Also, bowing down my head, I make obeisance to all the Apostles *(gaṇadhara)* together with the ascetics *(muni)* in their congregations *(gaṇa),* and to all the Liberated-souls *(Siddha)*.

ये लोकेऽष्टसहस्त्रलक्षणधरा ज्ञेयार्णवान्तर्गता,
ये सम्यग्भवजालहेतुमथनाश् चन्द्रार्कतेजोऽधिकाः ।
ये साध्विन्द्रसुराप्सरोगणशतैर्गीतप्रणुत्यार्चितास्,
तान्देवान् वृषभादिवीरचरमान् भक्त्या नमस्याम्यहम् ॥२॥

अर्थ – जो लोक में एक हजार आठ लक्षणों के धारक हैं; जो जीवादिक पदार्थरूपी महासागर के पारंगत हैं अर्थात् समस्त पदार्थों को एक साथ जानते हैं; जिन्होंने जन्म-मरण रूप संसार के जाल को बढ़ाने वाले समस्त कारणों को सर्वथा नष्ट कर दिया है; जो चन्द्र और सूर्य से भी अधिक तेजस्वी हैं; सैकड़ों साधु, इन्द्र, देव तथा अप्सराओं के समूह जिनकी स्तुति करते हैं, उनको नमस्कार कर पूजा करते हैं; ऐसे श्री वृषभदेव से लेकर श्री वीर (वर्धमान) पर्यन्त चौबीसों (तीर्थंकर) परमदेवों को मैं भक्तिपूर्वक नमस्कार करता हूँ।

Those who are adorned with one-thousand-and-eight pious marks *(lakṣaṇa)*; who have overwhelmed the immense ocean comprising all the objects-of-knowledge *(jñeya)*; who have vanquished completely the web of the causes that extends worldly-existence; who are brighter than the moon and the sun; whom hundred of ascetics *(sādhu)*, Indras, devas and groups of celestial-nymphs *(apsarā)* pay their adoration, and worship; I bow down, with extreme devotion, before such Supreme-devas [the Ford-makers *(Tīrthaṅkara)*], from Lord Ṛṣabhadeva to Lord Vīra (Vardhamāna).

नाभेयं देवपूज्यं जिनवरमजितं सर्वलोकप्रदीपम्,
सर्वज्ञं सम्भवाख्यं मुनिगणवृषभं नन्दनं देवदेवम् ।
कर्मारिघ्नं सुबुद्धिं वरकूलनिभं पद्मपुष्पाभिगन्धम्,
क्षान्तं दान्तं सुपार्श्वं सकलशशिनिभं चन्द्रनामानमीडे ॥३॥

अर्थ – देवों के द्वारा पूज्य ऐसे नाभि राजा के पुत्र श्री वृषभनाथ की मैं स्तुति करता हूँ। तीन लोक को प्रकाशित करने के लिए दीपक के समान श्री अजितनाथ की मैं स्तुति करता हूँ। मुनिजनों में श्रेष्ठ और सर्वज्ञ श्री संभवनाथ की मैं स्तुति करता हूँ। देवाधिदेव श्री अभिनन्दननाथ की मैं स्तुति करता हूँ। कर्मरूपी शत्रु का नाश करने वाले ऐसे श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्र की मैं स्तुति करता हूँ। श्रेष्ठ कमल के समान कान्ति को धारण करने वाले श्री पद्मप्रभ भगवान् की मैं स्तुति करता हूँ। क्षमावान् और इन्द्रियों को वश करने वाले सुपार्श्वनाथ भगवान् की मैं स्तुति करता हूँ। पूर्ण चन्द्रमा के समान सुशोभित चन्द्रप्रभ भगवान् की मैं स्तुति करता हूँ।

My adoration to Lord Ṛṣabhanātha, the son of King Nābhi. My adoration to Lord Ajitanātha, the lamp that illumines the three worlds. My adoration to Lord Saṃbhavanātha, the Omniscient *(sarvajña)*, supreme ascetic. My adoration to Lord Abhinandananātha, the Lord-of-the-lords *(devādhideva)*. My adoration to Lord Sumatinātha, the destroyer of enemies in form of the karmas. My adoration to Lord Padmaprabha, having the luster of an excellent lotus. My adoration to Lord Supārśvanātha, the epitome of forbearance *(kṣamā)* and control-of-the-senses. My adoration to Lord Candraprabha, enchanting like the full moon.

विख्यातं पुष्पदन्तं भवभयमथनं शीतलं लोकनाथम्,
श्रेयांसं शीलकोशं प्रवरनरगुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यम् ।

मुक्तं दान्तेन्द्रियाश्वं विमलमृषिपतिं सिंहसेन्यं मुनीन्द्रम्,
धर्मं सद्धर्मकेतुं शमदमनिलयं स्तौमि शान्तिं शरण्यम् ॥४॥

अर्थ – संसार के भय का नाश करने वाले और विख्यात भगवान् पुष्पदन्त (सुविधिनाथ) की मैं स्तुति करता हूँ। तीनों लोकों के स्वामी भगवान् शीतलनाथ की मैं स्तुति करता हूँ। शीलव्रत की निधि स्वरूप श्रेयांसनाथ भगवान् की मैं स्तुति करता हूँ। श्रेष्ठ मनुष्यों (गणधर आदि) के गुरु और अत्यन्त पूज्य वासुपूज्य भगवान् की मैं स्तुति करता हूँ। कर्मों से सर्वथा मुक्त होने वाले और इन्द्रिय रूपी अश्वों को वश में करने वाले ऐसे भगवान् विमलनाथ की मैं स्तुति करता हूँ। समस्त ऋषियों के स्वामी मुनिराज भगवान् अनन्तनाथ की मैं स्तुति करता हूँ। सद्धर्म की ध्वजा को धारण करने वाले भगवान् धर्मनाथ की मैं स्तुति करता हूँ। अत्यन्त शान्ति (शम) और इन्द्रिय-दमन के स्थान ऐसे भगवान् शान्तिनाथ भगवान् की मैं स्तुति करता हूँ।

My adoration to Lord Puṣpadanta (Suvidhinātha), the well-known destroyer of the fright of the worldly-existence. My adoration to Lord Śītalanātha, the Godhead of the three worlds. My adoration to Lord Śreyāṅsanātha, the treasure-crest of the virtuous vows. My adoration to Lord Vāsupūjya, the Most Worshipful guru of excellent men like the Apostles *(gaṇadhara)*. My adoration to Lord Vimalanātha who has freed himself from all karmas and exerts control over the horses in form of the senses. My adoration to Lord Anantanātha, the lord of the supreme ascetics. My adoration to Lord Dharmanātha, the bearer of the

flag of right dharma. My adoration to Lord Śāntinātha, the epitome of tranquility and control over the senses.

कुन्थुं सिद्धालयस्थं श्रमणपतिमरं त्यक्तभोगेषुचक्रम्,
मल्लिं विख्यातगोत्रं खचरगणनुतं सुव्रतं सौख्यराशिम् ।
देवेन्द्रार्च्यं नमीशं हरिकुलतिलकं नेमिचन्द्रं भवान्तम्,
पार्श्वं नागेन्द्रवन्द्यं शरणमहमितो वर्द्धमानं च भक्त्या ॥५॥

अर्थ – सिद्धालय में जाकर विराजमान और समस्त मुनियों के स्वामी भगवान् कुन्थुनाथ की मैं भक्तिपूर्वक शरण को प्राप्त होता हूँ। भोगोपभोग के चक्र को छोड़ने वाले ऐसे भगवान् अरनाथ की मैं भक्तिपूर्वक शरण को प्राप्त होता हूँ। (इक्ष्वाकुवंश) गोत्र से विख्यात ऐसे भगवान् मल्लिनाथ की मैं भक्तिपूर्वक शरण को प्राप्त होता हूँ। समस्त देव और विद्याधर जिनके लिए नमस्कार करते हैं और जो अनन्त सुख की राशि हैं ऐसे भगवान् मुनिसुव्रतनाथ की मैं भक्तिपूर्वक शरण को प्राप्त होता हूँ। देवेन्द्रों द्वारा पूजित ऐसे भगवान् नमिनाथ की मैं भक्तिपूर्वक शरण को प्राप्त होता हूँ। जो हरिवंश के तिलक हैं और भव के अन्त को प्राप्त हैं ऐसे भगवान् नेमिनाथ (अरिष्टनेमि) की मैं भक्तिपूर्वक शरण को प्राप्त होता हूँ। धरणेन्द्र देव के द्वारा वन्दित ऐसे भगवान् पार्श्वनाथ की तथा भगवान् वर्धमान स्वामी की भी मैं भक्तिपूर्वक शरण को प्राप्त होता हूँ।

With devotion, I take refuge in Lord Kunthunātha, the lord of all the ascetics and stationed now in the eternal abode of liberation. With devotion, I take refuge in Lord Aranātha who renounced all objects of enjoyment and re-enjoyment. With devotion, I take refuge in Lord

Mallinātha, known for his high lineage (Ikṣvāku). With devotion, I take refuge in Lord Munisuvratanātha, enjoying infinite bliss, and adored by all the devas and possessors of supernatural powers. With devotion, I take refuge in Lord Naminātha, worshipped by the lords of the devas. With devotion, I take refuge in Lord Neminātha (Ariṣṭanemi) who reached the end of transmigration after being the supreme distinction – *tilaka* – of the Hari dynasty. With devotion, I take refuge in Lord Pārśvanātha, worshipped by the Dharaṇendra deva. With devotion, I also take refuge in Lord Vardhmāna.

अञ्चलिका (Submission)

गद्य (Prose)

इच्छामि भंते! चउवीसतित्थयरभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। पञ्चमहाकल्लाणसम्पण्णाणं अट्ठमहापाडिहेरसहियाणं चउतीसातिसय-विसेससंजुत्ताणं बत्तीसदेविंदमणिमउडमत्थयमहिदाणं बलदेववासुदेव-चक्कहररिसिमुणिजइअणगारो व गूढाणं थुइसयसहस्सणिलयाणं उसहाइ वीरपच्छिम मंगलमहापुरिसाणं णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

अर्थ – हे भगवन्! मैंने चौबीस तीर्थंकर भक्ति सम्बन्धी कायोत्सर्ग किया। उसमें लगे दोषों की आलोचना करने की मैं इच्छा करता हूँ। जो गर्भ, जन्म आदि पाँच महाकल्याणकों से सुशोभित हैं; जो आठ महाप्रातिहार्यों सहित विराजमान हैं; जो चौंतीस विशेष अतिशयों से सुशोभित हैं; जो बत्तीस देवेन्द्रों के रत्नमय मुकुटों से सुशोभित मस्तकों से नमस्कार किए जाते हैं; बलदेव, वासुदेव, चक्रवर्ती, ऋषि, मुनि, यति और अनगार जिनकी सदा सेवा करते रहते हैं; और लाखों स्तुतियों के पात्र ऐसे श्री वृषभदेव से लेकर महावीर पर्यन्त चौबीसों महापुरुषों अर्थात् तीर्थंकरों की मैं सदा–काल अर्चा करता हूँ, पूजा करता हूँ, वन्दना करता हूँ, नमस्कार करता हूँ। मेरे दु:खों का क्षय हो, कर्मों का क्षय हो, मुझे बोधि (रत्नत्रय) की प्राप्ति हो, उत्तम गति में गमन हो, समाधिमरण हो, तथा जिनेन्द्रदेव के गुणों की सम्पत्ति मुझे प्राप्त हो।

O Lord! I have performed devotion to the twenty-four Ford-makers (*Tīrthaṅkara)* with detachment-to-own-body *(kāyotsarga)*. I now desire confession *(ālocanā)* for faults therein. I incessantly adore, worship, make obeisance, and salute all the twenty-four Ford-makers *(Tīrthaṅkara),* starting from Ṛṣabhadeva to Mahāvīra. The life of these Ford-makers *(Tīrthaṅkara)* is marked by the five most auspicious events *(kalyāṇaka),* including that which takes place when their soul enters the Mother's womb *(garbha kalyāṇaka)* and that which takes place when they take birth *(janma kalyāṇaka)*. They are accompanied by eight divine-splendors *(prātihārya)* in their heavenly-pavilion *(samava-saraṇa)*. Thirty-four miraculous-happenings *(atiśaya)* appear during their lifetime. Thirty two lords of the

devas (the Indras) bow down their heads, sporting gems-studded diadems, before them. Excellent personages like *baladeva, vāsudeva, cakravartī, ṛṣi, muni, yati* and *anagāra* are ever present in their service. They are worthy of adoration, hundreds of thousands times. May my miseries be obliterated; may my karmas be destroyed; may I attain the trio of right faith-knowledge-conduct *(bodhi, ratnatraya)*; may I attain a superior state-of-existence *(gati)*; may I embrace, at the end of my life, a pious and dispassionate-death *(samādhimaraṇa)*; and may I attain the wealth of the qualities appertaining to Lord Jina!

॥ इति श्री चतुर्विंशतितीर्थंकर भक्ति ॥

* * *

This preview does not contain pages 155 to 200.

seekers of soul's release was attained from the imposing Ūrjayanta (Giranāra) mountain by the (twenty-second) Ford-maker *(Tīrthaṅkara)* Lord Ariṣṭnemi (Lord Neminātha) as soon as he destroyed the eight kinds of karmas.

पावापुरस्य बहिरुन्नत भूमिदेशे,
पद्मोत्पलाकुलवतां सरसां हि मध्ये ।
श्री वर्द्धमान जिनदेव इति प्रतीतो,
निर्वाणमाप भगवान्प्रविधूतपाप्मा ॥२४॥

अर्थ – पावापुर नगर के बाहर, अनेक प्रकार के कमलों से व्याप्त सरोवर के मध्य-भाग में स्थित ऊँचे भूमि प्रदेश पर, श्री वर्धमान इस नाम से प्रसिद्ध भगवान् ने समस्त पापों का क्षय करके निर्वाण की प्राप्ति की।

On the outskirts of Pāvāpura, on a highland situated in the middle of a lake, abound in various kinds of lotuses, the celebrated (twenty-fourth) Ford-maker *(Tīrthaṅkara)* Lord Vardhamāna attained liberation as he destroyed all evils.

शेषास्तु ते जिनवरा जितमोहमल्लाः,
ज्ञानार्कभूरिकिरणैरवभास्य लोकान् ।
स्थानं परं निरवधारित सौख्यनिष्ठं,
सम्मेदपर्वततले समवापुरीशाः ॥२५॥

अर्थ - मोहरूपी मल्ल को जीतने वाले ऐसे जो शेष (बीस) तीर्थंकर भगवान् हैं, वे केवलज्ञान रूपी सूर्य की अनेकानेक किरणों से (तीनों) लोकों को प्रकाशित करते हुए, सम्मेदशिखर पर्वत पर से, अनन्त सुख से व्याप्त उत्कृष्ट स्थान अर्थात् मोक्ष को प्राप्त हुए थे।

After vanquishing all dirt of delusion *(moha)*, the remaining (twenty) Ford-makers *(Tīrthaṅkara)* first illumined the three worlds by the multitude of rays emanating from the sun in form of their infinite-knowledge *(kevalajñāna)* and thereafter attained the ineffable bliss of liberation from the Sammedaśikhara mountain.

आद्यश्चतुर्दश-दिनैर्विनिवृत्तयोगः,
षष्ठेन निष्ठितकृतिर्जिन वर्द्धमानः ।
शेषाविधूत घनकर्म निबद्धपाशाः,
मासेन ते यतिवरांस्त्वभवन्वियोगाः ॥२६॥

अर्थ - प्रथम तीर्थंकर भगवान् वृषभदेव की आयु जब चौदह दिन की रह गई थी तब उन्होंने योग-निरोध (द्रव्यमन-वचन-काय की क्रियाओं का निरोध) किया। भगवान् वर्धमान की आयु जब दो दिन की रह गई थी तब उन्होंने योग-निरोध किया और शेष (बाईस) तीर्थंकरों ने एक माह की आयु शेष रहने पर योग-निरोध किया। इस प्रकार उन्होंने अत्यन्त दृढ़ कर्मों के बन्धन-जाल को सर्वथा नष्ट कर मुक्ति को प्राप्त किया था।

The first Ford-maker *(Tīrthaṅkara)* Lord Ṛṣabhadeva

blocked the activities of the material-mind, speech and body – *yoga-nirodha* – when fourteen days of his life were remaining. Lord Vardhamāna blocked such activities when two days of his life were remaining. The remaining (twenty-two) Ford-makers *(Tīrthaṅkara)* did the same when one month of their life was remaining. This way, all of them attained liberation through complete annihilation of the web of bondage of highly dogged karmas.

माल्यानि वाक्स्तुतिमयैः कुसुमैः सुदृब्धा-
न्यादाय मानसकरैरभितः किरन्तः ।
पर्येम आदृतियुता भगवन्निषद्याः,
सम्प्रार्थिता वयमिमे परमां गतिं ताः ॥२७॥

अर्थ – वचनों के स्तुतिमय पुष्पों से गूँथी हुई सुन्दर मालाओं को मनरूपी हाथों में ग्रहण करके भगवान् की निर्वाण-भूमियों के चारों ओर चढ़ाते हुए हम लोग आदर-सहित परिक्रमा करते हैं। साथ ही हमको परमगति या सिद्धगति की प्राप्ति हो, ऐसी प्रार्थना करते हैं।

We have prepared beautiful garlands made of the flowers of our words of adoration and are holding these in our hands, which represent our minds. With great reverence, we circumambulate the sacred places of liberation of the Ford-makers *(Tīrthaṅkara),* offering

these garlands on all sides of the way. While doing this, we pray for the attainment of the supreme state-of-liberation for ourselves.

शत्रुञ्जये नगवरे दमितारिपक्षाः,
पण्डोः सुताः परमनिर्वृतिमभ्युपेताः ।
तुंग्यां तु संगरहितो बलभद्रनामा,
नद्यास्तटे जिनरिपुश्च सुवर्णभद्रः ॥२८॥

द्रोणीमति प्रबलकुण्डल मेढ्रके च,
वैभारपर्वततले वरसिद्धकूटे ।
ऋष्यद्रिके च विपुलाद्रिबलाहके च,
विन्ध्ये च पोदनपुरे वृषदीपके च ॥२९॥

सह्याचले च हिमवत्यपि सुप्रतिष्ठे,
दण्डात्मके गजपथे पृथुसारयष्टौ ।
ये साधवो हतमलाः सुगतिं प्रयाताः,
स्थानानि तानि जगति प्रथितान्यभूवन् ॥३०॥

अर्थ – कर्मरूपी शत्रुओं का नाश करने वाले पण्डु राजा के पुत्र (युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन, ये तीन भाई) पवित्र शत्रुंजय पर्वत से मोक्ष पधारे। समस्त परिग्रहों से रहित बलदेव तुंगीगिरि-पर्वत से मोक्ष पधारे। कर्मरूपी शत्रुओं का नाश करने वाले सुवर्णभद्र मुनि नदी के किनारे से (पावागिरि-पर्वत के पास चेलना नदी के किनारे से) मोक्ष पधारे। द्रोणगिरि, उत्तम कुण्डल-पर्वत,

मेढ्रगिरि (मुक्तागिरि), वैभार-पर्वत, उत्तम सिद्धवरकूट, ऋष्यद्रि (श्रमणगिरि अथवा सोनागिरि), विपुलाचल, बलाहक, विन्ध्य-पर्वत, धर्म-प्रकाशक पोदनपुर, इसके अलावा सह्य-पर्वत, अत्यन्त प्रतिष्ठित हिमालय-पर्वत, दण्डाकार गजपंथा-पर्वत और वंशस्थ-पर्वत पर से बहुत से साधु कर्मों का क्षय कर उत्तम सिद्धगति को प्राप्त हुए हैं, वे सभी स्थान इस जगति पर प्रसिद्ध हुए।

After destroying the enemies in form of the karmas, the (three) sons (Yudhiṣṭira, Bhīma and Arjuna) of King Paṇḍu attained liberation from the Śatruṅjaya mountain. Free from all objects-of-attachment *(parigraha)*, Baladeva attained liberation from the Tuṅgīgiri mountain. After vanquishing all enemies in form of the karmas, the ascetic Suvarṇabhadra attained liberation from the banks of the river (river Celanā near the Pāvāgiri mountain). The Droṇagiri, the excellent Kuṇḍala mountain, the Muktāgiri, the Vaibhāra mountain, the excellent Siddhavarakūṭa, the Sonāgiri, the Vipulācala, the Balāhaka, the Vindhya mountain, the illuminator of dharma Podanapura, the Sahya mountain, the well-known Himālaya mountain, the pole-like Gajapaṅtha mountain, and the Vaṃśastha mountain are the places from where many ascetics have attained the excellent state of liberation after destroying their karmas. All these places are famous on this earth.

इक्षोर्विकार रसपृक्त गुणेन लोके,
पिष्टोऽधिकं मधुरतामुपयाति यद्वत् ।
तद्वच्च पुण्यपुरुषैरुषितानि नित्यं,
स्थानानि तानि जगतामिह पावनानि ॥३१॥

अर्थ – जिस प्रकार ईख के रस से निर्मित गुड़ से मिश्रित आटा अधिक मधुरता को प्राप्त हो जाता है, उसी प्रकार पुण्यपुरुष/महापुरुष (श्रमण आदि) जहाँ-जहाँ निवास करते हैं, वे सब स्थान इस संसार के प्राणियों को सदैव पवित्र करने वाले होते हैं।

As jaggery, made of the juice of sugarcane, when mixed with the wheat flour, imparts its sweetness to it, in the same way, all places which have been the abodes of the most-meritorious souls, like the advanced ascetics, unfailingly impart piousness to the living-beings in the world.

इत्यर्हतां शमवतां च महामुनीनां,
प्रोक्ता मयात्र परिनिर्वृति भूमिदेशाः ।
ते मे जिना जितभया मुनयश्च शान्ताः,
दिश्यासुराशु सुगतिं निरवद्यसौख्याम् ॥३२॥

अर्थ – इस प्रकार मेरे द्वारा यहाँ तीर्थंकर भगवान् की तथा अत्यन्त शान्तता को प्राप्त महामुनियों की जो निर्वाण-भूमियाँ कही गई हैं, वे सब तथा सप्तभयों को

जीतने वाले तीर्थंकर जिनदेव और शान्त मुनिराज मेरे लिए शीघ्र निर्दोष सुख से युक्त, उत्तम मोक्ष-गति को प्रदान करने वाले हों।

In this adoration, I have named the sacred places of liberation of the Ford-makers *(Tīrthaṅkara)* and of the great ascetics characterized by supreme tranquility. May all these places, the Ford-makers *(Tīrthaṅkara)* who have vanquished the sevenfold fears, and the tranquil ascetics endow me with the supreme state of liberation, free from all imperfections.

क्षेपक श्लोक (Concluding Verses)

कैलाशाद्रौ मुनीन्द्रः पुरुरपदुरितो मुक्तिमाप प्रणूतः,
चम्पायां वासुपूज्यस्त्रिदशपतिनुतो नेमिरप्यूर्जयन्ते ।
पावायां वर्धमानस्त्रिभुवनगुरवो विंशतिस्तीर्थनाथाः,
सम्मेदाग्रे प्रजग्मुर्ददतु विनमतां निर्वृत्तिं नो जिनेन्द्राः ॥३३॥

अर्थ - पापों से रहित तथा मुनियों के स्वामी ऐसे तीर्थंकर भगवान् श्री वृषभदेव कैलाश पर्वत पर से मुक्ति को पधारे। इन्द्रों के द्वारा नमस्कृत श्री वासुपूज्य भगवान् चम्पापुर से मोक्ष पधारे। श्री अरिष्टनेमि (नेमिनाथ) भगवान् ऊर्जयन्त-गिरनार पर्वत पर से मोक्ष पधारे। श्री वर्धमान स्वामी पावापुर से मोक्ष पधारे। तथा तीनों लोकों के गुरु, अवशिष्ट बीस तीर्थंकर सम्मेदशिखर से मोक्ष पधारे। ये सभी (चौबीस) तीर्थंकर भगवान् नमस्कार करने वाले हम सबको निर्वाणपद प्रदान करें।

After vanquishing all evils, the Lord-of-the-ascetics and the Most Worshipful Ford-maker *(Tīrthaṅkara)* Lord Ṛṣabhadeva attained liberation from the Kailaśa mountain. Worshipped by the lords-of-the-devas (Indra), the Ford-maker Lord Vāsupūjya attained liberation from Campāpura. The Ford-maker Lord Ariṣṭnemi (Lord Neminātha) attained liberation from the Ūrjayanta (Giranāra) mountain. The Ford-maker Lord Vardhmāna attained liberation from Pāvāpura. Supreme Teachers of the three worlds, the remaining twenty Ford-makers attained liberation from the Sammedaśikhara mountain. May these (twenty-four) Ford-makers provide us, who make obeisance to their Lotus-Feet, the supreme state-of-liberation.

गोर्गजोश्वः कपिः कोकः सरोजः स्वस्तिकः शशी ।
मकरः श्रीयुतो वृक्षो गण्डो महिष सूकरौ ॥३४॥

सेधा-वज्र-मृगच्छागाः पाठीनः कलशस्तथा ।
कच्छपश्चोत्पलं शंखो नागराजश्च केसरी ॥३५॥

अर्थ - यहाँ क्रमशः चौबीस तीर्थंकरों के चिह्न बताये गए हैं- 1) वृषभनाथजी का बैल, 2) अजितनाथजी का हाथी, 3) संभवनाथजी का घोड़ा, 4) अभिनन्दननाथजी का बन्दर, 5) सुमतिनाथजी का चकवा, 6) पद्मप्रभजी का लालकमल, 7) सुपार्श्वनाथजी का स्वस्तिक (साथिया), 8) चन्द्रप्रभजी का

चन्द्रमा, 9) पुष्पदन्तजी का मगर, 10) शीतलनाथजी का कल्पवृक्ष, 11) श्रेयांसनाथजी का गेंडा, 12) वासुपूज्यजी का भैंसा, 13) विमलनाथजी का सूकर, 14) अनन्तनाथजी का सेही, 15) धर्मनाथजी का वज्रदण्ड, 16) शान्तिनाथजी का हरिण, 17) कुन्थुनाथजी का बकरा, 18) अरहनाथजी का मीन (मछली), 19) मल्लिनाथजी का कलश, 20) मुनिसुव्रतनाथजी का कछुआ, 21) नमिनाथजी का नीलकमल, 22) नेमिनाथजी का शंख, 23) पार्श्वनाथजी का सर्प, 24) वर्धमान (महावीर) स्वामी का सिंह।

Identification marks of the twenty-four Ford-makers *(Tīrthaṅkara)* are mentioned here:

1) Lord Ṛṣabhadeva – bull; 2) Lord Ajitanātha – elephant; 3) Lord Saṃbhavanātha – horse; 4) Lord Abhinandananātha – monkey; 5) Lord Sumatinātha – curlew; 6) Lord Padmaprabha – red-lotus; 7) Lord Supārśvanātha – *svastika*; 8) Lord Candraprabha – moon; 9) Lord Puṣpadanta – crocodile; 10) Lord Śītalanātha – *kalpavṛkṣa*; 11) Lord Śreyāṅsanātha – rhinoceros; 12) Lord Vāsupūjya – male-buffalo; 13) Lord Vimalanātha – boar; 14) Lord Anantanātha – porcupine; 15) Lord Dharmanātha – thunderbolt; 16) Lord Śāntinātha – deer; 17) Lord Kunthunātha – he-goat; 18) Lord Arahanātha – fish; 19) Lord Mallinātha – urn; 20) Lord Munisuvratanātha – tortoise; 21) Lord Naminātha – blue-lotus; 22) Lord Neminātha – conch-shell; 23) Lord Pārśvanātha – snake; 24) Lord Vardhmāna (Mahāvīra) – lion.

शान्ति कुन्थ्वर कौरव्या यादवौ नेमिसुव्रतौ ।
उग्रनाथौ पार्श्ववीरौ शेषा इक्ष्वाकुवंशजाः ॥३६॥

अर्थ – शान्तिनाथजी, कुन्थुनाथजी और अरहनाथजी ये तीन तीर्थंकर कुरुवंश में उत्पन्न हुए; नेमिनाथजी और मुनिसुव्रतनाथजी ये दो तीर्थंकर यदुवंश में उत्पन्न हुए; पार्श्वनाथजी उग्रवंश में तथा वर्धमान (महावीर) स्वामी नाथवंश में उत्पन्न हुए; शेष सत्रह तीर्थंकर इक्ष्वाकुवंश में उत्पन्न हुए।

Three Ford-makers *(Tīrthaṅkara)*, Lord Śāntinātha, Lord Kunthunātha and Lord Arahanātha, were born in the Kuru dynasty; two Ford-makers, Lord Neminātha and Lord Munisuvratanātha, were born in the Yadu dynasty; Lord Pārśvanātha was born in the Ugra dynasty; Lord Vardhmāna (Mahāvīra) was born in the Nātha dynasty; the remaining seventeen Ford-makers were born in the Ikṣvāku dynasty.

अञ्चलिका (Submission)

गद्य (Prose)

इच्छामि भंते! परिणिव्वाणभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। इमम्मि अवसप्पिणीए चउत्थ समयस्स पच्छिमे भाए आउट्ठमासहीणे वासचउक्कम्मि सेसकालम्मि पावाए णयरीए कत्तिय मासस्स किण्ह चउदसिए रत्तीए सादीए णक्खत्ते पच्चूसे भयवदो महदि महावीरो वड्ढमाणो सिद्धिं गदो। तिसुवि लोएसु भवणवासिय-वाणविंतर जोयिसिय कप्पवासियत्ति चउव्विहा देवा सपरिवारा दिव्वेण ण्हाणेण,

दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण अक्खेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण दीवेण, दिव्वेण धूवेण, दिव्वेण वासेण, णिच्चकालं अंचंति, पूजंति, वंदंति, णमंसंति परिणिव्वाण महाकल्लाण पुज्जं करंति। अहमवि इह संतो तत्थ संताइयं णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

अर्थ - हे भगवन्! मैंने परिनिर्वाणभक्ति संबन्धी कायोत्सर्ग किया। उसमें लगे दोषों की आलोचना करने की मैं इच्छा करता हूँ। इस अवसर्पिणी सम्बन्धी चतुर्थकाल के पिछले भाग में जब तीन वर्ष साढ़े आठ माह कम थे, पावापुर नगर से कार्तिक मास में कृष्ण चतुर्दशी की रात्रि में स्वाति नक्षत्र रहते हुए प्रभात काल में भगवान् महति महावीर निर्वाण को प्राप्त हुए। तीनों लोकों में रहने वाले भवनवासी, वानव्यन्तर/व्यन्तरवासी, ज्योतिषी व कल्पवासी चारों प्रकार के देव दिव्य जल, दिव्य गन्ध, दिव्य अक्षत, दिव्य पुष्प, दिव्य नैवेद्य, दिव्य दीप, दिव्य धूप, दिव्य फलों के द्वारा सदाकाल अर्चा करते हैं, पूजा करते हैं, वन्दना करते हैं, नमस्कार करते हैं और परिनिर्वाण महाकल्याणक मनाते हैं। मैं भी यहाँ रहते हुए वैसा ही होकर उन निर्वाणकल्याणकों के क्षेत्रों की सदा-काल अर्चा करता हूँ, पूजा करता हूँ, वन्दना करता हूँ, नमस्कार करता हूँ। मेरे दुःखों का क्षय हो, कर्मों का क्षय हो, बोधि (रत्नत्रय) की प्राप्ति हो, उत्तम गति में गमन हो, समाधिमरण हो, तथा जिनेन्द्रदेव के गुणों की सम्पत्ति मुझे प्राप्त हो।

O Lord! I have performed Devotion to Liberation with detachment-to-own-body *(kāyotsarga)*. I now desire confession *(ālocanā)* for faults therein. In this descending *(avasarpiṇī)* cyclic of time, at the fag end of the fourth period – when three years and eight-and-a-half months were remaining – Lord Mahāvīra attained

liberation, morning-time, on the fourteenth day of the dark half of the month of Kārtika – *kārtika kṛṣṇa caturdaśī* – with moon in *svāti* constellation. All four kinds of devas – residential *(bhavanavāsī)*, peripatetic *(vyantara)*, stellar *(jyotiṣka)* and heavenly *(vaimānika)* – celebrated with great devotion, along with their families, the liberation of Lord Mahāvīra. They always adore, worship, make obeisance, and salute these pious places of liberation using eight auspicious substances – divine *jala* (pure water), divine *gandha* (essence like sandalwood or saffron), divine *akṣata* (rice without husk), divine *puṣpa* (flower, represented by saffron coloured rice), divine *naivedya* (pieces of coconut), divine *dīpa* (camphor/*ghee*/oil lamp), divine *dhūpa* (incense), and divine *phala* (fruit like almond or coconut). I too, from here itself, adore, worship, make obeisance and salute all these pious places of liberation. May my miseries be obliterated; may my karmas be destroyed; may I attain the trio of right faith-knowledge-conduct *(bodhi, ratnatraya)*; may I attain a superior state-of-existence *(gati)*; may I embrace, at the end of my life, a pious and dispassionate-death *(samādhimaraṇa)*; and may I attain the wealth of the qualities appertaining to Lord Jina!

॥ इति श्री निर्वाण भक्ति ॥

* * *

श्री नन्दीश्वर भक्ति

Devotion to Nandīśvara

(आर्यागीति)

त्रिदशपतिमुकुट तट गतमणि,
गणकर निकर सलिलधाराधौत ।
क्रमकमलयुगलजिनपति रुचिर,
प्रतिबिम्बविलय विरहितनिलयान् ॥१॥

निलयानहमिह महसां सहसा,
प्रणिपतन पूर्वमवनौम्यवनौ ।
त्रय्यां त्रय्या शुद्ध्या निसर्ग,
शुद्धान्विशुद्धये घनरजसाम् ॥२॥

अर्थ - यहाँ तीनों लोकों में जो तेज के गृह अर्थात् प्रकाश के पुञ्ज हैं, स्वभाव से शुद्ध हैं, इन्द्रों के मुकुटों के किनारों पर लगी मणियों की किरणों रूपी जलधारा से जिनके चरण-कमलों का अभिषेक किया जाता है, ऐसे भगवान् जिनेन्द्रदेव की मनोज्ञ प्रतिमाओं वाले अविनाशी (अकृत्रिम) जिनमन्दिरों को शीघ्र ही पृथ्वी पर मस्तक का स्पर्श करते हुए, तीन प्रकार (मन-वचन-काय) की शुद्धि-पूर्वक, घनीभूत (अति सघन) कर्मरज से विशुद्धि के लिए, मैं नमस्कार करता हूँ।

In the three worlds, these are dazzling, and pure by nature. The rays emanating from the jewels studded on the sides of the diadems of the Indras perform, so to speak, the anointment of their Lotus-Feet. Without delay, I bow down and worship all indestructible, natural *(akṛtrima)* Temples *(caityālaya)* housing such enchanting Idols *(pratimā)* of Lord Jina. I do this with threefold purity of the mind, speech and body; I bow down before these in a manner that my forehead touches the ground. This I do so as to purify my soul from extremely dogged dirt of the karmas.

भावनसुर-भवनेषु द्वासप्तति-शत-सहस्त्र-संख्याभ्यधिकाः ।
कोट्यः सप्त प्रोक्ता भवनानां भूरि-तेजसां भुवनानाम् ॥३॥

अर्थ - भवनवासी देवों के भवनों में स्थित अत्यन्त तेज को धारण करने वाले ऐसे अकृत्रिम चैत्यालयों (जिनमन्दिरों) की संख्या सात करोड़ बहात्तर लाख (7,72,00,000) कही गई है।

In the abodes of the residential devas *(bhavanavāsī deva)*, there are seven crore and seventy-two lakh (7,72,00,000) most effulgent, natural *(akṛtrima)* Temples *(caityālaya)*.

त्रिभुवन-भूत-विभूनां संख्यातीतान्यसंख्यगुणयुक्तानि ।
त्रिभुवनजननयनमनः प्रियाणिभवनानि भौमविबुध-नुतानि ॥४॥

अर्थ - असंख्य गुणों से युक्त, तीन-लोक के जीवों के नेत्र व मन को प्रिय लगने वाले, व्यन्तर देवों के द्वारा नमस्कृत, ऐसे तीन-लोक के समस्त प्राणियों के नाथ/स्वामी श्री जिनेन्द्रदेव के (व्यन्तरलोक में) अकृत्रिम चैत्यालयों (जिनमन्दिरों) की संख्या असंख्यात कही गई है।

These are endowed with myriad qualities, attract the eyes and minds of the living-beings of the three worlds, and are worshipped by the peripatetic devas *(vyantara deva)*. Such natural *(akṛtrima)* Temples *(caityālaya)* of Lord Jina, the Master of the three worlds, are innumerable.

यावन्ति सन्ति कान्त-ज्योतिर्लोकाधिदेवताभिनुतानि ।
कल्पेऽनेकविकल्पे कल्पातीतेऽहमिन्द्र-कल्पानल्पे ॥५॥

विंशतिरथत्रिसहिता सहस्त्रगुणिता च सप्तनवतिः प्रोक्ता ।
चतुरधिकाशीतिरतः पञ्चक-शून्येन विनिहतान्यनघानि ॥६॥

अर्थ - ज्योतिषी देवों के (असंख्यात) विमानों में, ज्योतिर्लोक के कान्तियुक्त अधिदेवताओं द्वारा नमस्कार को प्राप्त, उतने ही अर्थात् असंख्यात अकृत्रिम चैत्यालय हैं।

अनेक भेद वाले कल्पों में अर्थात् कल्पवासी देवों के सोलह स्वर्गों में, तथा अहमिन्द्रों की कल्पना वाले अर्थात् कल्पातीत – नौ ग्रैवेयक, नौ अनुदिश और पाँच अनुत्तर – विमानों में, पापों से मुक्त अकृत्रिम चैत्यालयों (जिनमन्दिरों) की संख्या पाँच शून्य से सहित चौरासी (84,00,000), एक हजार से गुणित सत्तानवे (97,000) और तीन सहित बीस (23) – कुल 84,97,023 – है।

In the innumerable abodes/celestial-cars *(vimāna)* of the stellar *(jyotiṣka)* devas there are the same number of, i.e., innumerable, natural *(akṛtrima)* Temples *(caityālaya)* of Lord Jina, worshipped by the lords of the stellar devas.

In the abodes/celestial-cars *(vimāna)* of the heavenly *(vaimānika)* devas that are of many kinds – sixteen *kalpa*, nine *graiveyaka*, nine *anudiśa*, and five *anuttara* – there are evil-free and natural *(akṛtrima)* Temples *(caityālaya)* of Lord Jina comprising the following numbers: eighty-four followed by five zeros (84,00,000), plus ninety-seven multiplied by one thousand (97,000), plus three and twenty (23). The total comes to 84,97,023.

अष्टापञ्चाशदतश्-चतुःशतानीह मानुषे च क्षेत्रे ।
लोकालोकविभाग-प्रलोकनालोक संयुजां जयभाजाम् ॥७॥

अर्थ – लोक और अलोक के विभाग को देखने के लिए प्रकाश के समान, केवलदर्शन से सुशोभित होने वाले और घातिया कर्मों का नाश करने के कारण

सर्वत्र विजय को प्राप्त ऐसे भगवान् अर्हन्तदेव के अकृत्रिम चैत्यालय (जिनमन्दिर) इस मनुष्य-क्षेत्र (तिर्यग्लोक) में चार सौ अट्ठावन (458) हैं।

In the transverse-world *(tiryag-loka)*, that includes the human-region *(manuṣya-kṣetra)*, there are a total of four hundred and fifty-eight (458) natural *(akṛtrima)* Temples *(caityālaya)* of Lord Jina, the light that illumines the division between the universe *(loka)* and the non-universe *(aloka),* the possessor of infinite-perception *(kevaladarśana),* and the almighty having destroyed the inimical *(ghātiyā)* karmas.

नवनवचतुःशतानि च सप्त च नवतिः सहस्रगुणिताः षट् च ।
पञ्चाशत्पञ्चवियत्प्रहताः पुनरत्र कोट्योऽष्टौ प्रोक्ताः ॥८॥

एतावन्त्येव सतामकृत्रिमाण्यथ जिनेशिनां भवनानि ।
भुवनत्रितये-त्रिभुवनसुरसमिति-समर्च्यमान-सत्प्रतिमानि ॥९॥

अर्थ - तीनों लोकों में तीन लोक के देवों के समूह से पूजित जिनेन्द्रदेव की प्रशस्त प्रतिमाओं वाले अकृत्रिम चैत्यालय इस प्रकार से हैं- नौ से गुणित नौ अर्थात् 81; तथा चार सौ अर्थात् 400; तथा एक हजार से गुणित सत्तानवे अर्थात् 97,000; तथा पाँच शून्यों से सहित छप्पन अर्थात् 56,000,00; पुनः आठ करोड़ अर्थात् 8,00,00,000; कुल जोड़ = 8,56,97,481 अकृत्रिम चैत्यालय हैं। (इसके अलावा, ज्योतिर्लोक तथा व्यन्तरलोक प्रत्येक में अकृत्रिम चैत्यालयों की संख्या असंख्यात कही गई है।)

In the three worlds the natural *(akṛtrima)* Temples *(caityālaya)* housing sacred and pious Idols of Lord Jina, worshipped by the devas of the three worlds are as follows: nine multiplied by nine = 81; plus four hundred = 400; plus one thousand multiplied by ninety-seven = 97,000; plus fifty-six followed by five zeros = 56,00,000; plus eight crores = 8,00,00,000. The total comes to 8,56,97,481. [Besides these, there are innumerable natural *(akṛtrima)* Temples *(caityālaya)* of Lord Jina in the abodes/celestial-cars *(vimāna)* of the stellar *(jyotiṣka)* and the peripatetic *(vyantara)* devas.]

वक्षाररुचककुण्डलरौप्यनगोत्तर-कुलेषुकारनगेषु ।
कुरुषु च जिनभवनानि त्रिशतान्यधिकानि तानि षड्विंशत्या
॥१०॥

अर्थ - वक्षारगिरि, रुचकगिरि, कुण्डलगिरि, रजताचल/विजयार्ध पर्वत, मानुषोत्तर, कुलाचल और इष्वाकार पर्वतों पर, इसके अलावा देवकुरु और उत्तरकुरु में, अकृत्रिम चैत्यालयों की संख्या छब्बीस अधिक तीन सौ (= 326) है। [इनमें पाँच मेरु सम्बन्धी 80 तथा नन्दीश्वर सम्बन्धी 52 चैत्यालय मिलाने से कुल 458 की संख्या (देखें श्लोक 7) प्राप्त हो जाती है।]

On Vakṣāragiri, Rucakagiri, Kuṇḍalagiri, Rajatācala/ Vijayārdha mountain, and on Mānuṣottara, Kulācala and Iṣvākāra mountains, plus in the Devakuru and Uttarakuru there are a total of three hundred and

twenty-six (326) natural *(akṛtrima)* Temples *(caityālaya)* of Lord Jina. [When 80 Temples of Meru and 52 of Nandīśvara are added to 326, the total comes to 458, as mentioned for the transverse-world *(tiryag-loka)* in verse 7.]

नन्दीश्वरसद्द्वीपे नन्दीश्वर जलधि परिवृते धृतशोभे ।
चन्द्रकरनिकर-सन्निभरुन्द्रयशोविततदिङ्महीमण्डलके ॥११॥

तत्रत्याञ्जन-दधिमुख-रतिकर-पुरुनग-वराख्य-पर्वतमुख्याः ।
प्रतिदिश-मेषामुपरि त्रयोदशेन्द्रार्चितानि जिनभवनानि ॥१२॥

अर्थ - चन्द्रमा की किरणों के समूह के समान सघन यश से जिसने समस्त दिशाओं का समूह और समस्त पृथ्वीमण्डल व्याप्त कर दिया है अर्थात् जिसकी कीर्ति पृथ्वी पर फैल रही है; जो नन्दीश्वर नामक सागर से घिरा हुआ है; जो शोभा को धारण कर रहा है; ऐसे नन्दीश्वर नामक शुभ द्वीप की चार दिशाओं में एक-एक अञ्जनगिरि है। प्रत्येक अञ्जनगिरि के चारों ओर (चार दिशाओं में) एक-एक दधिमुख पर्वत है। वे (चार) दधिमुख पर्वत बावड़ियों में हैं। प्रत्येक बावड़ी के (दो) किनारे कोनों पर रतिकर नामक पर्वत हैं। प्रत्येक अञ्जनगिरि पर और प्रत्येक दधिमुख पर्वत पर एक-एक अकृत्रिम चैत्यालय है। बावड़ियों के बाह्य दोनों कोनों पर जो रतिकर पर्वत हैं उन पर भी एक-एक अकृत्रिम चैत्यालय है। (अर्थात् नन्दीश्वर द्वीप की एक-एक दिशा में 13 अकृत्रिम चैत्यालय हैं - एक अञ्जनगिरि पर, चार दधिमुख पर्वतों पर और आठ रतिकर पर्वतों पर। इस प्रकार नन्दीश्वर द्वीप की चारों दिशाओं में कुल 52 अकृत्रिम चैत्यालय हैं।) इन चैत्यालयों में इन्द्र आकर पूजा करते हैं।

Whose overwhelming renown has pervaded the whole of earth like the widespread rays of the moon, which is circumvented by the ocean called Nandīśvara, and which is endowed with beauty, such pious Nandīśvara continent *(dvīpa)* has one Aṅjanagiri each in its four main directions. Each Aṅjanagiri has one Dadhimukha mountain in each of its four directions. These (four) Dadhimukha mountains are surrounded by water-bodies. On each outer corner of these water-bodies, there is one Ratikara mountain. On top of each Aṅjanagiri and each Dadhimukha mountain there is one natural *(akṛtrima)* Temple *(caityālaya)* of Lord Jina. On top of each Ratikara mountain, too, there is one natural Temple of Lord Jina. [Thus, in each direction, out of the four main directions, of the Nandīśvara continent *(dvīpa)*, there are thirteen natural Temples of Lord Jina – one on Aṅjanagiri, four on Dadhimukha mountains, and eight on Ratikara mountains.] Lords of the devas (the Indras) visit these Temples to perform adoration.

आषाढकार्तिकाख्ये फाल्गुनमासे च शुक्लपक्षेऽष्टम्याः ।
आरभ्याष्टदिनेषु च सौधर्मप्रमुख-विबुधपतयो भक्त्या ॥१३॥

तेषु महामहमुचितं प्रचुराक्षत-गन्ध-पुष्प-धूपैर्दिव्यैः ।
सर्वज्ञप्रतिमानामप्रतिमानां प्रकुर्वते सर्वहितम् ॥१४॥

अर्थ – आषाढ़, कार्तिक और फाल्गुन मास में शुक्लपक्ष की अष्टमी से लेकर आठ दिन तक सौधर्म इन्द्र को आदि लेकर समस्त इन्द्र बड़ी भक्ति से वहाँ पर (नन्दीश्वर द्वीप) जाते हैं और वहाँ विराजमान उन उपमातीत सर्वज्ञदेव की प्रतिमाओं की प्रचुर तथा दिव्य अक्षत, गन्ध, पुष्प, और धूप से सर्वहितकारी तथा अपने ही योग्य (अर्थात् इन्द्रों के द्वारा ही करने योग्य) ऐसी 'महामह' नाम की पूजा करते हैं।

In the fortnight of waxing-moon *(śukla-pakṣa)*, starting from the eighth-day *(aṣṭamī)* and continuing for the next eight days, during the three months of *Āṣāḍha, Kārtika* and *Phālguna,* the devas, led by Saudharma Indra, visit, with great devotion, the Nandīśvara continent *(dvīpa)*. There they worship the Idols *(pratimā)* of Lord Jina, the supreme Omniscient Lord, with abundant measures of divine *akṣata* (rice without husk), *gandha* (essence like sandalwood or saffron), *puṣpa* (flower, represented by saffron coloured rice), and *dhūpa* (incense). Their worship, called *'mahāmaha',* is propitious to all and worth execution by the Indras only.

भेदेन वर्णना का सौधर्मः स्नपनकर्तृतामापन्नः ।
परिचारकभावमिताः शेषेन्द्रारुन्द्रचन्द्रनिर्मल-यशसः ॥१५॥

मंगलपात्राणि पुनस्तद्-देव्यो बिभ्रतिस्म शुभ्रगुणाढ्याः ।
अप्सरसो नर्तक्यः शेषसुरास्तत्र लोकनाव्यग्रधियः ॥१६॥

अर्थ – उन नन्दीश्वर द्वीप के चैत्यालयों का वर्णन और क्या करें? इतना ही समझ लेना चाहिये कि– सौधर्म इन्द्र तो अभिषेक के कर्तृत्व को प्राप्त होता है और बाकी के इन्द्र, जिनका निर्मल यश पूर्णमासी के चन्द्रमा के समान फैला हुआ है, सहयोग भाव को प्राप्त होते हैं। उज्ज्वल गुणों से युक्त उनकी महादेवियाँ अष्ट मंगल द्रव्यों को धारण करती हैं। अप्सराएँ नृत्य करती हैं। अन्य देव और देवियाँ वहाँ उस अभिषेक के दृश्य को देखने में दत्तचित्त रहते हैं।

What more to elaborate about the natural *(akṛtrima)* Temples *(caityālaya)* of Lord Jina in the Nandīśvara *dvīpa*? Suffice it to say that Saudharma Indra performs the anointment *(abhiśeka)* of the Idols *(pratimā)* of Lord Jina while the rest of the Indras, whose pristine glory matches the resplendence of the full-moon, assist him. Their celestial-wives *(devī)*, endowed with brilliant qualities, worship Lord Jina with the eight kinds of auspicious objects *(dravya)*. The celestial nymphs *(apsarā)* perform devotional dances. The rest of the *deva(s)* and the *devī(s)* remain engrossed in watching the proceedings.

वाचस्पति-वाचामपि गोचरतां संव्यतीत्य यत्क्रममाणम् ।
विबुधपतिविहितविभवं मानुषमात्रस्य कस्य शक्तिः स्तोतुम् ॥१७॥

अर्थ – जो 'महामह' पूजन सौधर्म आदि इन्द्रों के द्वारा विशेष वैभव से सम्पन्न होता है, जो वाचस्पति/बृहस्पति के वचनों की शक्ति का भी उल्लंघन कर

प्रवर्तमान है, उन नन्दीश्वर द्वीप के चैत्यालयों की स्तुति करने के लिए किस मनुष्य मात्र की शक्ति हो सकती है?

The *'mahāmaha'* adoration of Lord Jina in the Nandīśvara *dvīpa* is performed by the Saudharma and other Indras with special grandeur and splendor. Even the god-of-speech – Vācaspati or Bṛhaspati – fails to find words to describe its glory. Which human-being has the ability to make such adoration of the Temples *(caityālaya)* in the Nandīśvara *dvīpa?*

निष्ठापित जिनपूजाश्चूर्णस्नपनेन दृष्टविकृतविशेषाः ।
सुरपतयो नन्दीश्वर-जिनभवनानि प्रदक्षिणीकृत्य पुनः ॥१८॥

पञ्चसु मन्दरगिरिषु श्रीभद्रशाल-नन्दन-सौमनसम् ।
पाण्डुकवनमिति तेषु प्रत्येकं जिनगृहाणि चत्वार्येव ॥१९॥

तान्यथ परीत्य तानि च नमसित्वा कृतसुपूजनास्तत्रापि ।
स्वास्पदमीयुः सर्वे स्वास्पदमूल्यं स्वचेष्टया संगृह्य ॥२०॥

अर्थ - जिन्होंने सुगन्धित चूर्ण से अभिषेक-पूर्वक जिनेन्द्रदेव की पूजा पूर्ण कर ली है, उसमें भावविभोर होने से जिनको महा-आनन्द आ रहा है, तथा उस महा-आनन्द से जिनकी आकृति कुछ विकृत सी हो रही है, ऐसे सब इन्द्र फिर नन्दीश्वर द्वीप के चैत्यालयों की प्रदक्षिणा देते हैं। पश्चात् वे इन्द्र पाँचों मेरु सम्बन्धी श्री भद्रशालवन, नन्दनवन, सौमनसवन और पाण्डुकवन, इन चारों ही

वनों में जिनमें प्रत्येक में चार-चार अकृत्रिम चैत्यालय हैं (अर्थात् एक मेरु सम्बन्धी 16 तथा पाँच मेरु सम्बन्धी कुल 5 गुणा 16 = 80 चैत्यालय), जाते हैं और उनकी प्रथम प्रदक्षिणा देकर और उनको नमस्कार करके वहाँ भी अभिषेक-पूजा आदि उत्तम रीति से करते हैं। इसके उपरान्त सभी देव अपने-अपने योग्य पुण्य का संचय करके अपने नियत स्थानों को चले जाते हैं।

As the Indras complete the worship and anointment, with fragrant powder, of Lord Jina, they feel extremely contented; so much so that, out of sheer joy, their form appears to be somewhat distorted! The Indras then cicumambulate the Nandīśvara *dvīpa*. Thereafter, they visit the four forests – *Śrī* Bhadraśālavana, Nandana-vana, Saumanasavana and Pāṇḍukavana – that are situated on each of the five Meru mountains. Each forest has four natural *(akṛtrima)* Temples *(caityālaya)* of Lord Jina. (There are, thus, 4 × 4 × 5 = 80 natural Temples of Lord Jina in the five Meru mountains.) The Indras cicumambulate each Temple, and perform worship and anointment with great veneration. Having earned great merit *(puṇya),* as per their respective purity of devotion, the Indras go back to their respective abodes.

सहतोरणसद्वेदी-परीतवन-यागवृक्ष-मानस्तम्भः ।
ध्वजपंक्तिदशकगोपुर चतुष्टय-त्रितयशाल-मण्डपवर्यैः ॥२१॥

अभिषेकप्रेक्षणिका क्रीडनसंगीतनाटकालोकगृहैः ।
शिल्पिविकल्पित-कल्पन-संकल्पातीत-कल्पनैः समुपेतैः ॥२२॥

वापी सत्पुष्करिणी सुदीर्घिकाद्यम्बुसंसृतैः समुपेतैः ।
विकसितजलरुहकुसुमैर्नभस्यमानैः शशिग्रहर्क्षैः शरदि ॥२३॥

भृङ्गाराब्दक-कलशाद्युपकरणैरष्टशतक-परिसंख्यानैः ।
प्रत्येकं चित्रगुणैः कृतझणझणनिनद-वितत-घंटाजालैः ॥२४॥

प्रभाजन्ते नित्यं हिरण्मयानीश्वरेशिनां भवनानि ।
गंधकुटीगतमृगपति विष्टर-रुचिराणि-विविध-विभवयुतानि ॥२५॥

अर्थ - वे सब चैत्यालय अकृत्रिम तोरणों से, चारों ओर रहने वाले वनों से, यागवृक्षों से, मानस्तम्भों से, दस-दस प्रकार की ध्वजाओं की पंक्तियों से, चार-चार गोपुरों से, तीन परिधियों वाले श्रेष्ठ मण्डपों से सहित हैं। ये सब चतुर शिल्पियों से कल्पित संकल्पातीत रचनाएँ हैं अर्थात् कल्पनातीत हैं। अभिषेक-दर्शन, क्रीड़ा, संगीत और नाटक देखने के गृहों से संशोभित हैं। शरद ऋतु में चन्द्रमा, ग्रह और ताराओं से युक्त आकाश के समान दिखने वाले गोल, चौकोर और गहरी बावड़ियाँ हैं जिनमें निर्मल जल भरा हुआ है और खिले हुए कमल के पुष्प हैं। उन चैत्यालयों में प्रत्येक में एक सौ आठ झारी, दर्पण और कलश आदि मंगल द्रव्य रखे हैं। बड़े-बड़े घंटाओ के समूह उन चैत्यालयों में लटक रहे हैं जिनकी झण-झण शब्द की ध्वनि गूँज रही है। उन चैत्यालयों में बहुत सुन्दर गन्धकुटी बनी हुई हैं जिनमें सुन्दर सिंहासन हैं। वे जिनेन्द्रदेव के चैत्यालय स्वर्णमयी हैं और अनेक प्रकार की विभूतियों से सुशोभित हैं। ऐसे वे सब अकृत्रिम चैत्यालय नित्य ही प्रकष्ट शोभा को प्राप्त होते हैं।

All these Temples *(caityālaya)* of Lord Jina are equipped with natural *(akṛtrima)* arched portals; are surrounded by enchanting forests and *'yāgavṛkṣa'* trees; have huge and lofty columns, called 'pillars-of-pride' *(mānastambha)*; rows of banners and flags of ten kinds flutter in the breeze; four gates on each side enhance their grandeur; and excellent pavilions with three concentric enclosures, each, are enchanting. All these features surpass the wildest imagination of the best of craftsmen. These Temples of Lord Jina have huge pavilions to watch the anointment of Lord Jina and the sporting, musical and theatrical performances. There are deep lakes, round as well as quadrangular, with crystal-clear water and blooming lotuses; these lakes appear to be like the clear night sky of autumn brightened with the moon and the constellations of stars. In all these Temples are found auspicious objects like pitchers, clear mirrors and urns, one-hundred-and-eight each. Large bells in these Temples produce dulcet and reverberating notes of *'jhaṇa-jhaṇa'*. All Temples have the most enchanting bowers, called *'gandhakuṭī'*, housing the exquisite Throne for the Idol *(pratimā)* of Lord Jina. These natural *(akṛtrima)* Temples of Lord Jina are predominantly made of gold (besides, of course, precious gems) and are eternally endowed with ineffable grandeur and splendor.

येषुजिनानां प्रतिमाः पञ्चशत-शरासनोच्छ्रिताः सत्प्रतिमाः ।
मणिकनकरजतविकृता दिनकरकोटि-प्रभाधिक-प्रभदेहाः ॥२६॥

तानि सदा वन्देऽहं भानुप्रतिमानि यानि कानि च तानि ।
यशसां महसां प्रतिदिशमतिशयशोभाविभाञ्जि पापविभंजि ॥२७॥

अर्थ – इन सब अकृत्रिम चैत्यालयों में जिनेन्द्रदेव की प्रतिमाएँ 500 धनुष ऊँची हैं; सुन्दर, समीचीन मनोहर आकार वाली हैं; मणि, स्वर्ण और चाँदी से बनी हुई हैं; तथा करोड़ों सूर्यों की प्रभा से भी अधिक प्रभावान शरीर से युक्त हैं। उन प्रतिमाओं से युक्त जिनालयों को मैं सदा नमस्कार करता हूँ। साथ ही प्रत्येक दिशा में यश और तेज की अत्यधिक शोभा को प्राप्त तथा पाप को नष्ट करने वाले सूर्य के समान, जितने भी अन्य मन्दिर हैं उन सबको मैं हमेशा नमस्कार करता हूँ।

The Idols *(pratimā)* of Lord Jina in all these natural *(akṛtrima)* Temples *(caityālaya)* are five-hundred *dhanuṣa* (1 *dhanuṣa* = 5.28 ft.) high; their structure is beautiful, precise and charming; these are made of gems, gold and silver; and these have brilliance greater than that of millions of suns. I bow down before all these Temples housing such Idols of Lord Jina. In addition, I bow down, always, before all other Temples, in all directions, that have pristine glory and beauty, and are like the sun that destroys the darkness of evils.

सप्तत्यधिक-शतप्रिय धर्मक्षेत्रगत-तीर्थकरवरवृषभान् ।
भूतभविष्यत्सम्प्रति कालभवान् भवविहानये विनतोऽस्मि ॥२८॥

अर्थ – जिन क्षेत्रों में धर्म अत्यन्त प्रिय है, ऐसे 170 धर्मक्षेत्रों (कर्मभूमियों) में स्थित अतीतकाल, भावीकाल और वर्तमानकाल में हुए अथवा होने वाले अतिशय श्रेष्ठ जो तीर्थंकर हैं, उन सब को मैं संसार-भ्रमण का छेद करने के लिए विनयपूर्वक नमस्कार करता हूँ।

There are 170 regions-of-dharma or regions-of-labour *(karmabhūmi)* where Lord Jina *(Tīrthaṅkara)* are born.[1] With a view to destroy my cycle of worldly-existence *(saṃsāra)*, I bow down, with utter humility, before all supremely-excellent Lord Jina *(Tīrthaṅkara)* who have taken birth in the past, will take birth in the future and are existing in the present.

अस्यामवसर्पिण्यां वृषभजिनः प्रथमतीर्थकर्ता भर्ता ।
अष्टापदगिरिमस्तक गतस्थितो मुक्तिमाप पापान्मुक्तः ॥२९॥

अर्थ – इस अवसर्पिणी काल में प्रथम तीर्थंकर श्री वृषभनाथ स्वामी हुए जो तीर्थ के कर्ता तथा पालक/पोषक हुए। अष्टापद पर्वत अर्थात् कैलाश पर्वत के शिखर पर (पद्मासन से) स्थित हो, सर्व पापों से छूटकर मोक्ष को प्राप्त हुए।

---

1. Lord Jina *(Tīrthaṅkara)* take birth only in the regions-of-labour in the five Meru comprising five Bharata, five Airāvata and five Videha (excluding Devakuru and Uttarakuru). Each Videha (excluding Devakuru and Uttarakuru) has 32 regions-of-labour. Thus, there are a total of $5 + 5 + (5 \times 32) = 170$ regions-of-labour where Lord Jina *(Tīrthaṅkara)* may exist.

In this descending *(avasarpiṇī)* cycle of time, the first Ford-maker *(Tīrthaṅkara)* was Lord Ṛṣabhanātha, the promulgator of the dharma and also the means of sustenance to his subjects (before adopting asceticism). At the end of his life, he stationed himself at the summit of the Aṣṭāpada (Kailāśa) mountain, destroyed all the karmas, and attained liberation.

श्रीवासुपूज्यभगवान् शिवासु पूजासु पूजितस्त्रिदशानाम् ।
चम्पायां दुरितहरः परमपदं प्रापदापदामन्तगतः ॥३०॥

अर्थ – श्री वासुपूज्य भगवान् शोभनीक गर्भ, जन्म, तप आदि कल्याणकों की क्रियाओं में इन्द्रादिक देवों के द्वारा पूजे गए थे। ऐसे भगवान् वासुपूज्य सर्व कर्मजन्य आपत्तियों का नाश करके तथा पापों का क्षय करते हुए चम्पापुर से परमपद अर्थात् मोक्ष को प्राप्त हुए।

Lord Vāsupūjya was worshipped by the Indras and the other devas during the five most auspicious events[1] *(kalyāṇaka)* in his life. Getting over all impediments due to the karmas and destroying all evils, Lord Vāsupūjya attained the supreme state of liberation from Campāpura.

---

1. See, footnote, p. 166, *ante*.

मुदितमतिबलमुरारि प्रपूजितो जितकषायरिपुरथ जातः ।
वृहदूर्जयन्तशिखरे शिखामणिस्त्रिभुवनस्य-नेमिर्भगवान् ॥३१॥

अर्थ - बलराम (बलदेव) और श्रीकृष्ण (नारायण) ने जिनकी प्रसन्नचित्त होकर पूजा की है, और कषाय-रूपी शत्रुओं को जिन्होंने जीत लिया है, ऐसे नेमिनाथ भगवान् विशाल ऊर्जयन्त (गिरनार) पर्वत के शिखर पर तीन लोक के चूड़ामणि हुए, अर्थात् मोक्ष को प्राप्त हुए।

Who was worshipped, with great delight, by Balarāma *(baladeva)* and Śrikriṣṇa *(nārāyaṇa)*; who had vanquished all enemies in form of the passions *(kaṣāya)*; such Lord Neminātha became the crest-jewel of the three worlds, that is, attained liberation, from the summit of the Ūrjayanta (Girnāra) mountain.

पावापुरवरसरसां मध्यगतः सिद्धिवृद्धितपसां महसाम् ।
वीरो नीरदनादो भूरिगुणश्चारु-शोभमास्पदमगमत् ॥३२॥

अर्थ - जो सिद्धि, वृद्धि, तप और तेज के मध्य में स्थित हैं; मेघ की गर्जना के समान जिनकी दिव्यध्वनि के शब्द हैं; जो अनन्त गुणों से युक्त हैं; ऐसे वीर (महावीर) भगवान् ने पावापुर के उत्कृष्ट सरोवर के मध्य में स्थित हो उत्तम शोभा से युक्त मुक्तिपद को प्राप्त किया।

Who was established in midst of accomplishment *(siddhi)*, advancement *(vṛddhi)*, austerity *(tapa)* and brilliance *(teja)*; whose divine-words were deep like the

thunder of the clouds; who was endowed with infinite qualities; such Lord Vīra (Lord Mahāvīra) attained the finest state of liberation while he was in midst of the enchanting lake at Pāvāpura.

सम्मदकरिवनपरिवृत-सम्मेदगिरीन्द्रमस्तके विस्तीर्णे ।
शेषा ये तीर्थकराः कीर्तिभृतः प्रार्थितार्थसिद्धिमवापन् ॥३३॥

अर्थ - कीर्ति को धारण करने वाले शेष जो (बीस) तीर्थंकर हैं, वे विशाल फैले हुए मदोन्मत्त हाथियों से युक्त वन से घिरे हुए सम्मेद गिरिराज के शिखर पर अभिलषित मोक्ष-पुरुषार्थ की सिद्धि को प्राप्त हुए।

The epitome of renown, all the remaining (twenty) Ford-makers *(Tīrthaṅkara)* attained the fruit of their enterprise to attain liberation from the top of the lofty Sammed-mountain, surrounded by expansive forest inhabited by the elephants, inebriated by pride.

शेषाणां केवलिनामशेषमतवेदिगणभृतां साधूनां ।
गिरितलविवरदरीसरि-दुरुवनतरुविटपिजलधि-दहनशिखासु ॥३४॥

मोक्षगतिहेतुभूत स्थानानि सुरेन्द्ररुन्द्रभक्तिनुतानि ।
मंगलभूतान्येतान्यंगीकृत-धर्मकर्मणामस्माकम् ॥३५॥

अर्थ - (इन तीर्थंकरों के अलावा) शेष केवली भगवान्, समस्त मतों के ज्ञाता गणधरदेव तथा सामान्य साधु जहाँ-जहाँ से मोक्ष पधारे हैं, ऐसे पर्वतों के तल, पर्वतों के दर्रे, गुफा, नदी, विशाल वन, वृक्ष की कोटर, समुद्र और अग्नि की शिखा आदि जितने स्थान हैं, जिनको इन्द्रादिक देव भी बड़ी भक्ति से नमस्कार करते हैं, जो मोक्ष के कारणभूत स्थान हैं, सबका कल्याण करने वाले हैं, वे सब स्थान धार्मिक कार्यों को स्वीकार करने वाले हम लोगों के लिए भी मंगल करने वाले हों।

[Save the twenty-four Ford-makers *(Tīrthaṅkara)*–] The other Omniscient *(kevalī)* Lords, the Apostles *(gaṇadhara)* apt in all disciplines, and the general ascetics *(sādhu)* have attained liberation from many places including foothills, burrows, caves, river-banks, expansive forests, hollows of trees, oceans, and fire-flames. Even devas like the Indras bow down, with devotion, before such places; these are places that impart liberation and bring propitiousness to all. May such places bring propitiousness to us also who are engaged in the activities of dharma!

जिनपतयस्तत्प्रतिमास्तदालयास्तन्निषद्यका-स्थानानि ।
ते ताश्च ते च तानि च भवन्तु भवघातहेतवो भव्यानाम् ॥३६॥

अर्थ - ये जिनेन्द्रदेव (चौबीस तीर्थंकर), उनकी प्रतिमायें, उनके मन्दिर (जिनालय), और उनके निर्वाण-स्थान, ये सब भव्य-जीवों के जन्म-मरण रूप संसार का नाश करने वाले हों।

May Lord Jina [the twenty-four Ford-makers *(Tīrthaṅkara)*], their Idols *(pratimā)*, their Temples *(caityālaya),* and their places of liberation *(nirvāṇa)* bring about the destruction of the worldly-existence *(saṃsāra)*, the cycle of births and deaths, for all the worthy *(bhavya)* souls!

सन्ध्यासु तिसृषु नित्यं पठेद्यदि स्तोत्रमेतदुत्तम-यशसाम् ।
सर्वज्ञानां सार्वं लघुलभते श्रुतधरेडितं पदममितम् ॥३७॥

अर्थ - जिनका यश संसार भर में उत्तम है, ऐसे भगवान् सर्वज्ञदेव का सर्व-हितकर यह स्तोत्र जो भव्य-जीव प्रतिदिन तीनों संध्याओं में (प्रातः-मध्याह्न-सायं) पढ़ता है, वह शीघ्र ही श्रुत के धारक गणधरदेव आदि मुनियों के द्वारा पूज्य ऐसे शाश्वत मोक्ष-पद को प्राप्त होता है।

These verses in adoration of the Omniscient *(sarvajña)* Lord, whose glory is most pristine in the whole world, bring about the well-being to all. The worthy *(bhavya)* soul who reads these everyday during all the three junctures (morning, noon and evening) soon attains the eternal state of liberation that is adored by the excellent ascetics, including the Apostles *(gaṇadhara)* who have assimilated the complete Scripture *(śruta)*.

नित्यं निःस्वेदत्वं निर्मलता क्षीर-गौर-रुधिरत्वं च ।
स्वाद्याकृति-संहनने सौरूप्यं सौरभं च सौलक्ष्यम् ॥३८॥

अप्रतिमवीर्यता च प्रियहितवादित्वमन्यदमितगुणस्य ।
प्रथिता दशविख्याता स्वतिशयधर्माः स्वयम्भुवो देहस्य ॥३९॥

अर्थ - ये दस प्रसिद्ध अतिशय अपरिमित गुणों को धारक 'स्वयम्भू' अर्थात् तीर्थंकर के शरीर में जन्म से ही होने वाले कहे गये हैं- 1) पसीना कभी नहीं आना; 2) मल-मूत्र का न होना; 3) दूध के समान सफेद रक्त का होना; 4) सबसे उत्तम समचतुरस्त्र-संस्थान का होना; 5) सबसे उत्तम वज्रवृषभ-नाराच-संहनन का होना; 6) अत्यन्त सुन्दर शरीर का होना; 7) सुगन्धमय शरीर का होना; 8) शरीर का उत्तम लक्षणों से युक्त होना; 9) अनन्त शक्ति का होना; और 10) प्रिय व हितकारी मधुर वचन।

The self-enlightened or *'svayambhū'* Lord Jina *(Tīrthaṅkara)* is endowed with infinite qualities but the following ten miraculous-happenings *(atiśaya)* are present in his body from birth: 1) no perspiration; 2) no excreta; 3) milk-like white blood; 4) perfectly symmetrical – *samacaturasra saṃsthāna;* 5) perfect joints noted for extraordinary sturdiness and strength – *vajraṛṣabhanārāca saṃhanana;* 6) stunningly handsome; 7) extremely fragrant; 8) one-thousand-and-eight pious marks (including *śrivatsa, śaṅkha, svastika, kamala* and *cakra*); 9) unparalleled strength; and 10) propitious *(hita)* and cogent *(mita)* speech.

गव्यूतिशतचतुष्टय सुभिक्षता-गगन-गमनमप्राणिवधः ।
भुक्त्युपसर्गाभावश्चतुरास्यत्वं च सर्वविद्येश्वरता ॥४०॥

अच्छायत्वमपक्ष्मस्पन्दश्च समप्रसिद्धनखकेशत्वम् ।
स्वतिशयगुणा भगवतो घातिक्षयजा भवन्ति तेऽपि दशैव ॥४१॥

अर्थ - घातिया कर्मों के क्षय से होने वाले (केवलज्ञान के होने पर) भगवान् के ये स्वाभाविक गुण उत्तम अतिशय हैं, ये भी दस ही होते हैं- 1) चार सौ कोस तक सुभिक्ष का होना; 2) आकाश में गमन करना; 3) किसी जीव का वध/हिंसा न होना; 4) कवलाहार ग्रहण न करना; 5) किसी प्रकार का उपसर्ग का न होना; 6) चारों दिशाओं में मुख का दिखना; 7) समस्त विद्याओं का ईश्वरत्व होना; 8) शरीर की छाया न पड़ना; 9) नेत्रों के पलक न झपकना; और 10) नख व केश का नहीं बढ़ना।

The miraculous-happenings *(atiśaya)* appertaining to Lord Jina, which appear as the inimical *(ghātiyā)* karmas are destroyed and omniscience *(kevalajñāna)* is attained, are also ten, as under: 1) there is abundance of food in the four-hundred *kosa* (800 miles) expanse of land around him; 2) as his Feet do not touch the ground while moving, he is said to be moving in the sky – *ākāśagamana*; 3) absence of cruel dispositions, i.e., compassionate tenderness for each other, prevails in all living beings; 4) he does not take morsels of food – no *kavalāhāra*; 5) no calamities *(upsarga)* can occur in his presence; 6) to all – the humans, *deva*s and animals –

who assemble in the four directions of the majestic pavilion *(samavasaraṇa)* he appears to be facing them; 7) he attains lordship over all learnings; 8) his body has no shadow; 9) his eyes do not blink; and 10) his hair and nails do not grow.

सार्वार्धमागधीया भाषा मैत्री च सर्वजनताविषया ।
सर्वर्तुफलस्तबक प्रवाल-कुसुमोपशोभिततरुपरिणामाः ॥४२॥

आदर्शतल-प्रतिमा रत्नमयी जायते मही च मनोज्ञा ।
विहरणमन्वेत्यनिलः परमानन्दश्च भवति सर्वजनस्य ॥४३॥

अर्थ - (अब देवकृत चौदह उत्तम अतिशयों का वर्णन प्रारम्भ होता है।) 1) सर्व प्राणियों का हित करने वाली अर्धमागधी भाषा में दिव्यध्वनि का खिरना; 2) समस्त प्राणी अपना स्वाभाविक वैरभाव छोड़कर मैत्रीभाव से रहते हैं; 3) वृक्षों का छहों ऋतुओं में होने वाले फलों के गुच्छों, पत्तों और फूलों से युक्त हो जाना; 4) वहाँ की पृथ्वी का दर्पण के समान निर्मल हो जाना; 5) वायु का भगवान् के विहार के अनुकूल चलना; तथा 6) समस्त जीवों का परम आनन्दित होना।

(Now starts the description of the fourteen miraculous-happenings *(atiśaya)* fashioned by the devas.)
1) His divine discourse *(divyadhvani)* is delivered in the language called *arddhamāgadhī* and is heard by all present in their respective tongue; 2) friendly

coexistence prevails even among natural adversaries; 3) the trees get laden with fruits, leaves and flowers of all the six seasons; 4) the land becomes clear of all dirt, shining like a mirror; 5) pleasing, mild air flows in the direction of the movement of Lord Jina; 6) the presence of Lord Jina brings inexpressible joy to all living-beings.

मरुतोऽपि सुरभिगन्ध-व्यामिश्रा योजनान्तरं भूभागम् ।
व्युपशमितधूलि-कण्टक-तृण-कीटक-शर्करोपलं प्रकुर्वन्ति ॥४४॥

तदनु स्तनितकुमारा विद्युन्माला-विलास-हास-विभूषाः ।
प्रकिरन्ति सुरभि-गन्धिं गन्धोदकवृष्टिमाज्ञया-त्रिदशपतेः ॥४५॥

अर्थ - 7) जहाँ भगवान् विहार करते हैं वहाँ पर (वायुकुमार जाति के) देव सुगन्धित वायु के द्वारा एक योजन तक भूमि को धूल, कण्टक, तृण, कीटक, बालू-पत्थर आदि से रहित करते हैं; 8) उसके बाद इन्द्र की आज्ञा से स्तनितकुमार जाति के देव, बिजली की चमक और बादलों की गर्जना रूपी हास्य-विनोद की वेषभूषा से विभूषित होकर, सुगन्ध से मिली हुई गन्धोदक की वृष्टि को करते हैं।

7) The devas (of the Vāyukumāra class) clear the land up where Lord Jina moves of dust, thorns, blades of grass, insects, sand, stones, etc., in the range of one *yojana* (= 8 miles); 8) on this clear land, the devas of the

Stanitakumāra class, dressing themselves up in comical attire of lightning and thundering clouds, sprinkle down fragrant, sacred-water *(gandhodaka)*.

वर पद्मराग-केसरमतुलसुख-स्पर्शहेममय-दलनिचयम् ।
पादन्यासे पद्मं सप्त पुरः पृष्ठतश्च सप्त भवन्ति ॥४६॥

अर्थ - भगवान् के विहार के समय उनके चरण-कमल के नीचे देव कमलों की रचना करते हैं- 9) उन कमलों में उत्तम पद्मरागमणि-केसर होता है, स्पर्श करने मात्र से अत्यन्त सुखकर ऐसे स्वर्णमय पत्तों से वे बने होते हैं। एक कमल भगवान् के चरण-कमल के नीचे रहता है, सात कमल आगे और सात कमल पीछे रहते है। 'च' शब्द से अन्य समस्त कमलों की पंक्तियाँ ले लेनी चाहियें। (15 पंक्तियाँ तथा प्रत्येक पंक्ति में 15 कमल; इस प्रकार कुल मिलाकर 225 कमल होते हैं।)

As the Lord moves above the ground – *ākāśagamana* – the devas create rows of divine lotus-flowers under his Lotus-Feet. 9) The lotuses created by the devas have excellent saffron of *padmarāgamaṇi*. These have golden petals whose mere touch is extremely delightful. One lotus is under the Lord's Feet, seven in the front and seven in the back. From the word *'ca'* in the verse, other rows should also be interpreted. (There are a total of 15 rows of 15 flowers each, making a total of 225 lotus-flowers.)

फलभारनम्रशालि-ब्रीह्यादि-समस्त-सस्य-धृतरोमाञ्चा ।
परिहृषितेव च भूमिस्त्रिभुवननाथस्य वैभवं पश्यन्ती ॥४७॥

अर्थ - भगवान् जहाँ पर विराजमान होते हैं वहाँ की भूमि- 10) फलों के बोझ से नम्र हुए, नाना प्रकार के शालि, ब्रीहि आदि धान्यों से व्याप्त (वह भूमि) ऐसी जान पड़ती है जैसे तीनों लोकों के स्वामी भगवान् अर्हन्तदेव की विभूति को देखने से अत्यधिक हर्ष को प्राप्त होकर वह रोमाञ्चित हो उठी हो।

At the place of Lord Jina's existence– 10) Seeing the splendor of the Lord of the three worlds, the earth appears to be extremely exuberant and pleasantly excited; the lush crop bent down with the weight of various kinds of fruits and laden with rice and other grains covers the land up.

शरदुदय-विमल-सलिलं सर इव गगनं विराजते विगतमलम् ।
जहति च दिशस्तिमिरिकां विगतरजः प्रभृति जिह्मताभावं
सद्यः ॥४८॥

अर्थ - 11) शरद ऋतु के काल में निर्मल सरोवर के समान आकाश बादल आदि सब दोषों से रहित होकर सुशोभित होता है। दिशाएँ शीघ्र ही अन्धकार को छोड़कर, धूम्र व धूलि आदि मल से रहित हो, निर्मल हो जाती हैं।

11) The sky becomes clear of all imperfections (of clouds, etc.) and looks like the crystal-clear autumnal

lake. All directions soon become bright, rid of the dirt of smoke and dust.

एतेतेति त्वरितं ज्यातिर्व्यन्तरदिवौकसाममृतभुजः ।
कुलिशभृदाज्ञापनया कृर्वन्त्यन्ये समन्ततो व्याह्वानम् ॥४९॥

अर्थ - 12) इन्द्र की आज्ञा से अन्य देव लोग 'शीघ्र आओ', 'शीघ्र आओ', इस प्रकार शब्द करके ज्योतिष्क, व्यन्तर, भवनवासी तथा वैमानिक देव परस्पर चारों ओर से एक-दूसरे को (भगवान् अर्हन्तदेव की पूजा करने के लिए) बुलाते हैं।

12) As per the instruction of the Indra, the other devas proclaim the arrival of Lord Jina by exclaiming 'come soon!', 'come soon!' and thus invite all the stellar *(jyotiṣka),* the peripatetic *(vyantara)*, the residential *(bhavanavāsī)*, and the heavenly *(vaimānika)* devas to perform the Lord's adoration.

स्फुरदरसहस्त्ररुचिरं विमल-महारत्न-किरण-निकर-परीतम् ।
प्रहसितकिरणसहस्त्रद्युति-मण्डलमग्रगामि धर्मसुचक्रम् ॥५०॥

अर्थ - 13) देदीप्यमान एक हजार आरों से शोभायमान, निर्मल महारत्नों के किरण-समूह से व्याप्त, सहस्त्र-रश्मि सूर्य की कान्ति को तिरस्कृत करता हुआ, उत्तम धर्मचक्र (भगवान् के विहार के समय) आगे-आगे चलता है।

13) The divine *dharmacakra* – the spinning, super-wheel – which has one thousand spokes, is endowed with bright rays emanating from pristine super gems, and whose brilliance outshines the thousand rays of the sun, must precede Lord Jina at all places to signal his presence.

इत्यष्टमंगलं च स्वादर्श-प्रभृति-भक्ति-रागपरीतैः ।
उपकल्प्यन्ते त्रिदशै रेतेऽपिनिरुपमातिशयाः ॥५१॥

अर्थ - 14) इसी प्रकार अर्थात् धर्मचक्र के समान, उत्तम दर्पण आदि आठ मंगल द्रव्य भी (भगवान् के विहार काल में) साथ रहते हैं। भक्ति और राग से भरे देवों के द्वारा ये उपमारहित अतिशय रचे जाते हैं।

नोट - ये आठ मंगल द्रव्य कहे गये हैं- 1) छत्र, 2) चामर, 3) भृंगार (झारी), 4) कलश, 5) ध्वजा, 6) दर्पण, 7) पंखा, और 8) सुप्रतिष्ठक (ठोना)। (देखें, 'हरिवंशपुराण', 2 : 72, पृ. 17-18; तथा 'आदिपुराण (1)', 13 : 37, पृ. 286)

14) Like the divine *dharmacakra* – the spinning, super-wheel – the eight auspicious objects, including the clear mirror, accompany Lord Jina. Filled with devotion and attachment, the devas fashion these unparalleled fourteen miraculous-happenings *(atiśaya)*.

The following are the eight auspicious objects: 1) canopy *(chatra)*, 2) fly-whisk *(cāmara)*, 3) (golden)

pitcher *(bhṛṅgāra, jhārī)*, 4) urn *(kalaśa)*, 5) flag *(dhvajā)*, 6) mirror *(darpaṇa)*, 7) fan *(paṅkhā)*, and 8) vessel to keep the objects of worship *(supratiṣṭhaka)*.

वैडुर्य-रुचिर-विटप प्रवाल-मृदु-पल्लवोपशोभितशाखः ।
श्रीमानशोकवृक्षो वर-मरकत-पत्रगहन-बहलच्छायः ॥५२॥

अर्थ - (यहाँ से अर्हन्त भगवान् के आठ प्रातिहार्यों का विवरण प्रारम्भ होता है।)

1) सुन्दर वैडूर्यमणि की कान्ति के समान सुन्दर शाखाओं, पत्तों और पल्लवों सहित उपशाखाओं से शोभित; उत्तम मरकतमणि के समान जिसके हरे पत्ते हैं और जिसकी छाया बहुत घनी है; ऐसा शोभायुक्त अशोक-वृक्ष भगवान् के समीप शोभायमान रहता है।

(Now starts the description of the eight divine-splendors *(prātihārya)* that must accompany Lord Jina.)

1) It is endowed with beautiful branches, leaves, and twigs with tender shoots, that bear the brilliance of *vaiḍuryamaṇi*; its green leaves resemble the excellent *marakatamaṇi* that create extremely dense shade; such enchanting Aśoka tree – *aśoka-vṛkṣa* – exists near Lord Jina.

मन्दार-कुन्द-कुवलय-नीलोत्पल-कमल-मालती-बकुलाद्यैः ।
समदभ्रमर-परीतैर्व्यामिश्रा पतति कुसुमवृष्टिर्नभसः ॥५३॥

अर्थ - 2) मदोन्मत्त भ्रमरों के गुंजार से युक्त मन्दार, कुन्द, कुवलय (रात्रिविकासी कमल), नील-कमल, श्वेत-कमल, मालती, बकुल आदि से मिली हुई पुष्पवृष्टि आकाश से सदा होती रहती है।

2) There is incessant shower mixed with flowers of various kinds – *puṣpavṛṣṭi* – including *mandāra* (flower of the coral tree), *kunda* (jasmine), *kuvalaya* (lotus that blooms at night), *nīlakamala* (blue lotus), *kamala* (white lotus), *mālatī* (a kind of jasmine) and *bakula* (flower of the *bakula* tree). Bees, intoxicated with the fragrance of the flowers, keep buzzing around.

कटक-कटिसूत्र-कुण्डल-केयूर-प्रभृति-भूषितांगौ स्वंगौ ।
यक्षौ कमलदलाक्षौ परिनिक्षिपतः सलीलचामरयुगलम् ॥५४॥

अर्थ - 3) स्वर्णमय कड़ा, करधनी, कुण्डल, बाजूबन्द आदि आभूषणों से जिनके शरीर की शोभा बढ़ रही है, जिनके नेत्र कमलदल के समान सुन्दर हैं, ऐसे स्वाभाविक रूप से भी सुन्दर आकृति के धारक दो यक्ष जिनेन्द्रदेव के दोनों ओर लीलापूर्वक चामर-युगल को ढोरते हैं।

3) Two devas, called *'yakṣa'*, who are naturally handsome but whose beauty is enhanced by many

kinds of gold ornaments like bangles, waist-chains, earrings and bracelets, and whose eyes are beautiful like the lotus-petal, constantly swing theatrically the two hand-fans *(cāmara),* one on each side of Lord Jina.

आकस्मिकमिव युगपद् दिवसकर-सहस्त्रमपगत-व्यवधानम् ।
भामण्डलमविभावित रात्रिंदिवभेदमतितरामाभाति ॥५५॥

अर्थ - 4) अर्हन्त भगवान् का प्रभा-मण्डल बहुत ही सुशोभित होता है। वह ऐसा जान पड़ता है मानो आवरणरहित सहस्त्रों सूर्य एक साथ अकस्मात् उदय हो आये हों। उस प्रभा-मण्डल से समवसरण में रात्रि तथा दिन का भेद विलुप्त हो जाता है।

4) Lord Jina has the halo *(bhāmaṇḍala)* of unmatched beauty. Its brightness matches the brightness of thousands of suns that have suddenly risen together in the clear sky. Due to the luminance of Lord's halo, the segregation of the day and the night vanishes in the heavenly-pavilion *(samavasaraṇa).*

प्रबलपवनाभिघात प्रक्षुभितसमुद्र-घोषमन्द्रध्वानम् ।
दन्ध्वन्यते सुवीणा-वंशादि-सुवाद्य-दुन्दुभिस्तालसमम् ॥५६॥

अर्थ - 5) प्रबल वायु के घात से क्षोभित हुए समुद्र के गम्भीर शब्द के समान जिनके मनोहर शब्द हो रहे हैं, ऐसे वीणा, बंसी आदि उत्तम बाजों के साथ दुन्दुभि बाजे ताल के अनुसार बार-बार मनोहर ध्वनि करते रहते हैं।

5) Together with other excellent instruments, like the lute and the flute, the kettle-drums continue to produce rhythmic and dulcet music – *dundubhināda* – that sounds like the enchanting and deep euphony produced by the restive sea when its surface is struck by strong winds.

त्रिभुवनपतितालाञ्छनमिन्दुत्रय-तुल्यमतुलमुक्ता-जालम् ।
छत्रत्रयं च सुबृहद्वैडूर्य-विक्लृप्त-दण्डमधिक-मनोज्ञम् ॥५७॥

अर्थ - 6) तीनों लोकों के स्वामित्व का चिह्न स्वरूप, जो तीन चन्द्रमाओं के समान हैं, जिनमें अनुपम मोतियों की झालरें लटक रही हैं, और जिनके दण्ड विशाल वैडूर्य मणियों से युक्त हैं, ऐसे बहुत ही मनोहर तीन छत्र भगवान् के ऊपर सुशोभित होते हैं।

6) Which signify lordship over the three worlds; which are like the three moons; which are having frills made of exquisite pearls; and whose staffs are made of large *vaiḍūrya* gems; such extremely enchanting three-tier canopy – *chatra* – adorns the space right on top of Lord Jina.

ध्वनिरपि योजनमेकं प्रजायते श्रोतृहृदयहारि-गम्भीरः ।
ससलिलजलधरपटल ध्वनितमिव प्रविततान्तराशावलयम्

॥५८॥

अर्थ - 7) जो सजल मेघ की गर्जना के समान गम्भीर है; जो दिशाओं के अन्तराल को व्याप्त करने वाली है; और जो कर्ण और हृदय को हरने वाली है; ऐसी भगवान् की दिव्यध्वनि भी एक योजन तक पहुँचती है।

7) Which is deep like the thunder of the rain-clouds; which transcends all segregations of the directions; and which is extremely pleasing to the ears and the heart; such divine voice – *divyadhvani* – of Lord Jina, too, reaches the distance of one *yojana* (= 8 miles).

स्फुरितांशु-रत्न-दीधिति परिविच्छुरिताऽमरेन्द्र-चापच्छायम् ।
ध्रियते मृगेन्द्रवर्यैः स्फटिक-शिलाघटित-सिंहविष्टरमतुलम्

॥५९॥

अर्थ - 8) जिसके देदीप्यमान रत्नों की किरणें, जो इन्द्रधनुष की कान्ति को धारण करती हैं, चारों ओर फैल रही हैं; जो स्फटिक पाषाण से निर्मित है; और जो सिंह के प्रतीक-चिह्नों से युक्त है; ऐसे अतुल शोभायमान उत्कृष्ट सिंहासन के (चार अंगुल) ऊपर भगवान् जिनेन्द्र विराजते हैं।

8) Whose brilliant rays, with luster of the rainbow, spread all around; which is made of crystal-stone called *'sphaṭika'*; and which bears the marks of the lion; on

such a bejeweled throne *(siṃhāsana)* of unparalleled beauty Lord Jina sits, about two inches above, without touching it.

यस्येह चतुस्त्रिंशत्प्रवरगुणा प्रातिहार्य-लक्ष्म्यश्चाष्टौ ।
तस्मै नमो भगवते त्रिभुवनपरमेश्वरार्हते गुणमहते ॥६०॥

अर्थ - इस जगत् में जिनके चौंतीस अतिशय हैं; जिनके समक्ष आठ प्रातिहार्यों की विभूतियाँ हैं; जो तीनों लोकों के परमेश्वर हैं; ऐसे श्रेष्ठ गुणों के धारक भगवान् अर्हन्तदेव को मैं नमस्कार करता हूँ।

Who, in this world, is felicitated by the thirty-four miraculous-happenings *(atiśaya)*; whose presence entails the existence of the eight divine-splendors *(prātihārya)*; who enjoys lordship over the three worlds; I bow down before the Supreme Lord *(Arhanta),* the possessor of such excellent attributes.

अञ्चलिका (Submission)

गद्य (Prose)

इच्छामि भंते! णंदीसरभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। णंदीसरदीवम्मि चउदिसविदिसासु अंजण-दधिमुह-रदिकर-पुरुणगवरेसु जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि तिसुवि लोएसु भवणवासिय-

वाणविंतर जोइसिय कप्पवासियत्ति चउव्विहा देवा सपरिवारा दिव्वेहिं ण्हाणेहिं, दिव्वेहिं गंधेहिं, दिव्वेहिं अक्खेहिं, दिव्वेहिं पुप्फेहिं, दिव्वेहिं चुण्णेहिं, दिव्वेहिं दीवेहिं, दिव्वेहिं धूवेहिं, दिव्वेहिं वासेहिं, आसाढ-कात्तियफागुण-मासाणं अट्ठमिमाइं काऊण जाव पुण्णिमंति णिच्चकालं अंचंति, पूजंति, वंदंति, णमंसंति। णंदीसरमहाकल्लाण पुज्जं करंति अहमवि इह संतो तत्थ संताइयं णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

अर्थ - हे भगवन्! मैंने नन्दीश्वरभक्ति संबन्धी कायोत्सर्ग किया। उसमें लगे दोषों की आलोचना करने की मैं इच्छा करता हूँ। नन्दीश्वर द्वीप की चारों दिशाओं में और विदिशाओं में अञ्जनगिरि, दधिमुख और रतिकर नामक श्रेष्ठ पर्वतों पर जितनी जिनप्रतिमाएँ हैं उन सबको त्रिलोकवर्ती भवनवासी, वानव्यन्तर/व्यन्तरवासी, ज्योतिषी व कल्पवासी चारों प्रकार के देव परिवार सहित दिव्य जल, दिव्य गन्ध, दिव्य अक्षत, दिव्य पुष्प, दिव्य नैवेद्य, दिव्य दीप, दिव्य धूप, और दिव्य फलों के द्वारा आषाढ़, कार्तिक और फाल्गुन मास में शुक्लपक्ष की अष्टमी से लेकर पूर्णिमा तक सदाकाल अर्चा करते हैं, पूजा करते हैं, वन्दना करते हैं, नमस्कार करते हैं और नन्दीश्वर द्वीप का महा-उत्सव मनाते हैं। मैं भी यहाँ रहते हुए वहाँ स्थित जिन-चैत्यालयों और जिनप्रतिमाओं की सदा-काल अर्चा करता हूँ, पूजा करता हूँ, वन्दना करता हूँ, नमस्कार करता हूँ। मेरे दु:खों का क्षय हो, कर्मों का क्षय हो, बोधि (रत्नत्रय) की प्राप्ति हो, उत्तम गति में गमन हो, समाधिमरण हो, तथा जिनेन्द्रदेव के गुणों की सम्पत्ति मुझे प्राप्त हो।

O Lord! I have performed devotion to the Nandīśvara *dvīpa* with detachment-to-own-body *(kāyotsarga)*. I

now desire confession *(ālocanā)* for faults therein. In all the four main- as well as the intermediate-directions of the Nandīśvara *dvīpa* there are Aṅjanagiri, Dadhimukha and Ratikara mountains. All the four kinds of devas – residential *(bhavanavāsī)*, peripatetic *(vyantara)*, stellar *(jyotiṣka)* and heavenly *(vaimānika)* – living in the three worlds, visit, with their families, the Nandīśvara *dvīpa* for eight days, starting from the eighth-day *(aṣṭamī)* until the full-moon-day *(pūrṇimā)*, in the three months of *Āṣāḍha, Kārtika* and *Phālguna,* and worship all Idols *(pratimā)* of Lord Jina that are established there. They all celebrate these occasions as grand festivals with great devotion; they always adore, worship, make obeisance, and salute these pious Idols using eight auspicious substances – divine *jala* (pure water), divine *gandha* (essence like sandalwood or saffron), divine *akṣata* (rice without husk), divine *puṣpa* (flower, represented by saffron coloured rice), divine *naivedya* (small pieces of coconut), divine *dīpa* (camphor/*ghee*/oil lamp), divine *dhūpa* (incense), and divine *phala* (fruit like almond or coconut). Residing here, I too adore, worship, make obeisance, and salute all these Temples *(caityālaya)* and Idols of the Nandīśvara *dvīpa* incessantly. May my miseries be obliterated; may my karmas be destroyed; may I attain the trio of right faith-knowledge-conduct *(bodhi, ratnatraya)*; may I attain a superior state-of-existence

(gati); may I embrace, at the end of my life, a pious and dispassionate-death *(samādhimaraṇa)*; and may I attain the wealth of the qualities appertaining to Lord Jina!

॥ इति श्री नन्दीश्वर भक्ति ॥

* * *

This concludes the

'Bhakti Saṃgraha'

Collection of Devotions

composed by the supremely holy and stainless

***Ācārya* Pūjyapāda**

whose expressions wash away all dirt due to delusion *(moha)*, attachment *(rāga)* and aversion *(dveṣa)*.

O Ascetic Supreme *Ācārya* Pūjyapāda!
With utmost devotion, I apply on my forehead
the sacred water that anoints
the most worshipful duo of your Feet.

At the conclusion of this worthy endeavour
I adore and worship the Lotus-Feet of Lord Jina
for victory *(vijaya)* over the cycle of worldly-existence *(saṃsāra)*.

Ācārya Guṇabhadra's *Ātmānuśāsana:*

विषयविरतिः सङ्गत्यागः कषायविनिग्रहः
शमयमदमास्तत्त्वाभ्यासस्तपश्चरणोद्यमः ।
नियमितमनोवृत्तिर्भक्तिर्जिनेषु दयालुता
भवति कृतिनः संसाराब्धेस्तटे निकटे सति ॥२२४॥

– आचार्य गुणभद्र विरचित **'आत्मानुशासन'**

अर्थ – इन्द्रिय-विषयों से विरक्ति, परिग्रह का त्याग, कषायों का दमन, राग-द्वेष की शान्ति, यम-नियम, इन्द्रियदमन, तत्त्वों का विचार, तपश्चरण में उद्यम, मन की प्रवृत्ति पर नियन्त्रण, जिनेन्द्र भगवान् में भक्ति, और प्राणियों पर दयाभाव; ये सब गुण उसी पुण्यात्मा जीव के होते हैं जिसके कि संसार-रूपी समुद्र का किनारा निकट में आ चुका है।

The following qualities are found in the worthy man who has reached near the shore of the ocean of worldly-existence *(saṃsāra)*: aversion to sense-pleasures, renouncement of possessions, subjugation of passions, tranquility, self-control and vows, oppression of the senses, contemplation on the Reality, engagement in austerities, control over mental transgressions, devotion to Lord Jina, and compassion towards all.

ABRIDGED DEVOTIONS

लघु भक्तियाँ

Obeisance to the Master-Ascetics *(Ācārya)*

आचार्य वन्दना विधि

सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति और आचार्य की लघुभक्ति पढ़कर आचार्य की वन्दना निम्नलिखित प्रकार करें।

Make obeisance to the Master-Ascetics *(Ācārya)* through recitation of these abridged devotions to 1) the Liberated-souls *(Siddha)*, 2) the Scripture *(Śruta)* and 3) the Master-Ascetics *(Ācārya)*.

Abridged Devotion to the Liberated-souls *(Siddha)*

लघुसिद्धभक्तिः

नमोऽस्तु आचार्यवन्दनायां प्रतिष्ठापन सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(णमोकार 9 गुणिया)

Read here the *Ṇamokāra-mantra* nine times.

सम्मत्तणाणदंसण वीरियसुहुमं तहेव अवगहणं ।
अगुरुलहुमव्वावाहं अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ॥१॥

सिद्धों के सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व और अव्याबाध ये आठ गुण होते हैं।

The Liberated-souls *(Siddha)* are endowed with these eight supreme qualities: *samyaktva, jñāna, darśana, vīrya, sūkṣmatva, avagāha-natva, agurulaghutva* and *avyābādha*. (See, p. 41-43, *ante*)

तवसिद्धे णयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमंसामि ॥२॥

तप से सिद्ध, नय से सिद्ध, संयम से सिद्ध, चारित्र से सिद्ध, ज्ञान से सिद्ध और दर्शन से सिद्ध, इन सब सिद्धों को मैं मस्तक झुकाकर नमस्कार करता हूँ।

I worship, by bowing down my head, all the Liberated-souls *(Siddha)* who have attained this supreme status through austerities *(tapa)*, appreciation of multi-faceted viewpoints *(naya)*, self-restraint *(saṃyama)*, conduct *(cāritra),* knowledge *(jñāna)* and perception *(darśana)*.

अञ्चलिका (Submission)

इच्छामि भंते! सिद्धभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। सम्मणाण-सम्मदंसण सम्मचरित्तजुत्ताणं, अट्ठविहकम्म-विप्पमुक्काणं, अट्ठगुण-संपण्णाणं, उड्ढलोयमत्थयम्मि पइट्ठियाणं, तवसिद्धाणं, णयसिद्धाणं, संजमसिद्धाणं, चरित्तसिद्धाणं, अतीताणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं, सया णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

(See, p. 49-50, *ante*)

Abridged Devotion to the Scripture *(Śruta)*

लघुश्रुतभक्तिः

नमोऽस्तु आचार्यवन्दनायां प्रतिष्ठापन श्रुतभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(णमोकार 9 गुणिया)

Read here the *Ṇamokāra-mantra* nine times.

कोटिशतं द्वादश चैव कोट्यो लक्षाण्यशीतित्र्यधिकानि चैव ।
पञ्चाशदष्टौ च सहस्रसंख्यामेतच्छ्रुतं पञ्चपदं नमामि ॥१॥

एक सौ बारह करोड़, तिरासी लाख, अट्ठावन हजार और पाँच पद प्रमाण इस श्रुतज्ञान को मैं नमस्कार करता हूँ।

I bow down to the scriptural-knowledge *(śrutajñāna)* comprising one-hundred-twelve crore, eighty-three lakh, fifty-eight thousand and five – 112,83,58,005 – *pada*.

अरहंतभासियत्थं गणहरदेवेहिं गंथियं सम्मं ।
पणमामि भत्तिजुत्तो सुदणाणमहोवहिं सिरसा ॥२॥

अर्हन्तदेव के द्वारा कथित और गणधरदेव के द्वारा समीचीन ग्रंथ रूप से गुंथित हुआ, ऐसे श्रुतज्ञान रूप महासमुद्र को मैं भक्ति से युक्त हुआ, मस्तक झुकाकर नमस्कार करता हूँ।

I adore, with devotion and by bowing down my head, the great ocean in form of the scriptural-knowledge *(śrutajñāna)* that has been promulgated by Lord Jina (the *Arhanta*) and composed veritably (in form of the Scripture) by the Supreme Apostles *(gaṇadhara deva)*.

अञ्चलिका (Submission)

इच्छामि भंते! सुदभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। अंगोवंगपइण्णए पाहुडय-परियम्म-सुत्त-पढमाणिओग-पुव्वगय-चूलिया चेव सुत्तत्थय-थुइ-धम्मकहाइयं णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं,

जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

(See, p. 101-102, *ante*)

Abridged Devotion to the Master-Ascetics *(Ācārya)*

आचार्यलघुभक्तिः

नमोऽस्तु आचार्यवन्दनायां प्रतिष्ठापनाचार्यभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(णमोकार 9 गुणिया)

Read here the *Ṇamokāra-mantra* nine times.

श्रुतजलधिपारगेभ्यः स्वपरमतविभावनापटुमतिभ्यः ।
सुचरिततपोनिधिभ्यो नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्यः ॥१॥

जो श्रुत रूपी समुद्र के पारगामी हैं, स्वमत और परमत के विभाजन (विचार करने) में निपुण बुद्धि वाले हैं, सम्यक् चारित्र और तप के खजाने हैं और गुणों में महान् हैं, ऐसे गुरुजनों के लिए नमस्कार हो।

I bow down before the Masters *(Guru)* who have overwhelmed the ocean that is the Scripture *(śruta)*, have the ability to discriminate between the own-view (read, right-view) and the view of the others (read, fallacious-view), are treasure-crest of right-conduct and austerities, and with qualities abound.

छत्तीसगुणसमग्गे पञ्चविहाचारकरणसंदरिसे ।
सिस्साणुग्गहकुसले धम्माइरिए सदा वन्दे ॥२॥

जो छत्तीस गुणों से पूर्ण हैं, पाँच प्रकार के आचार का पालन करने वाले हैं, शिष्यों का

अनुग्रह करने में कुशल हैं, ऐसे धर्माचार्यों की मैं सदा वन्दना करता हूँ।

I bow down always before the Masters-of-Dharma *(Dharmācārya)* who are endowed with the thirty-six qualities, follow the fivefold-observances *(pañcācāra)* themselves and get their disciples to follow suit, and are skilled in adopting kindness toward their disciples.

गुरुभक्तिसंजमेण य तरन्ति संसारसायरं घोरं ।
छिण्णंति अट्ठकम्मं जम्मण मरणं ण पावेंति ॥३॥

गुरुभक्ति करने से शिष्य घोर संसार-सागर से तिर जाते हैं, आठ कर्मों को छेद देते हैं, और जन्म-मरण को प्राप्त नहीं होते हैं।

The disciples, through devotion to their Masters *(Guru)*, are able to cross the intractable ocean of worldly-existence *(saṃsāra)*, destroy the eight kinds of karmas, and snap the cycle of births and deaths.

ये नित्यं व्रतमन्त्रहोमनिरता ध्यानाग्निहोत्राकुलाः ।
षट्कर्माभिरतास्तपोधनधनाः साधुक्रियासाधवः ॥
शीलप्रावरणा गुणप्रहरणाश्चन्द्रार्कतेजोऽधिकाः ।
मोक्षद्वारकपाटपाटनभटाः प्रीणन्तु मां साधवः ॥४॥

जो प्रतिदिन व्रत, मन्त्र और होम में निरत हैं, ध्यान रूप अग्नि में हवन हरने वाले हैं, षट् आवश्यक क्रियाओं को साधने वाले हैं, तप रूपी धन की सम्पदा से युक्त हैं, (अठारह हजार) शील रूप जिनके पास ओढ़ने का वस्त्र है, (चौरासी लाख) गुण रूप जिनके पास शस्त्र है, जिनका तेज चन्द्र और सूर्य से भी अधिक है, मुक्ति-महल के कपाट को खोलने में जो भट/योद्धा हैं, ऐसे साधु मुझ पर प्रसन्न हों।

Those who are incessantly engaged in the vows, the mantras and the religious rituals; they make offerings in the fire of meditation

(dhyāna); they are engaged in the six essential-activities; the observance of austerities *(tapa)* is their wealth; their covering-apparel is the (eighteen-thousand) virtues *(śīla)*; their armament is the (eighty-four lakh) qualities; their brightness is greater than that of the moon and the sun; they are warriors capable of opening the gates of the fort-of-liberation; may such Ascetics bless me.

गुरवः पान्तु नो नित्यं ज्ञानदर्शननायकाः ।
चारित्रार्णवगम्भीरा मोक्षमार्गोपदेशकाः ॥५॥

जो ज्ञान और दर्शन के नायक हैं, चारित्र रूप सागर के समान गम्भीर हैं, और मोक्षमार्ग के उपदेशक हैं, ऐसे गुरु आचार्य हमारी नित्य रक्षा करें।

They are are the masters of knowledge *(jñāna)* and perception *(darśana)*; their conduct *(cāritra)* is tranquil like the ocean; and they are the promulgators of the path-to-liberation; may such Masters *(Guru)* protect me continuously.

अब्भलिका (Submission)

इच्छामि भंते! आयरियभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। सम्मणाण सम्मदंसण सम्मचरित्तजुत्ताणं पंचविहाचाराणं आयरियाणं आयारादि सुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं तिरयणगुणपालणरयाणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

(See, p. 135-136, *ante*)

* * *

Abridged Devotion to Supreme Meditation *(samādhi)*

लघुसमाधिभक्तिः

अथेष्ट-प्रार्थना

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग को नमस्कार हो।

My adoration to the four constituents of the scriptural-knowledge *(śrutajñāna)* – the *prathmānuyoga,* the *karaṇānuyoga,* the *caraṇānuyoga* and the *dravyānuyoga*.

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगति सर्वदार्यैः,
सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे,
सम्पद्यन्तां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥१॥

(See, p. 174, *ante*)

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र! तावद्यावन्निर्वाण सम्प्राप्तिः ॥२॥

(See, p. 177-178, *ante*)

अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मए भणियं ।
तं खमहु णाणदेव य मज्झवि दुक्खक्खयं कुणउ ॥३॥

हे कैवल्यज्योतिमयी ज्ञानदेव! मेरे द्वारा जो भी अक्षर-पद-अर्थ रहित और मात्रा रहित कहा गया, उसको क्षमा कीजिये। और मेरे दुःखों का क्षय कीजिये।

O Lord-of-Knowledge! Forgive me for my deficiencies in speech

pertaining to the letters, the phrases, the meanings, and the vowel sounds. May my miseries be destroyed!

अञ्चलिका (Submission)

इच्छामि भंते! समाहिभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। रयणत्तय-सरूवपरमप्पज्झाणलक्खणं समाहिभत्तीये सया णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

(See, p. 185-186, *ante*)

* * *

REFERENCES AND GRATEFUL ACKNOWLEDGMENT

संदर्भ सूची एवं कृतज्ञता ज्ञापन

All that is contained in this book has been excerpted, adapted, or translated into English from a number of authentic Jaina texts. Due care has been taken to conserve the essence of the holy Scripture composed by the ancient preceptors *(pūrvācārya)*.

Contribution of the following publications in preparation of the present volume is gratefully acknowledged:

1. संपादन - पन्नालाल सोनी शास्त्री (विक्रम संवत् 1993), **क्रिया-कलापः,** प्रकाशन- पन्नालाल सोनी शास्त्री, प्रथम संस्करण.
2. संपादन - पं. विद्याकुमार सेठी, प्रेरणा - श्री 108 विवेकसागर महाराज (1980), **धर्मध्यान प्रकाश,** श्री दिगम्बर जैन समाज, कुचामन सिटी (राजस्थान), द्वितीय संस्करण.
3. अनुवाद - आर्यिकाश्री स्याद्वादवती माताजी (2015), **विमल भक्ति - विमल ज्ञान प्रबोधिनी टीका,** भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद्, चतुर्थ संस्करण.
4. संस्कृत-टीका - आचार्य श्री प्रभाचन्द्र एवं मुनि श्री प्रणम्यसागर, अन्वयार्थ एवं टीका - मुनि श्री प्रणम्यसागर (2018), **आचार्य श्री कुन्दकुन्द एवं आचार्य श्री पूज्यपाददेव विरचित भक्ति संग्रह,** आचार्य अकलंकदेव जैन विद्या शोधालय समिति, द्वितीय संस्करण.
5. संकलन (2017), **पूज्यपाद भारती,** जैन विद्यापीठ, सागर (मध्यप्रदेश), प्रथम संस्करण.
6. डॉ. पन्नालाल साहित्याचार्य (1992), **आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी विरचित कुन्दकुन्द भारती,** श्री 1008 मुनिसुव्रतनाथ तीर्थंकर समवशरण, गुड़गाँव (हरियाणा), द्वितीय संस्करण.
7. सिद्धान्ताचार्य पं. फूलचन्द्र शास्त्री (2010), **आचार्य पूज्यपाद विरचित सर्वार्थसिद्धि,** भारतीय ज्ञानपीठ, 18 इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नई दिल्ली-110003, सोलहवाँ संस्करण.

8. डॉ. पन्नालाल जैन साहित्याचार्य (2015), **आचार्य जिनसेन विरचित हरिवंशपुराण,** भारतीय ज्ञानपीठ, 18 इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नई दिल्ली–110003, पन्द्रहवाँ संस्करण.

9. डॉ. पन्नालाल जैन साहित्याचार्य (2015), **आचार्य जिनसेन विरचित आदिपुराण,** भारतीय ज्ञानपीठ, 18 इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नई दिल्ली–110003, सोलहवाँ संस्करण.

10. पं. पन्नालाल वाकलीवाल (1913), **श्रीशुभचन्द्रविरचितः ज्ञानार्णवः**, श्रीपरमश्रुत प्रभावक मण्डल, बम्बई–2, द्वितीयावृत्ति.

11. Jain, Dashrath & Jain, P.C. (2012) *"Gems of Jaina Wisdom (Vol. 9) Dasha-Bhakti – Āchārya Devanaṇdī alias Pūjyapāda",* Jain Granthāgār, Delhi-110006, First Edition.

12. Jain, Vijay K. (2015), "*Ācārya Samantabhadra's Svayambhūstotra – Adoration of The Twenty-four Tīrthaṅkara",* Vikalp Printers, Dehradun.

13. Jain, Vijay K. (2019), "*Ācārya Kundakunda's Niyamasāra – The Essence of Soul-adoration",* Vikalp Printers, Dehradun.

14. Jain, Vijay K. (2018), "*Ācārya Kundakunda's Pravacanasāra – Essence of the Doctrine",* Vikalp Printers, Dehradun.

15. Jain, Vijay K. (2018), "*Ācārya Umāsvamī's Tattvārthasūtra – With Explanation in English from Ācārya Pūjyapāda's Sarvārtha-siddhi",* Vikalp Printers, Dehradun.

16. Jain, Vijay K. (2019), "*Ācārya Guṇabhadra's Ātmānuśāsana – Precept on the Soul",* Vikalp Printers, Dehradun.

17. Jain, Vijay K. (2020), "*Ācārya Kundakunda's Pañcāstikāya-saṃgraha – With Authentic Explanatory Notes in English",* Vikalp Printers, Dehradun.

* * *

GUIDE TO TRANSLITERATION

Devanāgarī	*IAST**	*Devanāgarī*	*IAST*	*Devanāgarī*	*IAST*
अ	*a*	घ	*gha*	प	*pa*
आ	*ā*	ङ	*ṅa*	फ	*pha*
इ	*i*	च	*ca*	ब	*ba*
ई	*ī*	छ	*cha*	भ	*bha*
उ	*u*	ज	*ja*	म	*ma*
ऊ	*ū*	झ	*jha*	य	*ya*
ए	*e*	ञ	*ña*	र	*ra*
ऐ	*ai*	ट	*ṭa*	ल	*la*
ओ	*o*	ठ	*ṭha*	व	*va*
औ	*au*	ड	*ḍa*	श	*śa*
ऋ	*ṛ*	ढ	*ḍha*	ष	*ṣa*
ऌ	*ḷ*	ण	*ṇa*	स	*sa*
अं	*ṃ*	त	*ta*	ह	*ha*
अः	*ḥ*	थ	*tha*	क्ष	*kṣa*
क	*ka*	द	*da*	त्र	*tra*
ख	*kha*	ध	*dha*	ज्ञ	*jña*
ग	*ga*	न	*na*	श्र	*śra*

**IAST: International Alphabet of Sanskrit Transliteration*

* * *

Sacred Jaina Texts from Vikalp Printers

***Āchārya* Kundkund's**
Samayasāra
WITH HINDI AND ENGLISH TRANSLATION

श्रीमदाचार्य कुन्दकुन्द विरचित
समयसार

• Prakrit • Hindi • English

Foreword:
Āchārya* 108 Vidyanand *Muni

English Translation, and Edited by:
Vijay K. Jain

- ***Published 2012; Hard Bound***
- ***Pages: xvi + 208***
- ***Size: 16 × 22.5 cm***

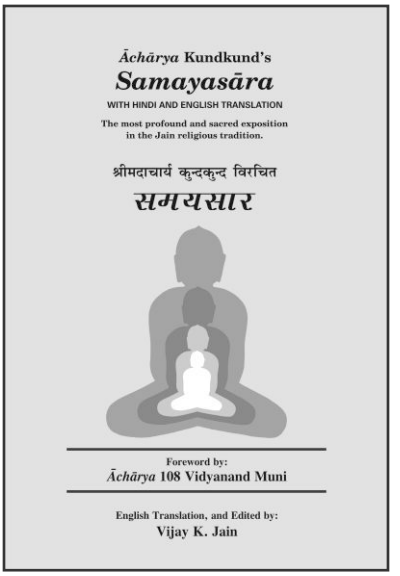

ISBN 81-903639-3-X **Rs. 350/-**

***Shri* Amritchandra Suri's**
Puruṣārthasiddhyupāya
Realization of the Pure Self
WITH HINDI AND ENGLISH TRANSLATION

श्री अमृतचन्द्रसूरी विरचित
पुरुषार्थसिद्ध्युपाय

• Sanskrit • Hindi • English

Foreword:
Āchārya* 108 Vidyanand *Muni

English Translation, and Edited by:
Vijay K. Jain

- ***Published 2012; Hard Bound***
- ***Pages: xvi + 191***
- ***Size: 16 × 22.5 cm***

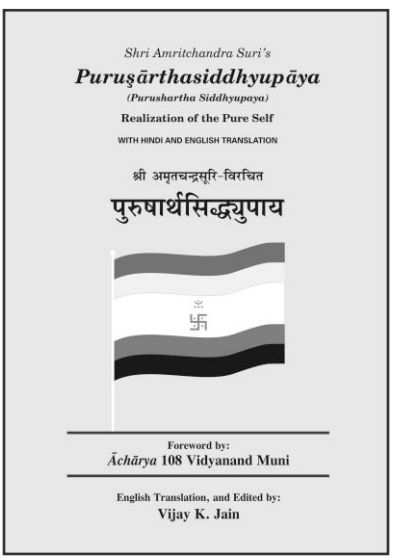

ISBN 81-903639-4-8 **Rs. 350/-**

***Ācārya* Nemichandra's**

Dravyasaṃgraha

With Authentic Explanatory Notes

आचार्य नेमिचन्द्र विरचित

द्रव्यसंग्रह

• Prakrit • Hindi • English

Foreword:

Ācārya* 108 Vidyanand *Muni

English Translation, and Edited by:

Vijay K. Jain

- ***Published 2013; Hard Bound***
- ***Pages: xvi + 216***
- ***Size: 16 × 22.5 cm***

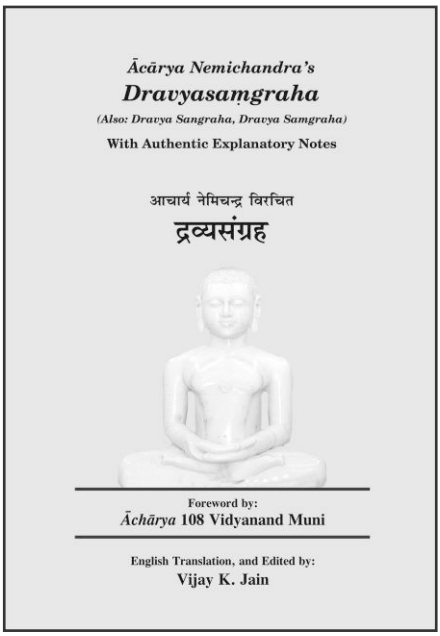

ISBN 81-903639-5-6 **Rs. 450/-**

Ācārya Pūjyapāda's

Iṣṭopadeśa –

The Golden Discourse

आचार्य पूज्यपाद विरचित

इष्टोपदेश

• Sanskrit • English

Foreword:

Ācārya* 108 Vidyanand *Muni

Translation and Commentary:

Vijay K. Jain

- ***Published 2014; Hard Bound***
- ***Pages: xvi + 152***
- ***Size: 16 × 22.5 cm***

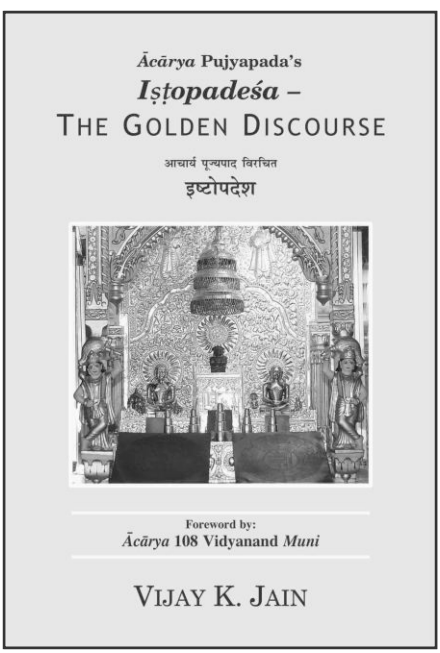

ISBN 81-903639-6-4 **Rs. 450/-**

Ācārya Samantabhadra's

Svayambhūstotra –
Adoration of
The Twenty-four *Tīrthaṅkara*

आचार्य समन्तभद्र विरचित

स्वयम्भूस्तोत्र

• Sanskrit • Hindi • English

Divine Blessings:
Ācārya* 108 Vidyanand *Muni

Translation and Commentary:
Vijay K. Jain

- ***Published 2015; Hard Bound***
- ***Pages: xxiv + 220***
- ***Size: 16 × 22.5 cm***

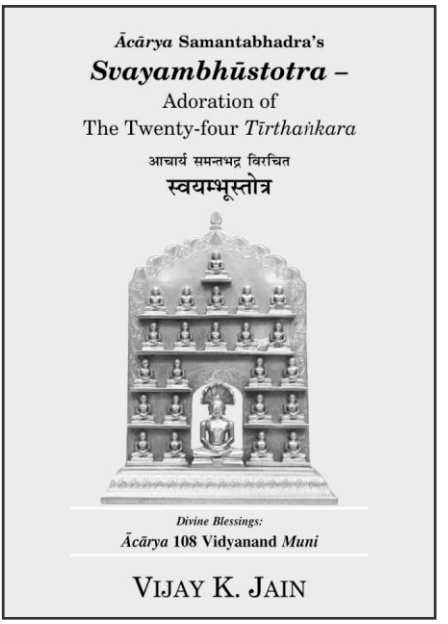

ISBN 81-903639-7-2 **Rs. 500/-**

Ācārya Samantabhadra's

Āptamīmāṁsā
(Devāgamastotra)
Deep Reflection On The Omniscient Lord

आचार्य समन्तभद्र विरचित

आप्तमीमांसा (देवागमस्तोत्र)

• Sanskrit • Hindi • English

Foreword:
Ācārya* 108 Vidyānanda *Muni

Translation and Commentary:
Vijay K. Jain

- ***Published 2016; Hard Bound***
- ***Pages: xxiv + 200***
- ***Size: 16 × 22.5 cm***

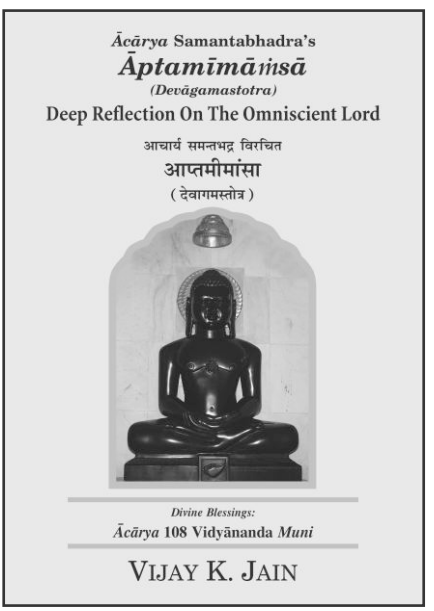

ISBN 81-903639-8-0 **Rs. 500/-**

Ācārya Samantabhadra's

Ratnakaraṇḍaka-śrāvakācāra –

The Jewel-casket of Householder's Conduct

आचार्य समन्तभद्र विरचित रत्नकरण्डकश्रावकाचार

• Sanskrit • Hindi • English

Divine Blessings:
Ācārya* 108 Vidyānanda *Muni

Translation and Commentary:
Vijay K. Jain

- ***Published 2016; Hard Bound***
- ***Pages: xxiv + 264***
- ***Size: 16 × 22.5 cm***

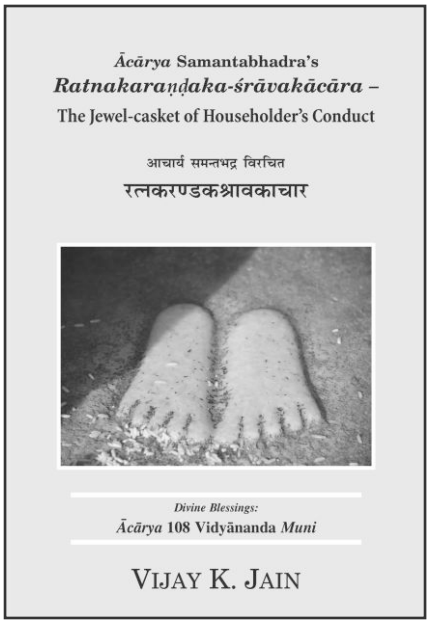

ISBN 81-903639-9-9 **Rs. 500/-**

Ācārya Pūjyapāda's

Samādhitaṅtram –

Supreme Meditation

आचार्य पूज्यपाद विरचित समाधितंत्रम्

• Sanskrit • Hindi • English

Divine Blessings:
Ācārya* 108 Vidyānanda *Muni

Translation and Commentary:
Vijay K. Jain

- ***Published 2017; Hard Bound***
- ***Pages: xlii + 202***
- ***Size: 16 × 22.5 cm***

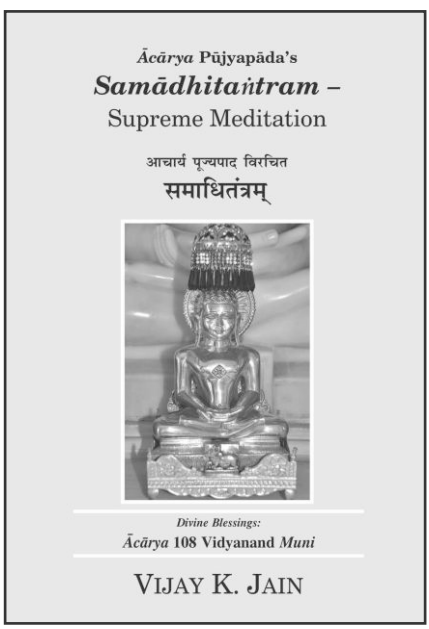

ISBN 978-81-932726-0-2 **Rs. 600/-**

Ācārya Kundakunda's

Pravacanasāra –
Essence of the Doctrine

आचार्य कुन्दकुन्द विरचित
प्रवचनसार

• Prakrit • Sanskrit • Hindi • English

Divine Blessings:
Ācārya* 108 Vidyānanda *Muni

Translation and Commentary:
Vijay K. Jain

- ***Published 2018; Hard Bound***
- ***Pages: lxi + 345***
- ***Size: 16 × 22.5 cm***

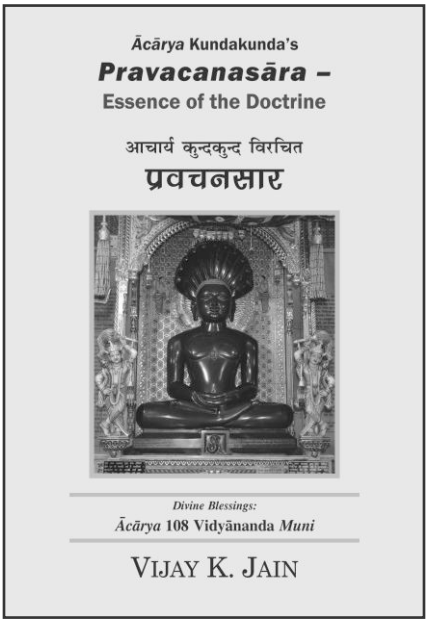

ISBN 978-81-932726-1-9 **Rs. 600/-**

Ācārya Umāsvāmī's
Tattvārthasūtra
– With Explanation in English from *Ācārya* Pūjyapāda's *Sarvārthasiddhi*

आचार्य उमास्वामी विरचित तत्त्वार्थसूत्र
(अंग्रेजी व्याख्या स्रोत - आचार्य पूज्यपाद विरचित सर्वार्थसिद्धि)

• Sanskrit • Hindi • English

Divine Blessings:
Ācārya* 108 Vidyānanda *Muni

Translation and Commentary:
Vijay K. Jain

- ***Published 2018; Hard Bound***
- ***Pages: xxx + 466***
- ***Size: 16 × 23 cm***

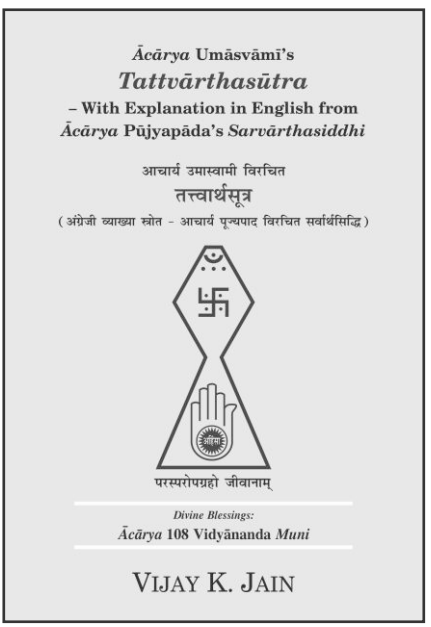

ISBN 978-81-932726-2-6 **Rs. 750/-**

***Ācārya* Kundakunda's**
Niyamasāra
– The Essence of Soul-adoration
(With Authentic Explanatory Notes)

आचार्य कुन्दकुन्द विरचित
नियमसार (प्रामाणिक व्याख्या सहित)

• Prakrit • Hindi • English

Divine Blessings:
Ācārya* 108 Vidyānanda *Muni

Translation and Commentary:
Vijay K. Jain

- ***Published 2019; Hard Bound***
- ***Pages: lxiv + 341***
- ***Size: 17 × 24 cm***

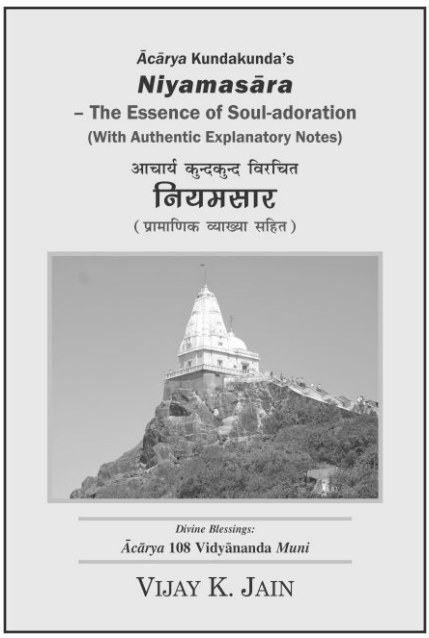

ISBN 978-81-932726-3-3 **Rs. 600/-**

***Ācārya* Guṇabhadra's**
Ātmānuśāsana
– Precept on the Soul

आचार्य गुणभद्र विरचित
आत्मानुशासन

• Sanskrit • Hindi • English

Divine Blessings:
Ācārya* 108 Vidyānanda *Muni

Translation and Commentary:
Vijay K. Jain

- ***Published 2019; Hard Bound***
- ***Pages: xlvi + 240***
- ***Size: 17 × 24 cm***

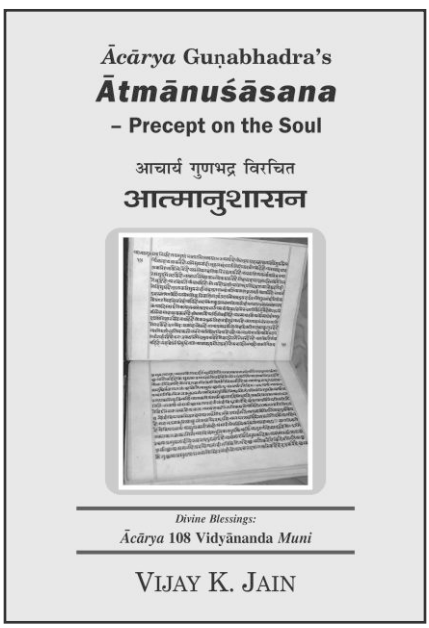

ISBN 9788193272640 **Rs. 600/-**

Ācārya Kundakunda's

Pañcāstikāya-saṃgraha

– With Authentic Explanatory Notes in English

(The Jaina Metaphysics)

आचार्य कुन्दकुन्द विरचित

पंचास्तिकाय-संग्रह

- प्रामाणिक अंग्रेजी व्याख्या सहित

• Prakrit • Sanskrit • Hindi • English

Divine Blessings:

Ācārya* Viśuddhasāgara *Muni

Translation and Commentary:

Vijay K. Jain

- ***Published 2020; Hard Bound***
- ***Pages: lxx + 358***
- ***Size: 17 × 24 cm***

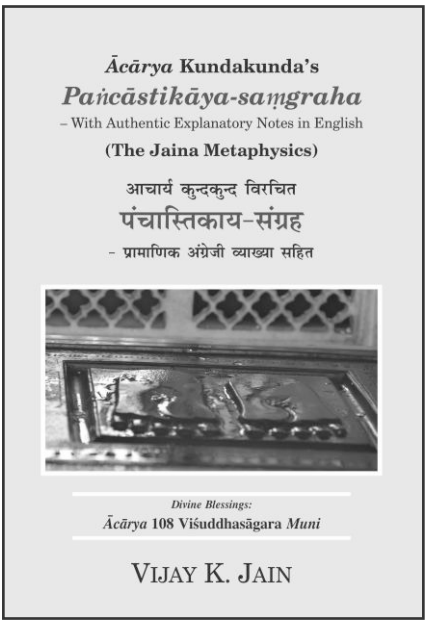

ISBN 9788193272657 **Rs. 750/-**

आचार्य समन्तभद्र विरचित

स्तुतिविद्या

(जिनशतक, जिनस्तुतिशतं)

• संस्कृत • हिन्दी

दिव्याशीष

आचार्य विशुद्धसागर मुनिराज

सम्पादक

विजय कुमार जैन

- ***Published 2020; Hard Bound***
- ***Pages: l + 222***
- ***Size: 17 × 24 cm***

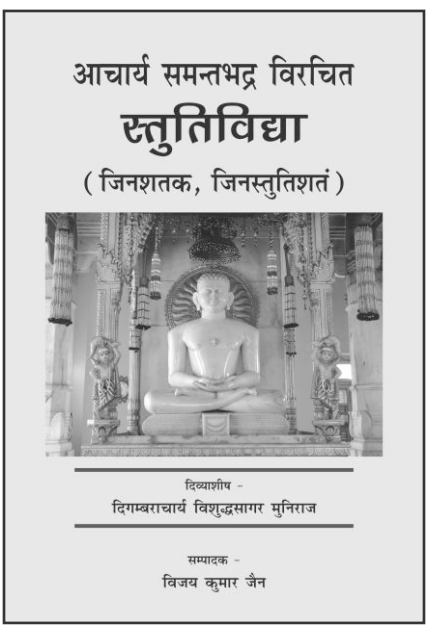

ISBN 9788193272671 **Rs. 500/-**

आचार्य समन्तभद्र विरचित

युक्त्यनुशासन

अन्वयार्थ एवं व्याख्या सहित

• संस्कृत • हिन्दी

दिव्याशीष

आचार्य विशुद्धसागर मुनिराज

सम्पादक

विजय कुमार जैन

- ***Published 2020; Hard Bound***
- ***Pages: xl + 200 = 240***
- ***Size: 17 × 24 cm***

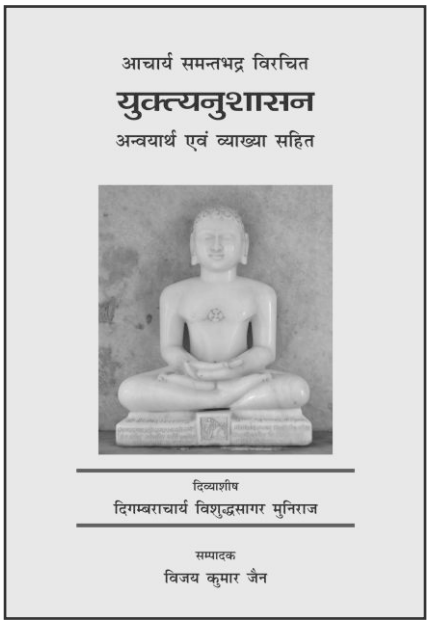

ISBN 9788193272664 **Rs. 500/-**

दिगम्बराचार्य विशुद्धसागर विरचित

सत्यार्थ-बोध

Ācārya Viśuddhasāgara's

Satyārtha-bodha – Know The Truth

• हिन्दी • English

सम्पादक- श्रमण सुव्रतसागर मुनि

***English Rendering* –**

Vijay K. Jain

- ***Published: 2021; Hard Bound***
- ***Pages: xxi + 369 p. = 390***
- ***Size: 21 × 29 cm***

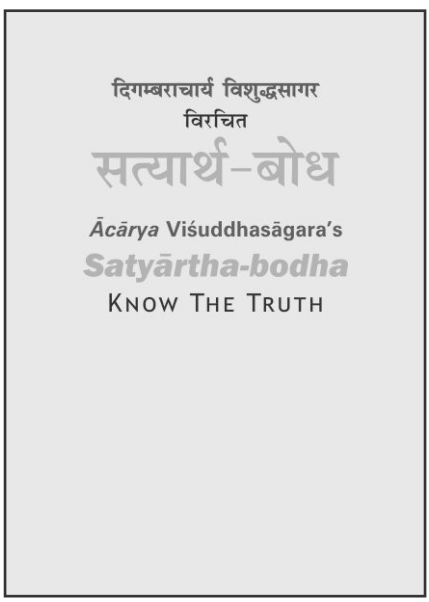

ISBN 9788193272688 **Rs. 600/-**

Ācārya Māṇikyanandi's
Parīkṣāmukha Sūtra
– Essence of the Jaina *Nyāya*

आचार्य माणिक्यनन्दि विरचित
परीक्षामुख सूत्र

• Sanskrit • Hindi • English

Divine Blessings:
Ācārya* 108 Viśuddhasāgara *Muni

By:
Vijay K. Jain

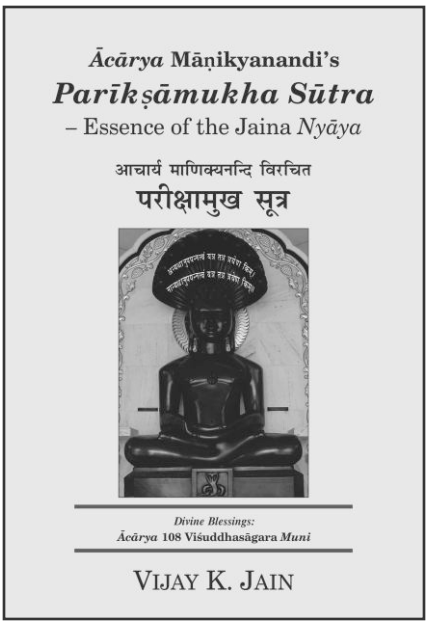

- ***Published: 2021***
- ***Hard Bound***
- ***Pages: lviii + 262 = 320***
- ***Size: 17 × 24 cm***

ISBN 9788193272695 **Rs. 800/-**

The science-of-thought *(Nyāya)* has always been an integral part of the four constituents *(anuyoga)* – *prathamānuyoga, karuṇānuyoga, caraṇānuyoga,* and *dravyānuyoga* – of the Jaina Scripture. Through *Parīkṣāmukha Sūtra*, *Ācārya* Māṇikyanandi (circa 7th-8th century A.D.) churned the nectar of the science-of-thought *(Nyāya)* from the ocean of the words of the master-composers like *Ācārya* Samantabhadra and *Bhaṭṭa* Akalaṅka Deva.

The valid-knowledge *(pramāṇa)* ascertains the true nature of objects while the fallacious-knowledge *(pramāṇābhāsa)* does the opposite. *Parīkṣāmukha Sūtra* characterizes, as per the earlier authoritative expositions and in brief, both these *(pramāṇa* and *pramāṇābhāsa)* for the benefit of the uninitiated learners.

It is an essential canonical text that every knowledge-seeking householder and ascetic must try to master.

Ācārya Kundakunda's

Bārasa Aṇuvekkhā

– The Twelve Contemplations

(With Authentic Explanatory Notes)

आचार्य कुन्दकुन्द विरचित

बारस अणुवेक्खा

(द्वादश अनुप्रेक्षा, बारह भावना)

(प्रामाणिक व्याख्या सहित)

• Prakrit • Hindi • English

Divine Blessings:

Ācārya* 108 Viśuddhasāgara *Muni

Editor and Translator:

Vijay K. Jain

- ***Published: 2021***
- ***Hard Bound***
- ***Pages: xxx + 234 = 264***
- ***Size: 17 × 24 cm***

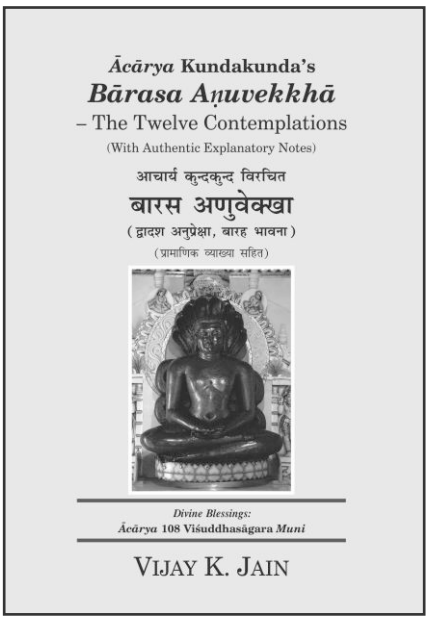

ISBN 9789355661340 **Rs. 800/-**

ORDERING INSTRUCTIONS

Inland Buyers:

WhatsApp: 9412057845 (Mrs. Sonal Jain Chhabra)

8923114988 (Ms. Malika Jain)

International Buyers:

WhatsApp: +91 8923114988 (Payment Through PayPal)

Email: flytomalika@gmail.com

NOTES

NOTES

NOTES

NOTES

NOTES

NOTES

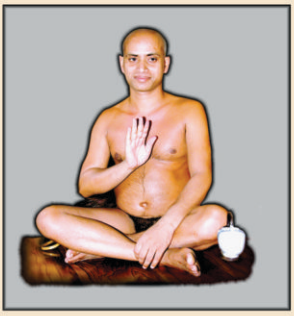

...सम्प्रति प्राकृत भक्तियाँ आचार्यप्रवर श्री कुन्दकुन्द स्वामी कृत प्राप्त हैं तथा संस्कृत भाषा में आचार्य श्री पूज्यपाद स्वामी कृत दस-भक्तियाँ सम्पूर्ण मुमुक्षु जीवों के लिए कण्ठाहार बनी हुई हैं।

संस्कृत, प्राकृत तथा हिन्दी भाषी भव्य उपासक तो भक्तियों का आनन्द-पान करते ही हैं, परन्तु आँग्ल-भाषी भव्यों के प्रति अति कारुण्य-भाव से जिन-वागीश्वरी के परम-उपासक, श्रुत-आराधक, निसंगता के अभ्यासी, विद्वान् श्री विजय कुमार जैन, देहरादून, ने सम्पूर्ण संस्कृत भक्तियों का अंग्रेजी भाषा में अनुवाद कर श्रुत-कोश की वृद्धि की है। उनके इस श्रेष्ठ पुरुषार्थ-साध्य कार्य के लिए सदा शुभाशीष...।

- दिगम्बराचार्य विशुद्धसागर मुनि

...*Ācāryaśrī* Kundakunda composed *'Daśabhakti'* in Prakrit. *Ācāryaśrī* Pūjyapāda Devanandī then enriched us with these *bhaktis* in chaste and melodious Sanskrit hymns. *Ācāryaśrī* Vasunandī, perhaps, compiled the *'Kriyākalāpa'* along with his Sanskrit commentary, based on the above mentioned works. This edition is next in this evolution of *bhaktis* as it is brought out in flawless English by the renowned scholar of Jainology, Shri Vijay K. Jain. He has thoroughly enjoyed this work and reaped enormous peace and prosperity of purity. I am sure, with such deep devotion, the readers would do so with immense joy and peace.

– Dr. Chakravarthi Nainar Devakumar

विकल्प
Vikalp Printers

ISBN 978-93-5627-523-2